पराग प्रकाशन, दिल्ली-३२

अवसर

अवसर

नरेन्द्र कोहली

मूल्य सोलह रुपये/ दूसरा सस्करण १६७८/ प्रकाशक पराग प्रकाशन ३/११४ कण गली विश्वासनगर शाहदरा दिल्ली ११००३२/मुद्रक भारती प्रिंटर्स दिल्ली ११ ०३२

AVSAR (*Novel*) Narendra Kohli Rs 16 00

लखनऊ के तीन महानागरिकों—
अमृतलाल नागर
यशपाल
तथा
भगवतीचरण वर्मा
को सादर

अवसर

१

मम्राट की वद्ध आखो म सप का-सा फूत्कार था।

हू।"
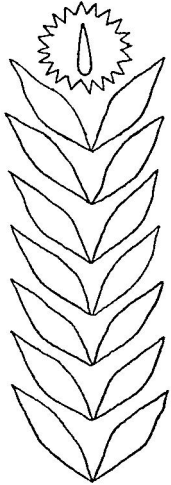
बस एक 'हू'। उमसे अधिक दशरथ कुछ नही कह सके।

एसा क्रोध उन्ह कभी-कभी ही आता था। किंतु आज! क्रोध कोई सीमा ही नहीं मान रहा था। आखें जल रही थी नथुने फडक रहे थे, और उस सन्नाटे मे जसे तज सासो की साय-साय भी सुनाई पड रही थी।

नायक भानुमित्र दोना हाथ बाधे सिर झुकाए स्तब्ध खडा था। सम्राट की अप्रसन्नता की आशका उस थी। वह बहुत समय तक सम्राट के निकट रहा था और उनके स्वभाव को जानता था। किंतु उनका ऐसा प्रकोप उमन कभी नही देखा था। सम्राट का यह रूप अपूव था। वैसे वह यह भी समझ नही पा रहा था कि सम्राट की इस असाधारण स्थिति का कारण क्या था। उसे विलब अवश्य हुआ था, किंतु उससे ऐसी कोई हानि नही हुई थी कि सम्राट इस प्रकार भभक उठें। वह अयोध्या के उत्तर म स्थित सम्राट की निजी अश्वशाला म मे कुछ श्वेत अश्व लेने गया था, जिनकी आवश्यकता अगले सप्ताह होने वाले पशु-मेले के अवसर पर थी। यदि अश्व प्रात राजप्रासाद म पहुच जाते, तो उससे कुछ विशेष नही हो जाता, और सध्या समय तक रुक जाने से कोई हानि नही हो गयी किंतु सम्राट

वह अपने अपराध की गभीरता का निणय नहीं कर पा रहा था।

सम्राट के कुपित रूप ने उसके मस्तिष्क को जड कर दिया था। सम्राट के मुख से किसी भी क्षण उसके लिए कोई कठोर दड उच्चरित हो सकता था उसका इतना साहस भी नही हो पा रहा था कि वह भूमि पर दडवत लेटकर सम्राट से क्षमा-याचना कर

सहसा सम्राट जैसे आप मे आए। उन्होने स्थिर दष्टि से उसे देखा और बोले जाओ। विश्राम करो।'

भानुमित्र की जान म जान आयी। उसने अधिक-से-अधिक झुककर नम्रतापूवक प्रणाम किया और बाहर चला गया।

भानुमित्र के जाते ही दशरथ का क्रोध फिर अनियत्रित हो उठा मस्तिष्क तपने लगा आभास तो उन्ह पहल भी था, किंतु इस सीमा तक

क्या अथ है इसका ?

दशरथ ने अश्व मगवाए थे। अश्व रात म ही अयोध्या के नगरद्वार के बाहर विश्रामालय म पहुच गए थे, किंतु प्रात उन्हें अयोध्या म घुसने नहीं दिया गया। नगरद्वार प्रत्येक आगतुक के लिए बद था—क्योकि महारानी ककेयी के भाई केकय के युवराज युधाजित अपने भाजे राजकुमार भरत और शत्रुघ्न को लेकर अयोध्या से केकय की राजधानी राजगृह जान वाले थे। नगरद्वार बद पथ बद हाट बद—जब तक युधाजित नगर द्वार पार न कर लें तब तक किसी का कोई काम नही हो सकता

किसी का भी नही।

दशरथ का काम भी नही।

तब तक सम्राट के आदेश स घोडे लेकर आने वाला नायक भी बाहर हो रुका रहेगा।

सम्राट का काम रुका रहेगा क्याकि युधाजित उस पथ स होकर नगरद्वार से बाहर जान वाला था। अपनी ही राजधानी म सम्राट की यह अवमानना!

किसने किया यह साहस ? नगर रक्षक सनिक टुकडियो ने। कस कर सके वे साहस ? इसलिए कि वे भरत के अधीनस्थ सनिक हैं। वे सनिक जानते हैं कि भरत राजकुमार होते हुए भी सम्राट से अधिक महत्त्वपूण

है क्योंकि वह कैकेयी का पुत्र है। युधाजित सम्राट से अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वह कैकेयी का भाई है

कैकयी !

कसा बाधा है कैकेयी ने दशरथ को !

सम्राट् की आखें कहीं अतीत म देख रही थी

कोसल की सेनाए राजगृह में जा घुसी थी। राजप्रासादो का घेर लिया गया था, और कैकय के राज-परिवार का प्रत्यक सदस्य बाधकर दशरथ के सम्मुख लाया गया था। केकय का राज-परिवार दुबल था, इसलिए दशरथ न उन्ह बाधकर अपने सम्मुख मगवाया था—पर कैकयी को देखत ही दशरथ दुबल पड गए थे, और तब कैकेयी ने उन्ह बाध लिया था। दशरथ कैकेयी की प्रसन्नता पाने के लिए कुछ भी देने का तैयार थे कुछ भी कर गुजरने को—और तब दशरथ को केकय-नरश ने बाधा था 'कैकयी का पुत्र ही कोसल का युवराज होगा।' दशरथ बधे थे प्रसन्नतापूवक। पर तब दशरथ ने इस प्रश्न पर विचार नहीं किया था।

केकय-नरश अपनी पराजय को कभी न भूल होगे। युधाजित का अपनी किशोरावस्था की एक एक बात याद हागी। उसने उन बातो को सायास याद रखा होगा। अपने मन म दशरथ के विरुद्ध विष को जीवित रखने उसे पोषित और विकसित करने का प्रत्येक प्रयत्न किया होगा। उसने वर्षों स्वय को उसी ताप म तपाया हागा, ताकि अवसर आते ही वह दशरथ को अपमानित करे।

आज अयोध्या म कैकेयी महारानी है। भरत युवराज न सही, युवराज प्राय है। सेना की अनक महत्त्वपूण टुकडिया उसके अधीन हैं। कैकयी का मवधी पुष्कल सचिव है। केकय का राजदूत अयोध्या म विशेष आदर सम्मान तथा स्थिति का स्वामी है। उसके पास सम्राट की अनुमति स अग रक्षकों की विशाल सेना है—कितनी शक्तिशालिनी है कैकेयी। उसकी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष-छाया मात्र पाने वाला सैनिक भी दशरथ के नायक को रात भर अयोध्या के बाहर रोके रख सकता है।

ऐसा नहीं है कि दशरथ न आज पहली बार कैकेयी की शक्ति का अनुभव किया हो—उसका आभास उन्ह विवाह के पश्चात् अयोध्या लौटते

ही मिलने लगा था। और वह शक्ति क्रमश बढ़ी ही है कम नही हुई। अनेक बार दशरथ का अपने सम्मुख ही नहीं दूसरो के सम्मुख भी अपमानित होना पडा है किंतु उन्होने आज तक कैकेयी की शक्ति का अपनी पत्नी की शक्ति मानने का भ्रम पाला है—पर आज वे देख रहे हैं कवेयी की शक्ति युधाजित की बहन की शक्ति है। भरत की शक्ति दशरथ के पुत्र की नही, युधाजित के भाजे की शक्ति है—और युधाजित को अयोध्या म इतना शक्तिशाली नही होना चाहिए

युधाजित से उनका सबध, कैकेयी से सबध होने स पहले का है। वह सबध राजनीतिक सबध है—विजयी के लौह शृखलाओ और पराजित की कलाइयों का सबध। बधे हुए हाथो और झुके हुए सिर वाले अपमानित किशोर युधाजित को दशरथ कैसे भूल गए? वे कैसे भूल गए कि नये सबधो के बन जाने स पुराने सबध मिट नही जाते! कैकेयी से दाम्पत्य का नया सबध हो जाने से, युधाजित से पुराना सबध कैसे समाप्त हो सकता है! दशरथ भूल भी जाए पर युधाजित कैसे भूलेगा?

दशरथ को पहले देखना चाहिए था कि अयोध्या म उनकी आखो के सम्मुख, सत्ता हथियाने का कैसा खेल खेला जा रहा है। वे कैकेयी के सौन्दर्य और यौवन-सपदा की ओर लोलुप दृष्टि स ताकते रहे। लोलुप दृष्टि अपना विवेक खो बैठती है। वे कैसे देखते कि कैकेयी को प्राप्त करने की प्रक्रिया म उनके हाथो म से क्या खिसकता जा रहा है

और अभी तो दशरथ सम्राट हैं—चाहे कटे हुए हाथो वाले। पर कैकेयी के पिता को दिए गए वचन के अनुसार यदि उन्होने आधिकारिक रूप स सत्ता भरत को सौंप दी, तो? भरत की शक्ति का अर्थ है, युधाजित की शक्ति। जब शक्ति दशरथ के हाथ म थी और युधाजित बाधकर उनके सामने लाया गया था, तो दशरथ ने उसके कठ पर खडग रखकर, उससे अभद्र व्यवहार किया था। यदि उनकी इच्छा हुई होती तो वे खडग दबा कर युधाजित के कठ म छिद्र भी कर सकते थे। यदि भरत के हाथो म सत्ता आने पर, युधाजित भी उतना ही शक्तिशाली

दशरथ का कठ सूख गया। कठ म स्थान-स्थान पर खडग की नोकें उग आयी थी। कठ की नलिया जैसे जल रही थी, और रक्त झरने सा फट

कर बाहर आने को था

दशरथ के हाथ-पैर ठडे हो गए। वर्ण पीला पड गया। उन्होंने माथे पर हाथ फेरा—माथा ठडा और पसीने से गीला था। उन्हें लगा कि वे एक भयकर स्वप्न देख रहे हैं—वे पहाड की एक ऊची चोटी से नीचे फेंक दिए गए हैं। वे बडी तीव्र गति से सहसा हाथ गहरी खड्ड में गिरते जा रहे हैं। व देख रहे हैं कि नीचे गिरते ही उनकी एक एक हड्डी चूर हो जाएगी। पर वे कुछ नहीं कर सकते। उनका शरीर जड हो चुका है। वे हाथ-पैर हिलाना चाहते हैं पर हिला नही पाते। वे चीखना चाहते हैं किंतु उनके कठ से ध्वनि नहीं निकली। सारा शरीर जड हो गया है बस आखें खुली हैं और देख रही हैं। मस्तिष्क सक्रिय है और अनुभव कर रहा है

बडी देर तक दशरथ उसी स्तभित दशा म बठे रहे, और सहसा वे सजग हुए—निश्चित रूप से य बहुत घबराए हुए ही नहीं, डरे हुए भी थे। मन बार-बार कह रहा था कुछ कर दशरथ! यही अवसर है नही तो बहुत देर हो जाएगी।' पर उनका मन उस छोटे बालक के समान था जो हाथ म पूरी इट लिये हिंस्र भेडिए के सम्मुख खडा सोच रहा था—ईंट न मारू तो यह मुझे खाने म कितनी देर लगाएगा और मारू तो यह मर जाएगा या कुपित होकर मुझे और भी जल्दी खा जाएगा? भेडिए की आखो म क्रोध था उसकी लाल-लाल हिंस्र तथा लोलुप जीभ मुह से बाहर लटक रही थी, बडे बडे तीखे श्वेत दातो की चमक बढ़ती जा रही थी

भेडिया मुझे खाएगा अवश्य, मैं इट मारू या न मारू

दशरथ की चिंता बढती जा रही थी

इट मारू?

न मारू?

सम्राट् को राज-सभा मे आने मे विलब हुआ था।

विलब से आना सम्राट् का नियम नही था। अपवादस्वरूप ही ऐसा होता था। जब कभी ऐसा होता था, सम्राट जल्दी जल्दी लबे लब डग उठाते हुए, सभा म आते थ और सिंहासन पर बैठते ही बडी शालीनता से खेद प्रकट करते थे। उनका सारा व्यवहार अतिरिक्त रूप से विनीत और

नम्र होता था। विलब से आने के कारण सभासदो को हुई असुविधा की क्षतिपूर्ति का प्रयत्न अत तक चलता रहता था।

आज वैसा कुछ भी नही हुआ। सम्राट विलब स आए थे, पर न कोई जल्दी थी न कोई सकोच। वे स्थिर डगो स दृढ चाल चलते हुए आए और जब सिंहासन पर बैठकर उन्होने आखें उठाइ तो सबने देखा उनकी आखें थकी किंतु गतक थी—सभवत अपनी किसी चिता क कारण सम्राट रात भर सो नही पाए थ।

किन्ही कारणों से सम्राट को विलब हुआ महामत्री ने सम्राट को चिंतित देखकर बड नम्र ढग स अपनी बात आरभ की। अपेक्षा थी कि सम्राट कहग हा महामत्री! चिंतित था रात भर सो नही पाया

किंतु सम्राट ने महामत्री की ओर दृष्टि उठाइ तो उनक चेहरे का आवरण बहुत कठोर था। उतने ही कठोर स्वर म उन्होने कहा सम्राट मैं हू। राज परिपद का समय मेरी इच्छा से निश्चित होता है।'

महामत्री ने आश्चय स सम्राट को देखा, और फिर उनकी दृष्टि गुरु वसिष्ठ पर जम गई—जस कह रहे हो दशरथ की राज-सभा की तो यह परिपाटी नहीं है किंतु गुरु ने कोई उत्तर नही दिया। वे भी एसी ही दृष्टि से सम्राट को देख रह थे जसे कुछ समझ न पा रहे हों

राज-सभा मे एक अटपटा मौन छाया रहा।

किंचित् प्रतीक्षा के पश्चात् महामत्री न स्वय को सतुलित कर पुन साहस किया सम्राट की अनुमति हो तो आवश्यक सूचनाए निवेदित की जाए।'

आरभ कीजिए। सम्राट क शब्द सहज थे, किंतु उनका स्वर अब भी सहज नही हो पाया था।

महामत्री क सकेत पर पहले चर न सूचना दी सम्राट! मैं राज सार्थों के सग यात्रा करने वाला दूत सिद्धार्थ हू। मैं राजकुमार भरत तथा शत्रुघ्न का समाचार लेकर आया हू। राजकुमार अपरताल तथा प्रलब गिरियो के मध्य बहने वाली नदी क तट स होते हुए हस्तिनापुर मे गगा को पार कर सकुशल आग बढ गए हैं।'

सम्राट ने पूरी तन्मयता से समाचार सुना। उनके मन म उल्लास का

एक स्वर फूटा, भरत अयोध्या से दूर हो गया।' उनकी आकृति की कठोर रेखाएं शिथिल हो गइ। आखो म सतोष झाकने लगा और होठो के कोना म हल्की-सी मुसकान उभरी।

सभा धैर्यपूवक सम्राट के उत्तर की प्रतीक्षा करती रही किंतु सम्राट् पूण आत्म-सतोष क साथ अपने अधरों की मुसकान पीते रहे।

अत म फिर महामत्री ही बोले दूत! तुम्हारा समाचार शुभ है। सम्राट राजकुमार का कुशल समाचार जानकर सतुष्ट हैं। तुम जाओ। विश्राम करो।'

दूत प्रणाम कर चला गया।

तब महामत्री स सकेत पाकर न्याय-समिति के सचिव आय पुष्कल उठकर खडे हुए 'सम्राट का स्मरण होगा कुछ दिन पूव सम्राट के अग-रक्षक दल के सनिक विजय की, केकय राजदूत के रथ क घोडों से टकरा उनके खुरो के नीचे आकर कुचले जाने के कारण मत्यु हो गयी थी। सम्राट ने इस घटना की जाच न्याय-समिति को सौंपी थी। न्याय-समिति ने उस दुघटना की सम्यक खोज की है। अपनी खोज के पश्चात् समिति इस निष्कष पर पहुची है कि वह दुघटना मात्र आकस्मिक थी। उसमे केकय राजदूत की न इच्छा थी, न असावधानी। अत समिति केकय राजदूत को निर्दोष पाकर अभियोग मुक्त घोषित करती है। सम्राट मे प्राथना है कि वे इस निणय को अपनी मान्यता प्रदान करें।'

दशरथ का मस्तिष्क नामों पर अटक गया। जिस सैनिक की हत्या हुई वह दशरथ के अग रक्षक दल का था। जिसने हत्या की, वह केकय का राजदूत है, अर्थात युधाजित का राजदूत। अपराधी पर अभियोग लगाने वाल सैनिक भरत के अधीन हैं। जाच करने वाला पुष्कल है—कैकेयी का सबधी। तो केकय राजदूत निर्दोष क्या नहीं होगा!

दशरथ के होठों के कोनों पर फिर मुसकान उभरी, किंतु यह सतुष्टि की मुसकान नहीं थी। बोले वे अब भी कुछ नहीं।

सम्राट को मौन देख महामत्री ही बोले न्याय-समिति की जाच स सम्राट सतुष्ट हैं और समिति क निणय को मान्यता देते हैं"

सहसा महामत्री की बात काटकर दशरथ बोले, किंतु न्याय-समिति

ने मतश के परिवार की क्षतिपूर्ति का कोई सुभाव नही रखा। यह अनुचित है। सनिक विजय के परिवार को क्षतिपूर्ति के रूप मे उसके वतन का दुगुना भत्ता प्रति मास दिया जाए।"

महामत्री ने आश्चय से सम्राट को दखा।

आय पुष्कल ने भी उसी मुद्रा मे सम्राट को देखा किंतु वे महामत्री क समान मौन नही रहे "याय-समिति के सचिव के रूप म मेरा यह क्तव्य है कि मैं सम्राट को स्मरण दिलाऊ कि ऐसी स्थितिया म यक्ति क वेतन का आधा भत्ता देने का विधान है।

किंतु याय-समिति के सचिव को कौन स्मरण दिलाएगा" सम्राट का स्वर अतिरिक्त रूप से तिक्त था कि विधान म सम्राट के अपने कुछ विशेषाधिकार भी है। सम्राट का भत्ते की राशि को घटा बढा सकन का पूण अधिकार है।'

आय पुष्कल के मन मे अनेक आपत्तिया थी—सम्राट को विशेषाधिकार तो हैं, किंतु वे विशष परिस्थितियो के लिए है। इस घटना म एसी कोई विशेष बात नही है।

किंतु सम्राट की भगिमा ऐसी नही थी कि आय पुष्कल या कोई अय पाषद कुछ कहने को प्रोत्साहित होता। सम्राट अप्रस न है यह साफ-साफ दीख रहा था किंतु क्या ? किससे ? क्या वे स्वय पुष्कल से अप्रसन्न है ?

आय पुष्कल न अपनी बात कठ म ही रोक ली।

सभा मे फिर मौन छा गया। सम्राट के इस प्रकार खीझने के अधिक अवसर नही आत थे, और जब आत थ उनका टल जाना ही उचित था। किसी का साहस नही था कि सम्राट की ओर देखे। सबकी दृष्टि भूमि पर गडी हुई थी

ऐसी स्थिति से परिषद को राज-गुरु तथा अय ऋषि ही उबार सकते थे। उन पर सम्राट का अनुशासन अनिवायत लागू नही होता था। किंतु सामायत सम्राट द्वारा याचना होने पर ही गुरु तथा अय ऋषि अपना अभिमत देते थ अथवा बहुत असाधारण स्थिति होने पर ही वे लोग सैद्धातिक हस्तक्षेप करते थे—किंतु आज की बात तो सामाय-सी वैधानिक बात थी।

सबका मौन देख, सम्राट् ने इस विषय का यही समाप्त मान लिया।

वे सभा म आने के पश्चात पहली बार स्वय सक्रिय हुए, 'नगर रक्षा के लिए कौन-सी सेना नियुक्त है महाबलाधिकृत ?"

साम्राज्य की तीसरी स्थायी सेना, सम्राट !"

'कितने समय से यह दायित्व इस सेना के जिम्मे है ?"

'उन्हें यह काय सभाले केवल छह मास हुए है सम्राट !'

उसका महानायक कौन है ?"

स्वय राजकुमार भरत !' महाबलाधिकृत ने सूचना दी किन्तु अयोध्या स उनकी अनुपस्थिति म सेना उपनायक महारथी उग्रदूत की आज्ञा के अधीन है।'

दशरथ ने कुछ क्षणो तक चिंतन का नाटक किया और फिर अपना पूव निश्चित निणय सुना दिया महाबलाधिकृत ! साम्राज्य की तीसरी स्थायी सेना के उपनायक को आदेश दें कि वे अपनी सेना को लेकर उत्तरी सीमात पर स्थित स्कधावार म चले जाए। वहा उनकी आवश्यकता पड सकती है। यह प्रयाण कल प्रात ही हो जाना चाहिए।"

'जो आज्ञा, सम्राट !'

और अयोध्या की रक्षा का दायित्व मेरे अग रक्षक दल के महानायक चित्रसेन को सौंप दिया जाए। सम्राट का स्वर पहले स भी ऊचा हो गया था।

महाबलाधिकृत जो आज्ञा न कह सके। तीसरी स्थायी सेना का स्थानान्तरण यद्यपि अनियमित था, क्योंकि नियमत एक सेना को एक स्थान पर साधारण परिस्थितियों म प्राय तीन वर्षों तक रखा जाता है—फिर भी सभव है कि सम्राट के मन म कोई असाधारण बात हो सभव है उनके उस आदेश के पीछे कोई तक हो। यद्यपि ऐसे आदेशो के कारण महाबलाधिकृत स गुप्त नहा रखे जाने चाहिए, और ऐसे आदेशो का पालन महाबलाधिकृत से उसकी सहमति लिए बिना नहीं होना चाहिए, फिर भी सम्राट कभी-कभी विशेषाधिकार का उपयोग कर लेते हैं। अतत ऐसे निणय लाभदायक ही होते हैं। किंतु नगर रक्षा का दायित्व सम्राट के निजी अग रक्षकों को सौंप देना क्या हो गया है सम्राट की बुद्धि को ?

क्षमा हो, सम्राट !" महाबलाधिकृत बहुत साहस कर बोले "नगर-रक्षा का दायित्व सम्राट के अग रक्षक दल को सौंप देना अपूव निणय है। अग रक्षकों की सख्या इतनी अधिक नही है कि वे सम्राट की निजी रक्षा राज-सभा राज-कार्यालया तथा राजप्रासादा की रक्षा के साथ साथ नगर रक्षा का दायित्व भी सभाल सकें। सम्राट विचार करें यह आदेश अ यावहारिक है। यह तब तक यावहारिक नही हो सकता जब तक कि अग रक्षको की सख्या एक पूरी सेना तक न पहुचा दी जाए।'

सम्राट न अधैयपूवक महाबलाधिकृत की बात सुनी और पुन वडे कटु स्वर म उत्तर दिया महाबलाधिकृत का कदाचित ज्ञात हो कि सम्राट ने अपनी आयु इस सिंहासन तथा राज-सभा म ही यतीत नही की है। मैंने सेनाए स्कधावर तथा सेना-व्यवस्थाए ही नही देखी—बड़े-बड़े युद्ध अभियाना म एकाधिक सनाआ का सफल नेतत्व भी किया है। महाबलाधिकृत मुझे यह सीख न दें कि कौन सी सेना किस कत य के लिए उपयुक्त है।

विचित्र स्थिति थी—व्यवस्था का सर्वोच्च अधिकारी व्यवस्था-सबधी तक सुनने को प्रस्तुत नही था। अनुभवो की बात कहकर उ होने महा बलाधिकृत का मुख बद करने का प्रयत्न किया था। सम्राट का यवहार देख महाबलाधिकृत हतप्रभ हो चुके थ। महामत्री आरभ स ही निरस्त-स थ। गुरु न भी अपूव चुप्पी धारण कर रखी थी

अत म आय पुष्कल ही उठे सम्राट यदि अनुमति दें, तो मैं उनके विचाराथ विधान की परपरा का उल्लख करना चाहूगा जिसके अनुसार *नगर रक्षा का काय अग रक्षको के कत य स पथक* '

और सहसा जस विस्फोट हो गया।

सम्राट अमर्यादित रूप स कुपित हो गये। उनका चेहरा तमतमा गया था। नथुना के साथ अधर भी फडक रहे थे। उनका स्वर धीमा होता तो सप का फूत्कार लिय होता ऊचा होता तो फटने फटने को होता

प्रत्यक सभासद को स्पष्ट रूप स ज्ञात हो कि अभी दशरथ ही सम्राट है और इस सिंहासन पर विराजमान ही नही है सत्ता सपूणत उसके अधिकार मे है। मैं सम्राट की सत्ता की अवहेलना अथवा उसक अवमूल्यन

की रचमात्र अनुमति नहीं दूगा। सम्राट के आदेश पर विचार विमर्श अथवा वाद विवाद नहीं होगा। मैं यह निर्भ्रान्त चेतावनी दे रहा हू कि सम्राट् का विरोध करने वाले न केवल पदच्युत होंगे, वरन् दडित भी होंगे। सम्राट् का विरोध राज-द्रोह माना जाएगा जिसका परिणाम भयकर होगा।"

परिषद जड हो गयी। सम्राट के निर्णय तो तकशून्य थे ही, उनका व्यवहार भी पर्याप्त चकित करने वाला था। सम्राट् अपने इस वय म, अपनी नम्रता ही नहीं शिथिलता के मध्य इतना कठोर तथा परपरा-विरोधी व्यवहार करें—अकल्पनीय बात थी।

सभा से उठकर आ जाने के पश्चात् भी दशरथ का मन क्षणभर को शांत नहीं हुआ। उनके मन म आज राज-परिषद् म हुई एक-एक बात कई-कई बार पुनरावृत्ति कर चुकी थी। एक-एक पात्र उनकी कल्पना की आखों के सामने था। एक एक व्यक्ति की कही हुई एक एक बात जैसे उनकी स्मृति पर खोद दी गयी थी और अत म उनके विचार दो व्यक्तियो पर आ अटके थे—महाबलाधिकृत तथा न्याय-समिति-सचिव पुष्कल।

क्या महाबलाधिकृत मेरा विरोधी है?

यदि है तो क्यों?

किंतु महाबलाधिकृत ने कभी राजनीति म विशेष रुचि नहीं ली। किसी का पक्ष अथवा विपक्ष उसने नहीं साधा। वह सैनिक परपरा मे पला हुआ अधिकारी के सम्मुख सिर झुका देने वाला शस्त्र-व्यवसायी है। उसका न कैकेयी से विशेष सबध है न भरत स, न कैकय राजदूत से, न युधाजित से। उसने जो कुछ कहा वह केवल सैनिक कार्य पद्धति की दृष्टि से कहा होगा। उस व्यक्ति को इतना कह देना ही पर्याप्त होगा कि वह अपने काम से काम रखे। राज-परिषद् के षड्यत्रों अथवा पक्ष विपक्ष मे न पडे। न्याय-अन्याय का विचार उचित-अनुचित का विवाद कर्तव्य अकर्तव्य का विश्लेषण बडी अच्छी बात है—किंतु आज की परिस्थितिया मे सबसे अच्छी बात है—मौन! यदि वह सम्राट् को अप्रसन्न करने का प्रयत्न नहीं करेगा, तो सम्राट् उसमे अप्रसन्न नहीं होंगे

राजनीति के सारे सिद्धातो, आदर्शों तथा नैतिकता का एकमात्र सूत्र है—विरोध उ मूलन। विरोधी का उ मूलन भी

दशरथ का मन हुआ जार से खिलखिलाकर हस पडें—ऐसी हसी जिसकी क्रूरता लोगा के कलेजे दहला दे। उनके विरोधिया को मालूम हो कि सत्ता का विरोध क्या अथ रखता है और उसका कितना बडा मूल्य चुकाना पडता है

आय पुष्कन को लिये हुए, उनका रथ स्थिर गति से उनके भवन की ओर चला जा रहा था।

उनका मन खिन्न था। पिछल कुछ दिनो स राज सभा से निकलत हुए उनका मन रोज ऐसा ही खि न होता था। सम्राट प्रतिदिन नियमित रूप से अभद्र व्यवहार कर रहे थ! क्या हो गया है सम्राट को? रोज कोई न कोई आकस्मिक निश्चय करते हैं। एक से एक विचित्र निश्चय और तदनुकूल आदेश। अब तो जसे परपरा ही चल पडी है। और प्राय निणय एकमत से होत हैं। सभा म कोई इसका विरोध नही करता। किसी प्रस्ताव पर विचार विमश अथवा वाद विवाद नही होता। बस प्रस्ताव स्वीकार भर कर लिये जाते हैं। पिछले कुछ दिनो से उनका स्वभाव कितना चिडचिडा हो गया है। बात बात पर अप्रसन्न हो जात है जसे खीभन का कोई बहाना खोज रहे हो। राज-काज म मनमानी कितनी बढ़ गयी है। छोटी छोटी बातो पर आशकित हो उठत है।

क्या करे कोई? किसी म न तो इतना साहस है कि सम्राट के सम्मुख बोले न किसी को अधिकार। गुरु कह सकत है किंतु गुरु ने जसे राजनीति से वराग्य ले लिया है। वे कुछ कहते ही नही

राजकुमारो मे राम पिता को समझा सकते हैं, किंतु व अयोध्या से बाहर गये हुए है। भरत और शत्रुघ्न भी अपनी ननिहाल चले गये हैं। वसे भी वे अभी छोटे है। सम्राट का न तो विरोध कर सकते हैं न उन्हे समझा सकते है। लक्ष्मण अवश्य अयोध्या म वतमान है किंतु एक तो वे छोटे है दूसरे भयकर उग्र। उन्हे कुछ कहना व्यथ है। कहना ही हो तो राम के माध्यम स कहलाना चाहिए। उन्हे या तो राम की सच्चाइ का विश्वास है

या अपनी मा सुमित्रा की

हा महारानी कैकेयी से बात की जा सकती है। वे मेरी बात सुन भी लेंगी, और सम्राट का अनुशासन भी वे कर सकती है। उनसे अवश्य बात की जानी चाहिए वही से यह सूचना भी मिल जाएगी कि राम कब अयोध्या लौट रहे हैं। राम लौट आए और वे महारानी कैकेयी के साथ मिलकर प्रयत्न करें तो सम्राट को अवश्य ही समझाया जा सकता है।

यह ठीक रहगा

मन कुछ हल्का हुआ नही तो वे अपनी खिन्नता से ही पागल हुए जा रहे थ

वे बहिर्मुखी हुए। उनका रथ अपने भवन के निकटतम चौराह पर पहुच रहा था। सहसा उनका ध्यान विपरीत दिशा से आते हुए एक अन्य रथ की ओर चला गया। रथ असाधारण तीव्र गति से भागा चला आ रहा था। नगर के मुख्य पथो पर रथो को इस गति से नही दौडाना चाहिए—वे सोच रह थे—दुघटनाए ऐसे ही तो होती

पर वह ता उन्ही के रथ पर चढा चला आ रहा था सहसा इतने अकस्मात रूप स, इतने निकट आकर वह रुका कि भ्रम हुआ, जैसे दोनो रथ परस्पर भिड गय हो।

ऐसी ही एक दुघटना म पिछले दिनो म सम्राट के अग रक्षक दल का एक सनिक मारा गया था—आय पुष्कल सोच रहे थे—य दानो रथ टकरा गये होत तो आज अधिक न्यविनया के प्राण गय होत। उनके सारथी ने बडी सावधानी स काम लिया था। तीव्र चालक अच्छा सारथी नहीं होता, अच्छा सारथी तो अच्छा नियन्त्रक होता है।

दूसरे रथ के रुकते ही, उसम से कूदकर, चार हृष्ट पुष्ट युवक नीचे उतरे। उनके वस्त्र साधारण नागरिको के-स थे—जो इतने बहुमूल्य रथ मे यात्रा करने के उपयुक्त नही थे। वस्त्रो को देखकर उनके व्यवसाय अथवा स्थिति के विषय मे कुछ कहना कठिन था। उनकी आकृतियो पर होती होती रह गयी दुघटना का कोई प्रभाव नही था। वे तो जसे किसी कम के लिए उद्यत थे

वे सीधे उनके रथ की आर बढ आए। उन्होने बिना एक भी शब्द

कर आय पुष्कल के दोनों अंग रक्षकों तथा सारथी को रथ से नीचे घसीट लिया।

आय पुष्कल की आंखें फट गयी—यह क्या हो रहा है?

अंग रक्षक असावधानी म पकड़े गय थे। फिर भी वे शस्त्र-व्यवसायी थे। उन्होंने अपने शस्त्र निकाल लिये थे। युवक भी निःशस्त्र नही थे। उन्होंने कदाचित अपने वस्त्रो म शस्त्र छिपा रखे थे। और कुछ निमिषो म ही स्पष्ट हो गया कि उनका शस्त्र-कौशल असाधारण था।

दिन-दहाड़े नगर के मुख्य पथ पर इस प्रकार शस्त्र प्रहार हो रहा था, जसे युद्ध हो रहा हो।

आय पुष्कल न आगे बढ़कर कुछ कहना चाहा, किंतु घटना जिस गति से घटी थी उसम कहन-सुनन का कोई अवकाश नही था। व कुछ कहने और कोई कुछ सुनता—उसमे पहले ही युवकों ने अंग रक्षकों को हताहत कर भूमि पर डाल दिया था। सारथी को अंग रक्षकों के साथ ही नीचे पथ पर घसीटा गया था जो अब भी भूमि पर पड़ा, पथराई हुई आखो स सब कुछ देख रहा था।

अगले ही क्षण उन्होंने आय पुष्कल क मुख पर हाथ रख, भुजाओं से पकड़कर सधे हाथो स ऊपर उठा लिया जसे यह उनका नित्य का काम हो। बडी दक्षता और स्फूर्ति से उन्होंने आय पुष्कल को ल जाकर अपने रथ म पटक दिया। उनके पटके जाते ही रथ बिना किसी आदेश की प्रतीक्षा किए, स्वत चल पडा जसे एक एक कृत्य पूर्व नियोजित हो।

चलते हुए रथ म उनके हाथ-पैर अच्छी तरह बांध दिय गये। न उनसे कुछ पूछा गया न कुछ बताया गया। युवकों ने परस्पर भी कोइ बात नहीं की थी। उनके हाथ कायरत थे मुख बद—जैसे गूगे हो।

आय पुष्कल के मुख पर कसकर पट्टी बांध दी गयी। जाने उन्ह क्या सुघाया गया क्रमश उनकी चेतना लुप्त हो गयी, और वे अधकार मे खो गये।

राज-परिषद की कार्यवाही दूत की सूचना से आरंभ हुई।

'सम्राट! मैं राज सार्थों के साथ यात्रा करने वाला दूत विजय हू। मैं

राजकुमार भरत तथा शत्रुघ्न का समाचार लेकर आया हू। राजकुमार पाचाल देश से होते हुए कुरुजागल प्रदेश का पीछ छोडते हुए सकुशल पुण्य सलिला इक्षुमती के उस पार उतर गये है।'

प्रत्येक सभासद ने देखा उद्विग्न सम्राट् को इस समाचार से कुछ प्रसन्नता हुई।

भरत अयोध्या स दूर होता जा रहा है—दशरथ सोच रहे थे—दूत के अयोध्या लौटने तक के समय म वह और भी दूर हो गया होगा। किंतु अयोध्या म बठे भरतो का क्या हो ?

महामत्री ने बिना औपचारिक भूमिका क अपनी बात आरभ की, 'क्षमा करें सम्राट! परिषद की अन्य कार्यवाहिया को स्थगित कर बीच म एक आवश्यक सूचना देने को बाध्य हू।

अवश्य पुष्कल का समाचार होगा।' सम्राट ने आश्वस्त मन स सोचा।

राज-परिषद् के प्रमुख पार्षद तथा न्याय समिति क सचिव आर्य पुष्कल का, कल साय दिन-दहाडे, नगर के प्रमुख चतुष्पथ स दस्युओ द्वारा अपहरण हो गया है। यह घटना अपने-आप म ही अयोध्या की शाति तथा सुरक्षा-व्यवस्था के नाम पर कलक है। इतने प्रमुख नागरिक के साथ ऐसा अघटनीय घट जाए। ऐसी स्थिति म कोई भी सामान्य नागरिक स्वय को सुरक्षित कैसे मानेगा? किंतु, आर्य पुष्कल के पुत्र चिरजीव विपुल का वक्तव्य इससे भी भयकर लज्जाजनक, त्रासद एव आतकपूर्ण है। राज-व्यवस्था "

महामत्री!" सम्राट ने बीच म ही टोक दिया, "जिस राज-व्यवस्था की आप धारा प्रवाह निन्दा कर रहे हैं उसके आप महामत्री है।

सम्राट ठीक कहते हैं।' महामत्री उसी आवेग म बोल 'किंतु यह दुर्घटना अग रक्षक दल को नगर रक्षा का भार सौंप देने की व्यवस्था से सबधित है जिसके लिए मैं उत्तरदायी नही हू। "

अर्थात मैं उत्तरदायी हू। दशरथ पुन बोले। इस बार उनका स्वर शात नही था। उसम आवेश की स्पष्ट झलक थी 'तब तो महामत्री को और भी सोच-समझकर मुख से शब्द निकालने चाहिए। व्यवस्था का

अपमान सम्राट का अपमान है, और सम्राट का अपमान

सम्राट अपने ही आवश म मौन हो गये। शेप बात उनका तमतमाता चेहरा कह रहा था।

'मुझे अपनी ओर से कुछ नही कहना है सम्राट!' महामंत्री क स्वर म न वह प्रवाह था न तज आप चिरजीव विपुल का वक्तव्य सुन लें।

सम्राट मौन रहे।

विपुल न झुककर सम्राट को प्रणाम किया। उसे देखत ही लगता था कि वह रातभर सोया नही है। सभवत किसी समय थोडा बहुत रोया भी था। उसकी वशभूषा राजसभा मे उपस्थित हाने के लिए उपयुक्त नहीं थी—कदाचित उस इसका भी अवसर नही मिला था।

सम्राट! कल सध्या समय हमारा सारथी जब आहत तथा अचेत अग रक्षको को रथ म डालकर भवन म पहुचा तो हम सूचना मिली कि पिताजी का अपहरण हो गया है। हमारे लिए यह सूचना जितनी अप्रत्याशित थी उतनी ही घातक भी। मैंने अपन अग रक्षकों और निजी सनिकों को तत्काल चारो ओर दौडाया और स्वय निकटतम सनिक चौकी की ओर बढा। माग म मने दखा कि यह समाचार सार नगर म फल चुका था। जगह जगह विभिन्न प्रकार की चर्चाए हो रही थी अयोध्या जस नगर के लिए यह अकल्पनीय घटना थी। राज्य के इतने प्रभावशाली व्यक्ति का इस प्रकार दिन दहाडे राजपथ से हरण हो जाए और नगर रक्षक कुछ न कर सकें। अविश्वसनीय! नगर म त्रास फल गया था। हाट बद हो गये थ। व्यापार ठप्प हो गया था। लोग स्वेच्छा स अपने घरो म बद हो गय थ। सत्ता की शिथिलता का इसस बडा और क्या प्रमाण हो सकता है सम्राट!

युवक!' दशरथ के स्वर म चतावनी थी।

क्षमा हो सम्राट! दुखी व्यक्ति के मुह स कोई अनुपयुक्त बात निकल जाए तो क्षमा करें। विपुल ने अपनी बात आग बढाई नगर म इतना कुछ हुआ था और सनिक चौकी का सूचना तक नही थी। पहल तो उ होने आय पुष्कल को ही पहचानन से इनकार कर दिया। जब पहचानन को बाध्य हुए तो उनके अपहरण की बात को यह कहकर उडा दिया कि व

अपने मनोरंजन के लिए कहीं चले गए होंगे। मैंने अपने सारथी तथा आहत अंग रक्षकों से प्रमाण दिलाए तो उत्तर मिला कि वे मदिरा पीकर आपस में लड़ पड़े होंगे इत्यादि। यह सोचकर कि ये सैनिक इस प्रकार के परिवाद के लिए उपयुक्त पात्र नहीं हैं मैं उच्चाधिकारियों से भी मिला। किंतु मुझे अत्यंत दुःख से सम्राट के सम्मुख निवेदन करना पड़ रहा है कि उन अधिकारियों ने मेरे साथ ही नहीं, मेरा पक्ष लेने वाले प्रत्येक नागरिक के साथ दुर्व्यवहार किया, हम सबका अपमान किया। मैं रातभर इस संबंध में विभिन्न अधिकारियों के पास भाग दौड़ करता रहा हूं, किंतु उन्होंने न इस विषय में कोई सूचना दी और न उन्हें खोज निकालने का कोई प्रयत्न किया।' विपुल ने एक क्षण रुककर सम्राट को देखा और पुनः बोला 'किंतु सम्राट! मैंने अपने निजी सूत्रों से पता लगाया है कि वे दस्यु न तो अयोध्या के बाहर से आए थे न अयोध्या के बाहर गए हैं। वे सशस्त्र थे और उनका युद्ध-कौशल अच्छे प्रशिक्षित सैनिकों का-सा था। सम्राट मुझे यह कहने की अनुमति दें कि वे दस्यु स्वयं सम्राट के अंग रक्षक दल के सैनिक थे जिन्होंने सैनिक वेश उतारकर

'सावधान!' सम्राट ने उसे आगे बढ़ने नहीं दिया 'किसी भी घटना की आड़ लेकर इस प्रकार का अनर्गल प्रलाप करने की अनुमति नहीं दी जा सकती।'

'अनन्ताना!' महामंत्री ने सम्राट की बात पूरी होते ही कहा 'चिरंजीव विपुल को अपनी बात पूरी करने के पश्चात प्रमाण प्रस्तुत करने को कहा जाए। यदि वे अपनी बात प्रमाणित नहीं कर सकें तो निराधार आरोप लगाने के अपराध में वे दंडित किए जाएं।'

'नहीं!' सम्राट का अधैर्य मुखर हो उठा। वे फिर आवेश की स्थिति में आ गए थे 'इस प्रकार के दूषित प्रचार के लिए राजसभा का प्रयोग नहीं हो सकता। मैं इस विषय में विचार विमर्श की अनुमति नहीं दे सकता।'

किंतु सम्राट की इच्छा के अनुकूल विपुल मौन नहीं रहा 'यदि मेरे पिता ने कोई अपराध किया था तो सम्राट उन पर खुला अभियोग लगाकर उन्हें बंदी कर सकते थे।'

'इसे बंदी किया जाए!' सम्राट ने असंतुलित आवेश में कहा।

दो प्रतिहारियों ने आगे बढ़कर विपुल को भुजाओं से पकड़ लिया। वह अपने आप ही मौन हो गया।

दशरथ उसे घूरते रहे। किंतु जब वह कुछ नहीं बोला तो सम्राट ने एक एक शब्द पर बल देते हुए स्थिर स्वर में कहा इस प्रकार के उत्तरदायित्वशून्य आचरण को मैं साम्राज्य के लिए हानिकारक मानता हूं। अत आदेश देता हूं कि इस तथाकथित घटना की आड़ लेकर साम्राज्य तथा सम्राट के व्यक्तित्व के विरुद्ध प्रचार अपराध माना जाएगा। इस प्रकार का घातक प्रचार करने वाला व्यक्ति दडनीय होगा

सहसा विपुल छिटककर प्रतिहारियो के हाथों से निकल गया और चीत्कार के स्वर में बोला पहले ही किसी को दशरथ के शासन में आस्था नहीं थी। अब और भी नहीं रहेगी।

इसे मौन करो। सम्राट ने उच्च स्वर में कहा।

प्रतिहारी विपुल की ओर बढ़े।

विपुल प्रतिहारियों से बचता इधर उधर भागता रहा और साथ ही चीखता रहा अब किसी को अपनी सुरक्षा के लिए राज्य के सैनिकों पर विश्वास नही रहा। लोग अपनी रक्षा स्वयं करेंगे। निजी अंग रक्षक तथा निजी सैनिकों के युद्ध अयोध्या के हाट बाजारों में होंगे। अयोध्या के मुख्य पथ रक्तपात के

प्रतिहारियो ने उसे पकडकर उसका मुख पट्टी से बाध दिया था, अब केवल उसकी आंखें खुली थी।

प्रतिहारी सम्राट के आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे।

इसे भूगर्भ कारागार में डाल दो'' सम्राट ने आज्ञा दी, और आज से किसी राजकीय बंदी के विषय में अधिकारियो से पूछताछ नही की जा सकेगी। साम्राज्य की सुरक्षा के लिए आवश्यक होने पर किसी भी व्यक्ति को बिना अभियोग बताए भी बंदी किया जा सकेगा।

सम्राट उठकर खड़े हो गए।

सभा विसर्जित हो गयी।

दशरथ की चिंता तनिक भी कम नही हुई थी।

उन्होंने क्या करना चाहा था और क्या हुआ। अपने अंगरक्षकों को नगर रक्षा का दायित्व सौंपा था कि नगर में भरत की शक्ति कम हो जाए। भरत की शक्ति कम कर पाए या नहीं कह नहीं सकते, हां, पुष्कल के द्वारा वैधानिक संकट अवश्य उठा दिया गया, साथ ही खतरा उत्पन्न हो गया कि यदि कैकेयी को आभास मिल गया कि दशरथ क्या करने का प्रयत्न कर रहे हैं तो उसकी ओर से जवाबी आघात हो सकता है, और संभव है कि वह आघात इतना भारी हो कि दशरथ उसे संभाल न पाएं। उससे बचने के लिए पुष्कल का अपहरण करवाया तो बवंडर मच गया

क्या हो गया है उन्हें ?

क्या सचमुच दशरथ इतने वृद्ध हो चुके हैं कि अब राजनीतिक गतिविधि उनकी क्षमता से बाहर है। उनकी प्रत्येक चाल उलटी पड रही है। उन्होंने सेना को पूर्णत हस्तगत करना चाहा था—किंतु लगता है, उनकी रही सही सत्ता को भी खतरा उत्पन्न हो गया है।

इस प्रकार का बल प्रयोग दमन, लोगों के अधिकारों को सीमित करना—कब तक उनकी सहायता कर पाएगा। हर बात की सीमा होती है

इतना रोकने पर भी पुष्कल का बेटा क्या कह गया राजसभा में किसी को दशरथ के शासन में आस्था नहीं है। अब कोई अपनी सुरक्षा के लिए राजकीय सैनिकों पर निर्भर नहीं रहेगा। सभी धनवान और शक्तिशाली लोग निजी सैनिक और अंगरक्षक रखेंगे। स्थान स्थान पर निजी सेनाओं में युद्ध होंगे रक्तपात होगा

कैसा होगा अयोध्या का शासन ?

और सबसे बडी निजी सेना आज किसके पास है ?

कैकय के राजदूत के पास।

अब तक निजी सेनाएं अपने स्वामियों के अंगरक्षकों का काम करने की औपचारिकता निभाती रही हैं। उनके पास किसी भी प्रकार के राजकीय अधिकार नहीं हैं, किंतु यदि निजी सेनाओं के युद्ध आरंभ हुए तो फिर राजकीय अधिकारों की आवश्यकता किसको रहेगी। विशेष संबंधों को मान्यता देते हुए कैकय के राजदूत को सबसे बडी निजी सेना रखने की अनुमति दी गयी थी। वह सेना कैकेयी की निजी सेना हो जाएगी—तो

कर्केयी की शक्ति कम होगी या बढ जाएगी ?

किस झमेले म फस गए सम्राट !

सभव है उस लडक विपुल न निरथक प्रलाप ही किया हो उसकी बात के पीछे कोई ठोस आधार न हो, किंतु सभावनाओ की ओर स आख नही मूदी जा सकती।

अब तो एक ही रास्ता है कि साम्रा य म निजी सनाओ का निषेध कर दिया जाए किंतु यह कसे सभव है ? कोसल क प्रत्यक सामत के पास अपनी निजी सेना है जो युद्ध क अवसर पर साम्राज्य की ओर स लडती है। प्रत्येक महत्त्वपूण यक्ति के पास अपने अग र क है। प्रत्यक राज्य क राजदूत के पास अपनी निजी मना है उन सब पर प्रतिरोध लगाया जाएगा, तो सामतो की सना का व्यय साम्राज्य पर आ पडेगा अ य निजी अग रक्षको तथा सनिको की आजीविका का क्या होगा ? क्या साम्राज्य इतने कमचारियो का बोझ उठा सकेगा ? और अत म विभि न राज्यो के राजदूतो की सुरक्षा का प्रबध अयोध्या की सना को करना पडेगा। फिर वे स्वतत्र राज्य है दशरथ का शासन उन पर नही है। दशरथ उन राज्यो की पूछताछ प्रश्न जिज्ञासा पर प्रतिबध नही लगा सकत

उ ह क्या उत्तर देंगे सम्राट ?

कोई उत्तर उनक पास हो या न हो किंतु केकय के राजदूत के पास इतनी वडी निजी सेना दशरथ किसी स्थिति म नही रहने दे सकते

कल ही उ ह राजसभा म घोषणा करनी पडेगी कि अयोध्या म स्थित प्रत्यक राजदूत को अपने अग रक्षको तथा निजी सनाओ को कोसल के सनापति के आधीन मानना होगा। और कल ही उ ह केकय के राजदूत की निजी सना को नि शस्त्र कर अयोध्या की सेना के अधीन असनिक पदो पर भेज देना होगा।

इतना तो उ हे करना ही होगा—चाहे कोई प्रस न हो या अप्रस न।

यह वे कर देंगे। किंतु उसके पश्चात ?

अब स्थिति यह नही थी कि वे सोचें कि भडिए को इट मारें या न मारें। आधी इट वे मार चुके थे और शेष आधी उ हे मारनी ही होगी उसके पश्चात भडिया चाहे झपट ही पडे अब ककेयी स यह छिपा भी

नहीं रह सकता कि उन्होने आघात कर दिया है। कैकेयी प्रत्याघात भी अवश्य करेगी

बात अब केवल कैकेयी की नही है। देश के भीतर का विरोध और बाहरी आक्रमणो की सभावनाए वह बवडर उठेगा कि सत्ता दशरथ के हाथो म नही रह पाएगी। यदि बाहर से कोई न भी आया और विभिन्न दबावो म पिसकर, उन्ह अपन वचनानुसार सत्ता भरत को सौंपनी पडी तो पिछले दिनो के इन सारे प्रयत्नो मघर्षों आघातो का क्या होगा। भरत कुल अठारह वर्षों का तरुण है। वह स्वतत्र रूप स राज नही कर सकता। राज युधाजित ही करेगा। दशरथ का भरत विरोध खुलकर सामने आ चुका है। ऐसी स्थिति म भरत के हाथ म सत्ता गयी तो दशरथ का स्थान कहा होगा—भूगभ कारागार म ? गुप्त यत्रणालय म ? युधाजित के चरणो म ? अथवा खडग की नोक पर ?

कैकेयी की ओर स किसी प्रकार की दया, सहानुभूति अथवा कोमलता की अपेक्षा वे नही कर सकते। कैकेयी के साथ वे काफी लबे समय तक रहे हैं। व उसकी घात पहचानते हैं। होने पर आए ता वह कठोर भी हो सकती है और क्रूर भी। कैकयी की मा ने हठ के पीछे अपने पति क प्राणो तक की चिंता नही की थी जबकि वह पति स प्रेम भी करती थी। दशरथ जानते हैं कैकेयी को उनसे रचमात्र भी प्रेम नही है—फिर वह दया क्या करेगी ?

तो ?

दशरथ स्वय को कैकयी की दया पर छोड दें ?

नही।

ता ?

दशरथ का ध्यान राम की ओर चला गया—शबर युद्ध के पश्चात भी दशरथ को राम न ही सहारा दिया था। तब भी दशरथ ने साचा था —कितना बडा बेटा है उनका और कितना समथ। और अब तो राम अपनी सेवा अपन शौय और अपन चरित्र की उदात्तता के कारण सारे आर्यावत्त म श्रद्धेय हो चुका है। दशरथ का ध्यान इस ओर पहले क्या नही गया ? उन्हाने सदा ही राम और राम की मा की उपेक्षा की है। कभी

समय स उन्हें उनका देय नही दिया।

यदि राम को युवराज घोषित कर सत्ता उस सौंप दी जाए तो किस आपत्ति होगी ? राम सम्राट की ज्येष्ठ रानी का पुत्र है। भाइयो म सबसे बडा है। योग्य, शक्तिशाली और वीर है, सबस बढकर लोकप्रिय है। प्रजा मन से उसका स्वागत करगी। कोई यह नही कहगा कि दशरथ न घबराकर राज छोड दिया कोई नही कह सकेगा कि दशरथ, कैकेयी अथवा युधाजित स पराजित हुए। प्रत्यक व्यक्ति स्वीकार करगा कि दशरथ न उचित समय पर उपयुक्त पात्र को सत्ता सौंप दी राम के हाथ म सत्ता पूरी तरह सुरक्षित रहेगी—युधाजित अपनी तथा अपन मित्रो की सपूर्ण सना एकर भी अयोध्या पर चढ दौडे तो राम तनिक भी विचलित नही होगा।

घबराहट और जल्दी म उठाए गए इन सारे बवडरो को राम झेल लेगा। राम साम्राज्य को सभाल लगा, और राम से दशरथ को कोइ भय नही है। दशरथ की आखें चमक उठी। दशरथ का यह पहल क्यो नही सूझा ? चारो भाइयो म से दशरथ यदि किसी को अपनी रक्षा का दायित्व सौंपकर निश्चित हो सकते हैं, तो वह केवल राम है। अपनी तीनो पटरानियो म स दशरथ किसी की निरीहता अथवा प्रेम पर विश्वास कर सकते हैं तो वह केवल कौसल्या है

दशरथ को तत्काल राम का युवराज्याभिषेक कर देना चाहिए।

और यह भी कसा सुखद सयोग है कि राम कल वापस अयोध्या लौट रहा है। कल ही राजपरिषद म राम के अभिषेक का निर्णय हो जाना चाहिए, और यथाशीघ्र अभिषेक भी। किसी को तनिक-सी भी सूचना मिल गयी तो विघ्न उठ खड़े होगे। कैकेयी अपन समर्थको की सहायता से इस अभिषेक को रोकने का प्रयत्न करेगी। सभव है राम की हत्या का प्रयत्न हो। सभव है स्वय सम्राट के प्राण लन का षडयत्र हो—राज्याधिकार के लिए क्या नहीं होता !

दशरथ का शरीर एक बार फिर ठडे पसीन से नहा गया। मत्यु जसे उनके सामने खडी उनकी आखों म देख रही थी—बस हाथ बढाने की बात है। यदि उन्होंने राम की बाह पकड ली तो राम अपने खड्ग की नोक मत्यु

के वक्ष म हूल देगा

किंतु केकय नरेश का दिया गया दशरथ का वचन ?

रघुवश म ज म लेकर कोई अपना वचन नही तोडता। ता क्या व श की प्रसिद्धि बनाए रखन क लिए दशरथ अपने क ठ म मृत्यु का फदा डाल लें ?

जीवन बडा है या वचन ?

वचन की रक्षा कर मर जाना अच्छा है या जीवन की रक्षा क लिए वचन को तोड देना ?

दशरथ क मन म कहीं कोई सदेह नही था कि उनके मन मे जीवन की अदम्य लालसा थी। व जीना चाहत थे। न सही सत्ता, किंतु जीवन की रक्षा ता हो

वचन की रक्षा धम है

पर ज्येष्ठ पुत्र का उसका देय देना भी ता धम है

पहल धम के पालन से उ ह मिलगी मत्यु।

और दूसरे धम के साथ जुडा है उनका सुखद और सुरक्षित जीवन। उनकी रक्षा कोई कर सकता है तो केवल राम। राम उनकी रक्षा करन को तत्पर न हुआ तो फिर मत्यु

दशरथ ने अपने मन को पहचाना। भरत के नाना को दिए गए वचन की पूर्ति की कोई इच्छा उसम नही थी। वहा तो जीवन की सुख-कल्पना थी। और जीवन का अथ था राम।

किंतु क्या राम अपना युवराज्याभिषेक स्वीकार कर लगा ?

राम जानता है कि दशरथ, भरत को युवराज बनाने के लिए वचनबद्ध हैं। फिर वह क्या चाहगा कि पिता अपना वचन तोडकर अपयश लें दशरथ भली प्रकार जानत हैं कि राम को राज्य का रचमात्र भी मोह नहीं है। उसने आज तक केवल कम किया है—उसका फल कभी नहीं चाहा। उसने दायित्व निभाए हैं, अधिकार कभी नही माग।

उसे समझाना होगा कि उसका अभिषेक उसके पिता क प्राणा की रक्षा क लिए कितना आवश्यक है। उस तत्काल अभिषेक करवाना हागा—

जीवन, मात्र कम हो गया है। करन को इतना कुछ हो, ता सामाजिक दायित्व के प्रति सजग पति पत्नी अपने जीवन को पुलकित प्रेम की कहानी नही बना सकते।

फिर भी राम का भोजन कराए बिना स्वय खा लने की बात सीता आज तक स्वीकार नही कर सकी। वे जानती हैं राम पर राज्य की ओर से सौंप गये दायित्व तो है ही अनके अपने भीतर की आग भी उन्ह निष्क्रिय बठने नही देती। जब घर से बाहर जात हैं कही न-कही शासन की कोई अनीति शिथिलता कत्तव्यहीनता अथवा उपेक्षा देखकर या पिघल जाते हैं या जल उठत हैं। सम्राट दिन प्रति दिन वद्ध और शिथिल होत जा रहे है। शासन क सूत्र उनके हाथो स फिसलते जा रह हैं। बहुत सतक रहने पर भी उनम कोई-न-कोई प्रमाद होता ही रहता है। राम की अनुपस्थिति म पिछल दिनो यहा क्या कुछ नही हुआ। वसे भी कही-न कही स किसी राजपुरुष के अमर्यादित अथवा अनीतिपूर्ण व्यवहार की सूचना राम को मिलती ही रहती है, और फिर राम शात नही बठ सकत। दृढ आत्म नियत्रण के कारण उनम आवेश का ज्वार नही उठता, किंतु हल्की-हल्की आच उन्ह तपाती ही रहती है।

व्यस्त राम को विलब हो जाता है और वे भोजन क समय घर नहीं पहुच पात तो स्वय भी भूखी रहकर सीता उन्ह शक्ति नही पहुचाती। व जानती हैं वे स्वय को अनावश्यक पीडा दे रहा हैं। सीता के लिए यह सस्कार की बात नहीं है। अपनी बौद्धिकता के बल पर यय के सस्कारो को तोडने म वे पूणत सक्षम है। किंतु जब पति बाहर से आता है और उसे मालूम होता है कि पत्नी उसक लिए भूखी बठी है तो उस कामकाजी जीवन म भी दोनो के बीच कुछ कोमल क्षण जाग उठत हैं। सबधों की इस कोमलता न इस कत यपूर्ण जीवन म भी हरीतिमा बना रखी है। सीता उस हरीतिमा को कस छोड दें ?

वे कितना चाहती है कि सामाजिक तथा प्रशासनिक कामो म राम का हाथ बटाए पर अभी तक राम का व्यक्तिगत देखभाल के साथ स्त्रियो तथा बच्चो के कल्याण सबधी कुछ हल्क कामो के अतिरिक्त वे कुछ नही कर पायी हैं। इस परिवार का ही नही सारे समाज का ढाचा ही कुछ ऐसा है

कि नारी कहीं शोभा की वस्तु है कहीं भोग की। कहीं वह अत्यन्त शोषित है, कहीं परजीवी। अमरबेल होकर रह गई है नारी, जो अपने पति के माध्यम से समाज का रस खींचती है। समाज से उसका सीधा कोई संबंध हो नहीं है। घर की व्यवस्था में तो फिर भी उसका स्थान है सामाजिक उत्पादन में वह एकदम निष्प्रयोजन वस्तु है। निर्धन किसान की पत्नी उसके साथ खेत पर जाकर उसका हाथ बटाती है, श्रमिक की पत्नी पति के साथ या स्वतन्त्र रूप से श्रम करती है किंतु धनी वर्ग की स्त्रियां मात्र जोंकें हैं। चूसने के लिए उन्हें रक्त चाहिए। उनकी सामाजिक उपयोगिता पूरी तरह शून्य है और उनकी आवश्यकताएं आसमान को छू रही हैं। उन्हें भड़कील वस्त्र चाहिए, चमकीले आभूषण चाहिए, प्रसाधन के लिए चन्दन-कस्तूरी के छकड़े भी उनके लिए अपर्याप्त हैं, चर्बी चढ़ाने के लिए दुनिया भर का गरिष्ठ और स्वादिष्ट भोजन चाहिए

इन निकम्मी, मोटी बुद्धि वाली, निरर्थक वस्तुओं को देखकर सीता का खून जल उठता था। उनसे घड़ी-आध घड़ी बात कर सीता का दम घुटने लगता था। रानियां महारानियां सामंत-पत्नियां, आचार्य-पत्नियां— सब ही पुराने पड़े व्यर्थ के कबाड़-सी वस्तुएं थीं जिनकी कोई सामाजिक उपयोगिता नहीं थी।

पर सीता स्वयं भी गतिहीन होकर अभी तक कोई बहुत महत्त्वपूर्ण काम नहीं कर पायी थी। इस प्राय निष्क्रियता में मन आशंकित रहती थी कि कहीं वे भी सार्थक परिश्रम के अभाव में उसी कबाड़ का अंग न बन जाएं। पिछले चार वर्षों में कितनी बार पति-पत्नी में इस विषय पर कहा-सुनी हुई थी। साधारण बातचीत हुई थी, तर्क हुए थे तनातनी और झगड़े भी हुए थे। पर अंत में दोनों ने यही पाया था कि यह रुद्ध व्यवस्था नारी शून्य पुरुष समाज में काम करने की इतनी अभ्यस्त हो चुकी थी कि नारी का अपने मध्य पाते ही, उसे पीसने लगती थी। यह व्यवस्था नारी को उसका उचित मानवीय स्थान देने के लिए किंचित भी इच्छुक नहीं थी। नारी को पुरुष की बराबरी का स्थान दिलाने के लिए लंबा और बारम्बार संघर्ष अपेक्षित था।

सीता के छोटे मोटे स्फुट प्रयत्न, रूढ़-व्यवस्था के विरुद्ध सांड़ की दीवार

पर हाथ के नाखूनो स लगाई गई खरोचें मात्र थी—जो दिखाई भी नही पड रही थी। वस्तुत व प्रतीक्षा भी कर रही थी और तैयारी भी। उनका शरीर घर और बाहर की नियमित नित्य-व्यवस्थाओ म लगा रहता था, किंतु मन भविष्य की कल्पनाए करता रहता था—आने वाले समय के लिए योजनाए बनाता रहता था। कही एसा न हा कि जब अवसर आए तो सीता को करन क लिए कोई काम ही न सूझे

व्यक्तिगत जीवन अपनी जगह है। उसका सुख सबको आकाक्ष्य है। किंतु सामाजिक लक्ष्य रहित जीवन भी काई जीवन है ? सीता जब राम को जन-सामाय की सुविधाओ की व्यवस्था म अपन प्राणो को खपात देखती थी तो उनके मन म तप्ति और स्पर्धा की भावनाए एक साथ ही अकुरित हो उठती थी। धय है राम जो बिना कोई राजनीतिक अधिकार पाए भी अपने कत य म लगे हुए थे, यदि कही ऐसे ही ये चारो भाई होते । और स्पर्धा होती थी सीता को राम से—क्यो नही वे भी उही के समान अपना जीवन कम म खपा पाती ?

इस स्पर्धा मे सीता का एक ही सहयोगी है—देवर लक्ष्मण। कितनी तडप है लक्ष्मण म स्वस्थ साहसी सामाजिक काय के लिए। अनीति देखकर लक्ष्मण रुक नही सकत। और फिर अपने भैया राम का एक सकेत उनके लिए पर्याप्त है। अब तो वे सतरह वर्षों के हो गए है। चार वप पूव जब वे राम के साथ सिद्धाश्रम गए थे तब मात्र एक किशोर हा तो थ। किंतु किसी कम म किसी जाखिम म लक्ष्मण पीछे नही रह।

भरत और शत्रुघ्न भी सात्विक प्रवत्ति के है और अयाय देखकर विरोध उनक मन मे भी जागता है किंतु उनमे राम और लक्ष्मण जसी आग और तडप नही है। वे दोना ही आत्मकेद्रित है। समाज की गतिविधिया और प्रवत्तियो स उनका काई विशेष सपक नही है। यही कारण है कि याय क प्रति पूणत समर्पित होने पर भी उह अपने पडोस म होता हुआ अयाय दिखाइ नही पडता। उनकी अपनी दीवार की छाया म अमानवीय अत्याचार पनपता रहता है और उह वह तब तक दिखाई नही पडता जब तक कोई अय यक्ति उसकी ओर इगित न कर दे। उन दोनो का समस्त बल स्वय चरित्रवान बनन पर है परिवेश की गदगी दूर करने की ओर उनका

ध्यान नही है। ऐसे लोग अनीति के समथक तो नही हात किंतु अनीति को उनसे कोई विशेष भय भी नहीं होता।

कदाचित यही कारण था कि भरत और शत्रुघ्न का सबध अयोध्या और अयोध्या क आस-पास होन वाली सामाजिक और राजनीतिक हलचलों स कम भरत क ननिहाल स ही अधिक था। एक ही माता के पुत्र होन पर भी लक्ष्मण और शत्रुघ्न कितने भिन्न थे। सुमित्रा का सारा प्रशिक्षण शत्रुघ्न को भरत के प्रभाव से मुक्त कर लक्ष्मण जसा नही बना सका था

परिचारिकाओं की हलचल से सीता को राम के आन का आभास मिला।

राम ने कक्ष म प्रवेश किया। उनक चेहरे पर एक हल्की-सी मुसकान थी किंतु मुसकान की उस परत के नीचे छिपी क्लाति सीता की दष्टि म ओझल नही रह सकी।

प्रवास की थकान कम थी कि फिर स्वय को इतना थका डाला।

राम की आखों ने सीता की निरीक्षण शक्ति की प्रशसा की तुमसे कुछ भी छिपाना कठिन है सीत।'

अभी तक भूखे हैं। कहीं भाजन भी नही किया होगा।

राम मुसकराए भर कुछ बोल नही।

सीता ने परिचारिका को भोजन लान का सकेत किया देखती हू, सारे कार्यों के लिए अयोध्या म केवल एक ही व्यक्ति सुलभ है।

राम झेंपत से मुसकराए 'ऐसा नहीं है प्रिय! भजने को तो मैं अन्य लोगो को भी भेज सकता हू किंतु अपन अनुभव से क्रमश जान गया हू कि सामान्य राजपुरुष जब शासकीय काय क लिए जाता ह तो प्रजा अथवा शासन का भला कम करता है अपना भला ही अधिक करता है।

'कोई विशेष बात ?'

बहुत नही। पर कुछ-न-कुछ तो होता ही रहता है। आज तो स्वय सम्राट क उठाए हुए ही अनेक बवडर थे। वैसे भी प्रजा के हित का ध्यान रख स्वय राम का हो जाना उचित है। राम मुसकराए आशा है मरी प्रिया न तो आपत्ति करेगी न बाधा देगी।

परिचारिकाएँ भोजन ले आयीं।

न आपत्ति न बाधा। सीता बोली किंतु आपको दिनभर के काय के पश्चात भूखा तथा थकात घर लौटते देखकर मुझे कष्ट अवश्य होता है। यदि आपके कार्यस्थल पर भोजन तथा थोड़े आराम की व्यवस्था हो पाती तो अपने पति को सत्कार करते देख मुझे असीम तृप्ति होती।'

व्यवस्था तो हो सकती है पर भोजन के लिए राम लौटकर सीता के पास ही आना चाहता है। राम के चहरे पर कौतुक का भाव था और सीता के साहचर्य के बिना विश्राम है कहां!

तो मुझे पथक काय देने के स्थान पर अपने ही साथ रखा कीजिए। मैं भी थक-हारकर सध्या समय भूखी लौटू तो सार्थकता का सुख पाऊं। मुझे तो हल्के और संक्षिप्त काय देकर बहला दिया जाता है जैसे मैं किसी योग्य ही नहीं। काय केवल राम के लिए हैं या बच जाए तो देवर लक्ष्मण के लिए।'

राम गंभीर हो गए ठीक कहती हो सीते! तुम्हें अपने योग्य काय अवश्य मिलना चाहिए अन्यथा तुम्हारी समस्त ऊर्जा निष्क्रिय रहकर सड जाएगी। पर कठिनाई यह है कि इस समाज ने मान लिया है कि स्त्री घर से बाहर तभी कोई काय करेगी जब पुरुष मृत पगु अथवा अनुपस्थित होगा। प्रयत्न में हू कि शीघ्रातिशीघ्र तुम्हें तुम्हारा उचित स्थान दे सकू।'

सहसा राम चुप हो गए। उनकी दृष्टि सीता के चेहरे पर ठहरकर कुछ ढूढ रही थी। उन्हें लग रहा था सीता अब पहले जैसी स्वस्थ संतुलित नहीं रह गई थी। वे कुछ असहज थी।

'क्या बात है सीते?'

समाज में मेरा जो स्थान और उपयोगिता है वह समझाने पिछले अनेक दिनों से कुछ वृद्धाएं मेरे पास आ रही हैं।'

राम को समझने में देर नहीं लगी।

उन बेचारियों पर दया ही करनी चाहिए सीता! उनका मानसिक क्षितिज इससे अधिक व्यापक नहीं है"

किंतु '

किंतु क्या?

अब माता कौसल्या ने भी इंगित किया है। वे गोद में पौत्र संतान को उत्सुक हैं।'

राम सीता को देखते रह गए। वे सीता की पीड़ा समझ रहे थे। यह बात आज पहली बार नहीं उठी थी। चार वर्षों के दाम्पत्य जीवन में ऐसे प्रसंग अनेक बार आए थे। माता कौसल्या की पौत्र के प्रति उत्सुकता भी वे समझते थे—जिस समाज में मनुष्य पुत्र-पौत्र के जन्म से ही सौभाग्यशाली माना जाता है, जहां व्यक्ति अपने कर्मों से अधिक महत्त्व अपनी कुल परंपरा को आगे बढ़ाने को देता है, वहां यदि माता कौसल्या पौत्र मुख दर्शन को व्याकुल हों तो आश्चर्य की बात क्या है। आश्चर्य तो यह था कि अभी तक पिता की ओर से उन्हें ऐसा कोई संकेत नहीं मिला था और न ही उनके दूसरे विवाह की बात उठाई गयी थी।

कदाचित् ये सारी कुल-वधुएं, इतने अंतराल के पश्चात भी, संतान न होने का दोष सीता की अक्षमता को देती होंगी। जिनके विचार-संसार में विवाह के एक वर्ष के भीतर संतान उत्पन्न न करना वंध्या होने का प्रमाण-पत्र हो, वे सीता को चार वर्षों के पश्चात भी कुछ न कहेंगी—इतनी अपेक्षा उनसे नहीं की जानी चाहिए। आक्षेप तो होंगे ही—सीता पर हों या राम पर हों। उनसे बचना संभव नहीं है। किंतु यदि राम आक्षेपों से बचने के लिए ही कर्म करने लगें तो वे एक काम भी अपनी इच्छा से, स्वतंत्र रूप में नहीं कर पाएंगे। आक्षेपों से बचने के प्रयत्न में वे समाज की सबसे पिछड़ी हुई मानसिकता के दास हो जाएंगे। नहीं! राम को अपने चिंतन के अनुसार, अपनी इच्छा से चलना होगा। किसी के कुछ कहने के कारण आवेग अथवा प्रतिक्रिया में राम कोई निर्णय नहीं लेंगे

संतान के जन्म से पहले उसके स्वागत के लिए माता पिता की परिस्थितियां अनुकूल होनी चाहिए। वे भौतिक सुविधाओं, शारीरिक तत्परता तथा अनुकूल मानसिकता के साथ प्रस्तुत हों तो ही संतान के साथ न्याय हो सकता है। संतान को जन्म देने के पश्चात् माता पिता को लगे कि उनके पास संतान के लिए समय नहीं है, उनके पास अपनी अन्य गंभीर चिंताएं या महत्त्वपूर्ण लक्ष्य हैं, बच्चे उन्हें अपने मार्ग की बाधा लगने लगें और वे उन पर झल्लाते रहें तो यह संतान के साथ न्याय नहीं होगा। उन्हें **पूर्णत**

दासियो को सौंपकर सतान के मन म प्रथियां पदा करने और उचित व्यवहार न कर पाने पर दासियो के प्रति मन म कटुता पालन स क्या लाभ? धन के बल पर दास-दासियां निम्न आचाय उपलब्ध करा दने भर स, सतान के प्रति माता पिता का दायित्व पूरा नही हो जाता। सतान को माता पिता की भौतिक सुविधाओ क साथ, उनका समय, उनका शरीर उनका मन, उनकी आत्मा—प्रत्यक वस्तु की आवश्यकता होती है

राम की मानसिकता अभी सतान क लिए अनुकूल नहीं है। अयाध्या की स्थिति स्थिर नही है। इन दिनो सम्राट की कायनीति सदा अप्रत्याशितता की ओर प्रवत्त रहती है। प्रतिदिन कुछ न-कुछ नया घटित हाता रहता है जिसस कोई-न कोई बवडर उठना ही रहता है। जबुद्वीप का राजनीतिक भूगोल रोज़ नई राज्य-सीमाए बना बिगाड रहा है। समथ जन मानवीय आदर्शों स पतित हो रह हैं। अनेक पिछडी जातियां भूखी नगी रुग्ण, असहाय और अकाल पडी यातनाए सह रही हैं। बहुत प्रयत्न करने पर भी ऋषि उन तक अपना ज्ञान जागरूकता और संस्कार नही पहुचा पा रहे हैं और राक्षसा के हाथो प्रतिदिन वन्य-पशुओ के समान मारे जा रहे हैं।

राम ने विवाह किया है यद्यपि विश्वामित्र ने उन्ह रघुवंशियों क पत्नी मोह के अतिरेक के विषय म स्पष्ट चेतावनी दी थी। पर पत्नी सदा माग की बाधा ही नही होती। वह सह-यात्री है—माग की सहायिका भी हा सकती है। सोच-समझकर ही सह-यात्री चुना जाए ता सहायक होता है बिना सोच समझे चुना जाए तो स्यायी सिर दद। सीता से उन्हें विघ्न की कोई आशका नही है

तो क्या सतान सदा विघ्न-स्वरूप ही होती है?

राम का मन कहता है सतान माग की बाधा नही है किंतु माता पिता की पूव न्यस्तता तथा अन्य-लक्ष्य सिद्धता अवश्य सतान के माग की बाधा हो जाती है। सिद्धाश्रम स मिथिला जात हुए माग म पूछा गया ऋषि विश्वामित्र का प्रश्न बहुधा उनक सम्मुख आ खडा होता है ऐसा क्यो है राम! कि अपना घर फूके बिना व्यक्ति परमाथ की राह पर चल ही नही सकता?

स्वार्थपरक सामाजिक व्यवस्था की इस द्वन्द्वात्मकता को राम ने सदा मन म रखा है। इसम परिवार तथा समाज का स्वार्थ प्राय विरोधी है एक के लिए दूसरे का त्याग करना पडता है। राम नही चाहते कि उनके द्वारा बहन सामाजिक दायित्व के पालन के कारण उनके सगे होने का दड उनकी सतान को मिले। व नही चाहत कि उनकी सतान बडी होकर यह कहे कि उनका दुर्भाग्य यह है कि उनका पिता सामाजिक जीवन म ईमानदारी से मग्न है या यह कि अपने जन-नायक पिता की ओर से सदा उन्हें उपेक्षा ही मिली है या यह कि उनके पिता के पास सब के लिए समय है, केवल अपनी पत्नी और बच्चो के लिए नही है।

इसका क्या अर्थ—क्या राम समझते हैं कि जब जीवन म अन्य कोई काय नही रहेगा जब व सब ओर से अवकाश प्राप्त कर लेंगे तो ही सतान की बात सोचेंगे? क्या ऐसा समय भी आएगा? जीवन म कुछ न-कुछ तो लगा ही रहता है। जब जीवन म इतना कुछ—परस्पर समान और विरोधी साथ-साथ चलता रहता है, तो सतान भी उसी वविध्यपूर्ण जीवन का एक अश बनकर क्यो नही चल सकती। नही राम जीवन के महत्त्वपूर्ण कामों से अवकाश प्राप्त कर, वृद्धावस्था म सतान को जन्म देने की बात नही सोचत। सतान के जन्म का भी उचित समय होता है ताकि व्यक्ति ठीक समय से उनका पालन-पोषण कर उन्हें उनके अपने पैरो पर खडा कर दे। हा राम कुछ अधिक मानसिक अनुकूलता तथा परिस्थितियों की स्थिरता की प्रतीक्षा कर रहे हैं। विवाह के पश्चात पाच-सात वष सतान न हो तो कोई आसमान नही गिर पडेगा। यदि वे विवाह ही रुककर करत तो? कई लोग पतीस चालीस वष क वय म विवाह करत हैं। वे तो अभी कुल उनतीस वष क हैं। व सतान क लिए दो चार वष और प्रतीक्षा कर सकत है

और फिर, सतान को इतना अधिक महत्त्व दन का भी क्या अथ कि जीवन के प्रत्येक धम स सतान अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाए। मनुष्य का जीवन स्वय कम करने के लिए है अथवा वश-परपरा को आग बढान का माध्यम मात्र? राम का जीवन कम क लिए है। बच्चे उन्हें भी अच्छे लगते हैं—वात्सल्य उनक मन म भी है किंतु अपने उत्तराधिकारी की

प्राप्ति ही उनव जीवन वा एकमात्र लक्ष्य नही है। उन्होने अपन लिए कोई सपत्ति अर्जित नही की है, जिसव लिए उन्ह उत्तराधिकारी की निपट आवश्यकता हो। सपत्ति व्यक्ति की नही समाज की होती है। साम्राज्य स्थापित करने की उनकी कोई आकांक्षा नही है। अयोध्या का राज्य उन्हें ही मिलगा—यह भी निश्चित नही है। अधिक सभावना यही है कि राज्य उन्ह नही मिलगा। पिंडदान इत्यादि के लिए पुत्र की कामना उन्ह नही है। स्वग किसने देखा है, और पुनज म का ही क्या प्रमाण है। यदि स्वग है और वह व्यक्ति को मिलता भी है तो वह उन्ह अपन कर्मों स मिलेगा इनके लिए उन्ह सतान की आवश्यकता नही है।

सतान यदि उन्ह चाहिए ता केवल अपनी वात्सल्य की तप्ति क लिए। वे प्रतीक्षा कर सकते हैं।

किंतु सीता सीता की क्या इच्छा है ? कही व अपन विचार सीता की इच्छा के विरुद्ध तो उन पर आरोपित नही कर रह

हाथ धो लें आयपुत्र ! '

सीता सभल चुकी थी। व शात और सुव्यवस्थित लग रही थी।

प्रिये ! कदाचित् तुम्ह मानसिक क्लश पहुचे किंतु राम का स्वर गभीर था समस्या का समाधान उसक साक्षात्कार म हाता है '

आप निश्चित रह।' सीता मुसकराइ अब मैं दुबलता नही दिखाऊगी।

ऐसा तो नही सीते ! कि मरी चिंतन-पद्धति क कारण तुम्ह अपना अप्राकृतिक दमन करना पड रहा हो ? कुल-वृद्धाओ को छोडो। किंतु तुम्हारी इच्छा

'आपको आज तक मेरी इच्छा का ही पता नही है क्या ?' सीता स्थिर ही नही दृढ थी, 'ठीक है मुझे अभी अयोध्या म अपने मनोनुकूल काय नही मिला है किंतु मैं इतनी भी खाली नही हू कि शिशु-पालन क बिना दिन न कटता हो।

तुम्हार जीवन म सतान का कोई महत्त्व नही है ? राम मुसकरा र थे।

'है। पर इतना नहीं कि अपने जीवन का सारा ताना-बाना उसी को केन्द्र म रखकर बुनू। सतान की ऐसी भी क्या जल्दी कि फिर उसके पालन के लिए किसी सम्राट सीरध्वज का खेत ढूंढना पड़े। मैं अभी प्रतीक्षा कर सकती हू।

राम मौन हो गए। बात विचारा तक ही नहीं रही थी, अचानक ही मीना की छिपी वेदना बोल उठी थी। राम भीग उठे किंतु उन्हें भावुकता म बचना होगा। उन्होंने स्वय को सभाला

'प्रतीक्षा चाहे कितनी ही लबी हो ?"

"हा!"

'फिर तो कुल-वद्धाओ के आक्षेप-उपालभ भी सुनने ही पड़ेंगे।"

'सुन नहीं रही क्या ?'

राम मुसकरा पड़े।

परिचारिका ने बाधा दी, 'आय की अनुमति हो तो राजगुरु को सूचित करू कि आप उनसे मिलन को प्रस्तुत हैं। वे आपके भोजन कर लेन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

सीता सावधान हो गयीं।

राम के गभीर स्वर म प्रताडना का भाव था, 'गुरुदव प्रतीक्षा क्या कर रहे हैं सुमुखि ? उन्हें प्रतीक्षा कराने का अधिकार किसी को नहीं है।'

क्षमा करें कुमार!' सुमुखी न सिर झुका लिया 'यह उनकी अपनी इच्छा थी।

राम न द्वार तक जाकर अगवानी की। गुरु को आसन पर बैठा उन्होंने हाथ जोड दिए, क्षमा करें गुरुदेव! कह नहीं सकता किसके प्रमाद के कारण आपको प्रतीक्षा करनी पड़ी।'

गुरु मुसकराए, 'उद्विग्न न हो राम! जो कुछ हुआ मेरी इच्छा स हुआ है।

"पर क्यो ? राम सहज नहीं हो पा रहे थ।

'राम!' वसिष्ठ पूणत शांत थे अयोध्या म कौन नहीं जानता कि राम जन-काय मे कितना व्यस्त है। पुत्र! मैं अयोध्या से बाहर नहीं हू।

यह जानकर कि तुम प्रात के गए अब लौटे हो, और उस समय दोपहर का भोजन कर रहे हो जब अन्य लोग सध्या के भोजन की तैयारी कर रहे हैं—बाधा देकर मैं पाप का भागी क्यो बनता। पर इस विषय को अधिक न खीचो। मैं शुभ और महत्त्वपूर्ण सूचना लाया हू।'

"कैसी सूचना है गुरुवर? सीता ने पूछा।

पुत्री! आज राज-परिषद ने एकमत से निर्णय किया है कि कल प्रात राम का युवराज्याभिषेक किया जाएगा।'

सीता का स्वर हर्षातिरेक से जैसे भर्रा उठा कल प्रात?

हा पुत्री! गुरु बोले समाचार अत्यन्त गोपनीय है। अभी तक राजमहल में यह सूचना प्रसारित नही की गयी। प्रयत्न यही है कि यथासभव कम से कम लोगो को ही मालूम हो। समाचार तुम्हारे महल से बाहर न जाए तो अच्छा है। तुम लोग प्रस्तुत रहो। पुत्र! अभी जाकर सम्राट से सभा भवन में भेंट करो। मैं प्रबध करने जा रहा हू। रात्रि से पूर्व फिर लौटूगा। कुछ कर्मकाड का विधान करना होगा

गुरु उठ खडे हुए।

एक और आकस्मिक घटना'—राम जैसे भाव शून्य हो गए थे। उन्होने यान्त्रिक ढग से गुरु को प्रणाम कर उन्हें विदा किया।

सीता ने अपने उल्लास से बाहर निकल राम को देखा—राम न प्रसन्न थे न उदास। वे गभीर थे—चिंतन में मग्न प्रश्नो से जूझते हुए भीतर की उथल पुथल में लीन।

क्या हुआ राम?

कुछ विशेष तो नही।'

आप प्रसन्न नही है?

प्रसन्नता स्पष्टता से आती है। मैं अपने मन में स्पष्ट नही हू।

क्या?'

एक ओर विपरीत कर्तव्यो ने द्वद्वो के ज्वार उठा दिए हैं और दूसरी ओर मुझे यह युवराज्याभिषेक अत्यन्त असहज लग रहा है।"

रघुकुल में ज्येष्ठ पुत्र का युवराज्याभिषेक असहज होता है क्या?' सीता बोली।

"नही।" राम का स्वर मन की गुत्थियों से भारी था। "किंतु गुरु का अकस्मात आकर ऐसा महत्त्वपूर्ण निर्णय गोपनीयता से सुनाना और उठकर तुरत चल जाना। इतना ही नहीं आज राज-परिषद् का निर्णय करना और कल प्रात अभिषेक हो जाना। इस भगदड का कारण? ऐसे समारोह महीनों की तैयारी के पश्चात होते हैं। सारे राज्य मे घोषणाएं होती हैं। समस्त मित्र राजाओं सबंधियो ऋषियो आचार्यों, सामतों श्रेष्ठियो आदि को निमंत्रित किया जाता है। पर कोसल के युवराज का अभिषेक गुप्त रीति से होगा—सबकी दृष्टि से बचाकर? रात रात म कल प्रात तक कितने लोगों को निमत्रण जा सकेगा? कितने लोग अयोध्या पहुंच सकेंगे? सोचो तो अन्य सबधी तो दूर—सम्राट सीरध्वज तक को निमत्रण नही भेजा गया। स्वय भरत शत्रुघ्न भी अयोध्या म उपस्थित नही।

आप ठीक कह रहे हैं।" सीता भी गभीर हो उठी, "आप सम्राट को मिल लें। सभव है व कोई उपयुक्त उत्तर दे पाए।"

"मां को सूचना दे दो। मैं पिताजी से मिलकर आता हू।"

रथ चला तो राम ने अपने हृदय को टटोला।

गुरु के आने के बाद से उनका मन विभिन्न प्रश्नो और गुत्थियों म उलझा हुआ था—पर बात उन गुत्थियों तक ही सीमित नही थी। वह तो आकस्मिक प्रतिक्रिया मात्र थी—झटके म छलक आए, पानी के घूट-सी। सोचने को तो और भी बहुत कुछ था।

उन्हें राज्य दिया जा रहा था। क्षत्रिय शासन-दण्ड ग्रहण कर प्रजा का पालन नही करेगा तो और कौन करेगा। यह उनका कर्तव्य था। राज्य का अधिकार भोग के लिए नहीं कर्तव्य-पालन के लिए ही था। राज्यभार छोड़ना कर्तव्य से मुह मोड़ना था। आज यह दायित्व उनके कधों पर डाला जा रहा है तो राम उसका तिरस्कार नही कर सकते।

किंतु राम जानते हैं कि सम्राट के विवाहों का अपना इतिहास है। कैकेई के विवाह की शर्त थी कि उसका पुत्र ही कोसल का युवराज होगा। आरभ म कैकेयी अपनी बात पर बहुत दृढ़ रही थी किंतु धीरे-धीरे वह रघुकुल की मानव-जनित परपराओं के अनुकूल होती गयी थी, और अब मां

विरोध भूलती गयी थी। राम के प्रति उसका विरोध समाप्त हो गया था कैकय नरेश द्वारा सम्राट से लिया गया वचन भी वह भूल गयी थी। क्रमश, राम के सामने कैकयी का चरित्र उदघाटित हुआ था। अद्भुत थी कैकेयी! उसके हृदय में विष तथा अमृत के सरोवर एक साथ विद्यमान थे। प्रश्न केवल यह था कि किस संदर्भ में उसके हृदय का कौन सा सरोवर उद्वेलित होता है। सदय होती तो वह पूर्ण अमृत होती तब कल्पना भी नहीं की जा सकती थी कि रुष्ट होने पर कैकेयी तनिक-सी कठोर भी हो सकेगी। किंतु जब उसके मन का विष-सरोवर उद्वेलित होता, तो वह इतनी क्रूर हो जाती थी कि उसमें कोमलता का एक कण ढूंढना भी असंभव हो जाता।

केकय-नरेश ने सम्राट से वचन लिया था कि उनका नाती कोसल का युवराज होगा। कैकेयी का पुत्र भरत था राम नहीं। यह अन्य बात थी कि कैकेयी ने सायास उस वचन को भुला दिया था। आरंभिक कटुता के बीत जाने पर कैकेयी ने एक बार जो राम को पुत्र का स्नेह दिया तो वह भरत और राम में भेद करना भूल गयी। उसने कई बार अपने मुख से राम को अयोध्या का भावी युवराज कहकर पुकारा था।

किंतु सम्राट द्वारा बरती जा रही यह गोपनीयता राम के मन में संदेह उत्पन्न कर रही थी। भरत अयोध्या में नहीं है। उसकी अनुपस्थिति में इस त्वरित ढंग से राम का युवराज्याभिषेक क्या अर्थ रखता है? सम्राट ने फिर अपनी घबराहट में बिना समझे-बूझे कोई विकट कृत्य तो नहीं कर डाला?

राम ने राज-सभा में सम्राट के निजी कक्ष में जाकर पिता के चरणों में प्रणाम किया।

सम्राट ने गदगद स्वर में आशीर्वाद दिया शत्रुओं पर विजय पाओ, पुत्र!

सम्राट अत्यंत चिंतित दीख पड़ते थे—अस्त-व्यस्त और परेशान कदाचित थोड़े-से भयभीत भी। सम्राट् के निजी सेवकों को छोड़ अन्य कोई भी व्यक्ति वहां उपस्थित नहीं था। सभा विसर्जित हो चुकी थी। सारे मंत्री और सामंत जा चुके थे। अकेले सम्राट किसी चिंता में डूबे खोए

खाए-से बठे थे। राम को सम्राट की आकृति पर उस चिंतित प्रहरी के-से भाव दिखे जो अपने सरक्षण मे रखी गयी किसी वस्तु की सुरक्षा के लिए बहुत चिंतित हो और चाहता हो कि कुछ अयथा हो जाने से पहले किसी प्रकार वह उस वस्तु की उचित व्यवस्था कर दे

'सम्राट चिंतित हैं।" राम ने बहुत कोमल स्वर म बात आरभ की।

"सम्राट नही एक पिता चिंतित है, पुत्र!" दशरथ बोले, 'आज मैंने राज-परिषद मे तुम्हारे युवराज्याभिषेक का प्रस्ताव रखा था। सभा ने एकमत से उसका समथन किया है। मैं चाहता हू कि यह अभिषेक कल प्रात ही हो जाए। काय जितना शीघ्र हो जाए उतना ही अच्छा।'

राम ने अपनी दृष्टि पिता की आखो पर टाग दी पिताजी! इस अपूव शीघ्रता का कारण? जिस ढग से मेरा अभिषेक हो रहा है उसम कुछ अनुचित होने की गध है जस धक्के मे न हुआ तो फिर यह रह ही जाएगा।'

'मैं जानता था। इसीलिए तुम्ह बुलवाया था। दशरथ का स्वर कातर था, प्रश्न मत करो राम! इस समय कुछ मत सोचो, कुछ मत पूछो। जो कह रहा हू करो। पुत्र! मनुष्य की बुद्धि बहुत चचल होती है, और परिस्थितिया बलवान। इससे पहल कि मेरी चित्त-वत्ति बदल जाए, अथवा मैं परिस्थितियों के सम्मुख अवश हो जाऊ, और यह अवसर हाथ स निकल जाए तुम अपना युवराज्याभिषेक करवा लो।

पिताजी!'

'शका मत करो राम! मैं इस समय उत्तेजना और चिंता मे विक्षिप्त हो रहा हू। दिन रात दुस्वप्नो से घिरा हुआ हू। अवकाश नही है। गुरु जैसा कह सीता-सहित वैसा ही व्रत-पालन करो। जाओ।

सम्राट की इस मन स्थिति मे उनके सम्मुख रुकना या उनस प्रश्न करना सभव नहीं था।

राम लौट पड़े।

पिता को आशका थी कि राम का युवराज्याभिषेक कदाचित् न हो पाए उन्ह विघ्न दिखाई पड रहे थे। क्यों आशका थी पिता को? उन्हें कौन-सी बाधाए दिखाई पड रही थीं? दुस्वप्न! पिता न कुछ दुस्वप्नों

की चर्चा की थी—कौन से दु स्वप्न उन्हे सता रहे थे? निश्चित रूप से पिछले तीन सप्ताहो मे सम्राट ने जो कुछ किया था वह उन दु स्वप्नो का ही परिणाम था।

पिता के दु स्वप्न और राम के द्वद्व! पिता के सम्मुख प्रश्न यह था कि राम का युवराज्याभिषेक हो पाएगा या नही—कही अभिषेक का यह अवसर छिन न जाए। किंतु राम के सम्मुख प्रश्न था—वे अभिषेक स्वीकार करें या नही? विश्वामित्र की मूर्ति प्रश्न चिह्न बनकर बार बार उनके सम्मुख आ खडी होती थी 'नही आओगे राम? तुम रघुवंशी होकर अपना वचन भंग करोगे? क्या है राम तुम्हारे जीवन का लक्ष्य? सोचा! तुम्हारा जीवन सुख भोग के लिए नही है। उसके लिए अन्य लोग हैं। तुम भिन्न हो। तुम साधक हो राम! राम! तुम शासन भार नही लोगे तो भरत उसे स्वीकार कर लेगा, लक्ष्मण कर लेगा। पर तुम वन नही गए तो कोई नही जाएगा—न भरत न लक्ष्मण न शत्रुघ्न।

पिता एक बात कहते है, विश्वामित्र दूसरी। इसी ऊहापोह के मध्य किसी समय स्वय राम के अपने मन का भय बोलने लगा—सिंहासन स्वीकार कर लिया एक बार सम्राट बनकर बैठ गया तो मेरी मानवीय दुर्बलताए नही जाग उठेगी क्या? सुविधापूर्ण विलासी जीवन मे लिप्त हो बहाना की आड मे स्वय को प्रवचित नही करूगा? मोह-त्याग बडा कठिन होता है। जब तक मोह का रोग न लगे तभी तक ठीक यदि मोह-त्याग मे मैं सफल हो भी गया तो राज्य के विभिन्न उत्तरदायित्वो से मुक्त कर कौन मुझे उन गहन वनो मे जाने देगा! न्याय और समता को मानवता और उच्च चिंतन को, ज्ञान और विद्या को एक रक्षक की प्रतीक्षा है और उस रक्षक का दायित्व सभालने का वचन राम ने विश्वामित्र को दिया था। सम्राट बन अयोध्या में बैठकर सेना की सहायता से यह कार्य नही हो सकता। वेतनभोगी सेनाओ की सहायता से मानव-जाति का भाग्य नही बदला जा सकता। वह तो जन उद्बोधन से ही सभव होगा। अभिषेक हो जाने से वन जाने का अवसर कभी नही आएगा।

यह कैसे सभव होगा?

पिता की इच्छा और ऋषि को दिया गया राम का वचन
अयोध्या के सिंहासन का दायित्व और वन के रक्षक का कर्तव्य
दो क्तव्य और दो दिशाए
राम की दुविधा का कोई अत नही।

राम को देखते ही सीता उठकर उनकी आर आयी।

मिल आए ?'

हा प्रिय !

"किसलिए बुलाया था ?

"यह आदेश देन के लिए कि कल अभिषेक करवा लू। राम का स्वर उत्साहशून्य था।

आपन उनके सामने प्रश्न रखे ?'

वे कुछ भी सुनने की मन स्थिति म नही थे।'

राम की दृष्टि सीता के चेहरे पर टिक गयी। सीता की वाणी और आकृति स शकाओं का सारा कुहरा उड गया था। उनका चेहरा आवृत वाष्प को पोंछ दिए जाने के पश्चात अधिक निखर आन वाले दपण के समान चमक रहा था। इस उल्लास के सामने क्या कोई सदेह टिक सकता था! क्या राम उनके सामने अपन मन का द्वद्व रख सकते थे! अपने दु स्वप्ना म डूबे सम्राट प्रश्न सुनन की मन स्थिति मे नहीं थे तो क्या पति के युवराज्याभिषेक के उल्लास म मग्न सीता राम के द्वद्व या विश्वामित्र क आह्वान को सुनन की मन स्थिति म थी? ऐसी बात सुनते ही उनका उल्लास बिखर नही जाएगा? राम इतन क्रूर कम हो

सीता स ही नहीं कह सकने, तो राम अपने मन का द्वद्व किसस कहें?

सीता का ध्यान न राम की भाव शून्य आकृति की ओर था, न उनके मस्तिष्क म विपरीत दिशाओं म बहन वाल परस्पर टकराते हुए झभावातों की ओर। व अपने उल्लास की लहर मे बहती हुई बोलीं 'मैंन मां को समाचार दिया। प्रसन्नता के मारे उनकी जो स्थिति हुई उसके विषय में आपको क्या बताऊ। पहले तो खड़ी-खड़ी देखती रहीं। फिर

मुझे वक्ष से लगा लिया। भीच भीचकर प्यार करती रही और अत म मेरे कधे पर सिर रखकर रो पडी। बाली सारा जीवन मैंने इसी अवसर की प्रतीक्षा की है बहू! जानती थी सम्राट की ज्यष्ठ पत्नी होने के नात मैं साम्राज्ञी हू, मेरा पुत्र सम्राट का ज्येष्ठ पुत्र है। राम योग्य वीर कतव्य परायण तथा लोकप्रिय है। फिर भी आज तक स्वय मुझे कभी यह विश्वास नही हुआ कि किसी दिन मेरा राम सचमुच युवराज बनेगा। यदि मैं बताऊ कि इस राज प्रासाद म किस किस प्रकार मेरा अपमान और उपक्षा हुई है, ता काई मेरा विश्वास नही करेगा। किंतु आज मैं कितनी प्रसन्न हू। मेरा राम युवराज होगा। मेर सारे दु ख दूर हो जाएग। मेरी बहू इस कुल म वसी उपेक्षित नही रहेगी जैसी मैं रही। मेरे पाते वसे निरान्त नही होग जसा अपने शैशव म मेरा राम हुआ। मैं कैसे बताऊ राम! कि कितनी प्रसन्न थी मा। उन्होंने तुरत माता सुमित्रा और देवर लक्ष्मण को समाचार भिजवाया। व सब लोग अत्यत प्रसन्न थे। मा भगवान से निरतर प्राथना कर रही हैं कि वे उनके पुत्र का युवराज्याभिषेक निर्विघ्न करवा दें ताकि इस राज प्रासाद म युधाजित का आतक समाप्त हा। मा रात भर निराहार साधना करेंगी। उन्होन मुझसे भी प्रात तक उपवास करने का कहा है। उनके मन म अब भी अनेक आशकाए हैं।

सीता अपनी बात कह चुकी। राम तब भी कुछ नही बोले।

क्या बात है आप अतिरिक्त रूप से मौन हैं?

मुझे लगता है सीत!" राम मद स्वर मे बोले इस कुटुब म अनेक सदेह शकाए आशकाए विरोध द्वन्द्व ईर्ष्याए स्वाथ द्वष और जाने क्या-क्या विषले जीव-जतुओ के समान मौन सो रहे थे। आज मेर युवराज्याभिषेक की चर्चा स व मारे जीव-जतु जाग उठे हैं। वे परस्पर लडेंगे। इस राज प्रासाद म बहुत कुछ विषला हो जाएगा। इधर मा के मन मे आशकाए हैं उधर पिताजी के मन म। और मैं कसे कह दू सीते! कि मरे मन म काई आशका नही है।'

आप '

हा प्रिये! आशकाए ही नही, द्वन्द्व भी

द्वार पर परिचारिका प्रकट हुई, "पूज्य सुमंत्र राजकुमार के दर्शनार्थ उपस्थित हैं।'

राम चौंके। सुमंत्र! सुमंत्र के आने का अर्थ है—सम्राट् का असाधारण बुलावा। पर राम अभी तो सम्राट् से मिलकर आए हैं।

सीता का चेहरा भी कांतिहीन हो उठा। सुमंत्र क्यों आए? क्या कहलवाया है सम्राट ने ?

तात सुमंत्र!'

"हां, राम!" सुमंत्र ने अभिवादन किया 'सम्राट ने मुझे आदेश दिया है कि मैं आपको यथाशीघ्र उनके समीप ले चलूं। मैं रथ लेकर आया हूं।'

राम ने एक अर्थपूर्ण दृष्टि सीता पर डाली।

सीता स्तंभित खड़ी थीं।

सम्राट ने राम को अपने महल में बुलाया था।

सुमंत्र द्वार पर ही रुक गए, और राम ने भीतर जाकर पिता को प्रणाम किया। इस बार दशरथ उन्हें उतने हारे हुए नहीं लगे। थोड़ी देर पूर्व सभा भवन में देखे गए, और अब उनके सम्मुख बैठे सम्राट में पर्याप्त अंतर था किंतु पूरी तरह स्वस्थ वे अब भी नहीं लग रहे थे।

दशरथ ने राम को अपने समीप रखे गए मंच पर बैठने का संकेत किया।

'तुम्हें आश्चर्य होगा, राम! कि मैंने तुम्हें इतनी जल्दी क्यों पुनः बुला लिया। आश्चर्य की बात तो है किंतु इस समय मैं आपे में नहीं हूं। मैं कितना भी प्रयत्न करूं, अपने मन की उथल-पुथल तुम्हें नहीं छिपा सकता। अपने जीवन में दुर्बलताओं से हारा थककर, मैंने अनेक अन्यायपूर्ण कार्य किए हैं। पर अब मैं नहीं चाहता कि किसी भी स्वार्थ से, तुम्हारे स्थान पर किसी और को युवराज पद दूं। कल तुम्हारा युवराज्याभिषेक होना आवश्यक है। मैंने थोड़ी देर पूर्व तुम्हें प्रश्न पूछने से मना किया था। प्रश्न अब भी मत पूछना, पुत्र! पर मेरी बात मानो। गुरु वसिष्ठ तथा अपनी माता के कहे अनुसार, आज रात धार्मिक

आचरण तो करो ही, किंतु राम ! साथ ही आज रात अपनी रक्षा के प्रति असावधान मत रहना। मैं चाहता हूं तुम्हारे सुहृद, तुम्हारे शुभाकांक्षी तुम्हारे प्रिय लोग, आज रात जागकर तुम्हारी रक्षा करें या तुम्हें घेर-कर सोए।'

राम ने विस्मय से पिता को देखा।

आप इतने कातर क्यों हैं पिताजी ! वे स्थिर वाणी में बोले यदि आप किसी निश्चित संकट के विषय में जानते हैं, तो स्पष्ट बताएं। काल्पनिक आशंकाओं से पीडित न हों। इसे आत्मश्लाघा न मानें आपका राम किसी भी भयंकर से भयंकर शत्रु के विरुद्ध अपनी रक्षा करने में समर्थ है।

तुम्हारी क्षमता में मुझे तनिक भी संदेह नहीं। किंतु, पिता का मन असावधान नहीं रहना चाहता राम ! तुम्हारी रक्षा का पूर्ण प्रबंध होना चाहिए। यदि तुम्हें आपत्ति न हो तो मैं अपने अंग रक्षकों की एक टुकडी भेज दूं। मेरी अपनी सुरक्षा के लिए तुम्हारा सुरक्षित रहना बहुत आवश्यक है। सारी अयोध्या में सिवाय तुम्हारे मुझे कोई ऐसा व्यक्ति दिखाई नहीं पडता जो मेरी कुशल चाहता हो।

पिताजी, मुझे क्षमा करें। राम रुक नहीं सके आपकी ये आशंकाएं मेरी समझ में नहीं आ रही और यह त्वरा भी मेरे लिए कौतुक की वस्तु है। आपका ध्यान कदाचित इस ओर नहीं गया कि भरत और शत्रुघ्न भी नगर में नहीं हैं। क्या इस अवसर पर उनका अयोध्या में होना आवश्यक नहीं है ?'

नहीं।' दशरथ खीझकर बोले 'भरत के अयोध्या में आने से पूर्व ही तुम्हारा युवराज्याभिषेक हो जाना चाहिए।'

किंतु क्यों पिताजी ?'

'शुभ कामों में अनेक विघ्न उपस्थित हो जाया करते हैं पुत्र ! उनका शीघ्र हो जाना अच्छा है। विलंब उनके लिए घातक होता है।"

राम के मन का संदेह बलवान हो उठा—निश्चय ही सम्राट को भरत अथवा कैकेयी की ओर से ही आशंका है। किंतु वे खुलकर कुछ कहना नहीं चाहते। संभव है कि पिता की आशंकाओं का कोई ठोस आधार हो

अथवा यह भी सभव है कि य वद्ध पिता के भीत मन की दुष्कल्पनाए मात्र हो।

पिता किस आवेग से यह बात कह रह हैं ! निश्चय ही उन्होने ककेयी मे इस विषय म विचार विमश नहीं किया होगा। सभव है कि चर्चा तक न की हो, और उन्ह पूण अधकार म ही रखा हो। रनिवास म किसी को भी यह समाचार ज्ञात नहीं था। स्वय माता कौसल्या का सीता न जाकर बताया था, और उन्होंने आगे माता सुमित्रा और लक्ष्मण को सूचना भिजवाई थी। जब यह समाचार उन लोगो तक स गुप्त रखा गया है तो ककेयी को अवश्य ही इस सदभ म कोई खबर न होगी

दशरथ की उत्कट इच्छा को राम अपने अनुमान से समझने का प्रयत्न कर रहे थ। आरभिक जीवन म माता कौसल्या तथा स्वय राम के प्रति की गयी उपक्षा तथा अनादर की शायद प्रतिक्रिया जागी थी सम्राट म। पहल जिस विकटता स व उनके विरुद्ध बढ़ थे अब उसी विकटता म उनक अनुकूल हो रहे थे ऐसी मन स्थिति मे पिता से राम कुछ नहीं कह सकत थे।

किंतु क्या बात इतनी-सी ही थी? क्या पिता स्वय अपन प्राणा के लिए भयभीत नहीं है? क्या उन्होने यह नहीं कहा कि सिवाय राम क सारी अयोध्या मे कोई उनकी कुशल नहीं चाहता? वे राम को सत्ता सौंपना चाहत है राम की सुरक्षा चाहत हैं—इसलिए कि राम उनकी रक्षा कर सकें। क्या पिता इस सीमा तक डरे हुए हैं कि व भरत तथा ककयी की ओर से अपन प्राणो के लिए भी आशकित हैं क्या है यह?—सम्राट की दुश्चिताए? स्वाथ? न्याय की भावना? अथवा राम के प्रति स्नेह?—

और भरत के नाना को दिया गया सम्राट का वचन? क्या पिता उस वचन को भी भूल गए हैं या वे सायास उसकी उपेक्षा कर रह हैं।

रघुकुल म जन्म लकर, दशरथ अपना वचन तोडना चाहत हैं?

क्यो?

राम को राज्य का अधिकार देन के लिए?

तो राम कह दें कि व पिता स सहमत नहीं। जिस अभिषेक क लिए पिता इतन आतुर है कि न उन्ह धम सूझता है न न्याय—न औचित्य न मर्यादा। वह अभिषक राम को तनिक भी उत्सुक नहीं कर पाता। च

अभिषेक का अभी टालना चाहते हैं। य थोड़े समय क लिए—किसी अ य कतव्य की पूर्ति तक के लिए—इस कतव्य को टालना चाहते हैं

पिता स्वीकार नही करेंगे।

राम क्या करें ?

जाओ पुत्र ! अब विलब मत करो। दशरथ न आदेश दिया 'मेरी बात मानने म तनिक भी प्रमाद मत करना। धार्मिक अनुष्ठाना के बीच भी अपनी सुरक्षा का ध्यान रखना। इस विषय म मैं लक्ष्मण को भी सावधान करना चाहता था किंतु भय है कि कहीं वह अतिरिक्त रूप से उग्र तथा मुखर न हो उठे। उससे सारी गोपनीयता भग हो जाएगी।

अपने द्वद्वो म उलझे किंकतव्यविमूढ़-से राम अपने महल म लौट आए। वे स्वय ही अपने-आपको पहचान नही रहे थे। यह राम का रूप नही था। राम के सम्मुख उनका माग स्पष्ट हुआ करता है लक्ष्य निश्चित होता है—दो टूक। पर आज राम के सम्मुख कुछ भी स्पष्ट नही था—कोई उनके मन की अवस्था नही समझ रहा था, कोई नही।

महल म उत्सव का-सा दृश्य था। सारी गोपनीयता के रहते हुए भी महल के प्रत्येक कमचारी को ज्ञात हो चुका था कि प्रात राम का युवराज्याभिषेक होगा। सीता के उल्लास ने गोपनीयता की चिंता नहीं की थी। वैसे भी जब प्रबंध आरभ होता है तो गोपनीयता कहा रह पाती है !

महल की सीमाओ के भीतर न केवल प्रत्येक व्यक्ति के वस्त्र बदल गए थे वरन् सब की आकृतिया भी समारोह के उल्लास से दमक उठी थी। और उन सब के मध्य सीता मन-ही मन अलौकिक आनद की बूद-बूद पीती हुई तन्मि स दीप्त आयोजन करती घूम रही थीं। पुरोहित लोग आकर बठे हुए थे और राजगुरु की प्रतीक्षा थी।

अनमने-से राम अपने कक्ष म अकेले जा बठे। क्या करें वे इन परिस्थितियो म ?—पिता ने बल देकर कहा था कि परिस्थितिया अत्यत बलवान होती हैं। क्या राम भी स्वीकार कर लें कि मनुष्य परिस्थितियो के सम्मुख विवश हो जाता है ? किंतु तब राम और दशरथ म अतर क्या होगा ? वद्ध दशरथ का हारा हुआ मन और युवक राम का असाधारण

क्या करें राम ?

पिता की आज्ञा इतनी स्पष्ट है कि उनके प्राण उसी में अटके हों। माँ का वह मुखर रुदननाद। उन्होंने अनर्थ क्यों नहीं तब—वरन् आजीवन स्नेहा उसकी प्रतीक्षा का है। माता का आत्मगौरवित मर्यादित त्याग। और माता सुमित्रा, लक्ष्मण गुरु वसिष्ठ तात सुमन्त्र—सब लोग जिनसे प्रसन्न हैं। सुयश निजरथ तथा निकट को भी कदाचित अब तक ज्ञात हो गया हो। नहीं हुआ तो कल हो जाएगा। कल प्रजा-जन को भी पता चलेगा—कैसा उत्सव मनाएंगे वे सब ! सम्राट के शासन में अब लोगों की आस्था नहीं है। फिर राम कैसे अपने दायित्व को छोड़कर भाग जाएं। पलायन, राम की प्रकृति नहीं है

किंतु विश्वामित्र ? उनको दिया गया वचन ? वन में उनकी प्रतीक्षा करते हुए ऋषिगण, वानर भालू गरुड़ गिद्ध वानर भील शबर किरात नाग और निषाद । उनके प्रति भी तो दायित्व है राम का। उनका दायित्व केवल अयोध्या तक सीमित नहीं हो सकता। राजनीतिक सीमाएं मानवीय भावों संवेदनाओं, दायित्वों और अधिकारों को संकीर्ण कोष्ठकों में बंद नहीं कर सकतीं। राम अयोध्या के हैं—अयोध्या का उन पर भरपूर अधिकार है, किंतु अधिकार उनका भी है, जो अयोध्या में नहीं हैं।

अनिर्णय राम की प्रकृति नहीं है। किंतु आज ? राम की संकल्प शक्ति मात्र इतनी ही है क्या ?

नहीं ! राम को निर्णय लेना होगा। राम के जीवन में निर्णय परिस्थितियाँ नहीं लेतीं। राम लेते हैं। उन्हें कोई-न-कोई मार्ग निकालना ही होगा—

'सौमित्र आए थे।'' सीता ने बताया।

'हूं।'

'वे बहुत प्रसन्न थे। इतने प्रसन्न कि कदाचित् कोई अपने अभिषेक से भी न हो।'' सीता ने कटाक्ष से राम को देखा, ''कल प्रात: फिर आने को कह गए हैं।'

'लक्ष्मण अवश्य ही बहुत प्रसन्न होंगे ।'' राम ने जैसे अपने-आपसे

यहा।

बडे तटस्थ भाव मे राम ने धार्मिक अनुष्ठान पूरे किए, और काफी गए, रात सोने क लिए बिस्तर पर आए। प्रात जल्दी उठना है—वे जानते थ—उन्ह जल्दी सो जाना चाहिए था, पर यह मानसिक तनाव

राम अपने पलग पर लेट छत की ओर देख रहे थ। साथ क पलग पर लेटी हुई सीता, अभी थोडी देर पहले तक उनस बातें कर रही थी, किंतु दिन भर की थकान के कारण बातो क बीच म ही अचानक सो गयी थी। कितनी प्रसन्न थी सीता—निश्चित भी। निश्चित होन के कारण ही वे सो पायी थी। सोयी भी कैसे जस थका हुआ बच्चा भोजन करते-करत बीच म लुढक जाए—आधा कौर हाथ म और आधा मुख म। सीता भी एस ही सो गयी—आधी बात मुख म और आधी मन म लिय लिय। पर राम को अब भी नीद नही आ रही थी। दिन भर क कामो स न केवल शरीर बुरी तरह थका हुआ था चिंताओं से मस्तिष्क भी फटा जा रहा था। आखों के पपोटे भारी थे और थकान क मारे जल रह थ—पर नीद नही आ रही थी।

क्या कर राम?

युवराज पद ठुकरा दें!

कतव्य की उपेक्षा कसे करें?

वन न जाए!

पर वह भी कतव्य है। उसकी उपेक्षा कसे करें?

तो क्या करें?

क्या?

दोनो कत यो म से एक को चुनना होगा। दोनो म से अधिक महत्त्वपूण क्या है? निश्चित रूप से वन जाना! तो उसे ही चुनना होगा। अयोध्या का शासन यदि सम्राट नही सभाल सकत तो राज-परिषद् की देख रेख म भरत सभाल सकते है। भरत स सम्राट को खतरा हो तो लक्ष्मण सभाल सकते हैं वन कवल राम ही जा सकत है।

भरत! भरत से पिता आशकित है और माता भी। क्या राम भी? नही! राम निश्चित रूप से कुछ नही कह सकते।

तो वन जाना ही तय रहा ?

हां ! राम की ओर से तय है। किंतु पिता माता सीता तथा अन्य लोगों की इच्छा ? उनकी प्रसन्नता ? राम के अभिषेक न कराने में उनका दुख ? उनकी हताशा ?

राम के मन में बैठे विश्वामित्र जोर से ठहाका मारकर हंस पड़े, "इस-उस की इच्छा और प्रसन्नता की चिंता करते रहे तो निभा चुके तुम दायित्व ! प्रत्येक उदात्त कार्य में निकट के प्रियजन सगे संबंधी सदा ही हताश हुए हैं। तुम्हारा क्या विचार है, जब दधीचि ने अपनी अस्थियां दान की थीं तो उसके माता पिता पत्नी बच्चे प्रसन्न हुए होंगे ! बहाने मत ढूंढो राम ! स्वयं को प्रवंचित मत करो।"

और सहसा जैसे राम जल उठे। एक ताप उन्हें तपाता रहा जैसे आग कच्चे घड़े को तपाती है। क्रमश: ताप क्षीण हुआ तो राम ने पाया कि वे तप चुके हैं पक्के हो चुके हैं वे निर्णय कर चुके हैं।

साथ ही एक स्वर मन में गूंज रहा था—"कोई नहीं मानेगा, राम ! न पिता न माता न सीता, न लक्ष्मण—कोई नहीं।"

किंतु इस स्वर की उपेक्षा तो करनी ही थी।

बड़ी कठिनाई से रात के अंतिम प्रहर में राम को नींद आयी। पर सोते हुए भी दायित्व के तनाव का बोझ मन पर रहा। वे अधिक देर सो नहीं पाए। प्रभात के चिह्न प्रकट होते ही उनकी नींद उचट गयी। नींद न भी उचटती तो उन्हें चारणों द्वारा जगा दिया जाता। आज युवराज्याभिषेक का दिन था, और प्रात से ही समस्त कार्यक्रम निश्चित थे। उन्हें शीघ्र ही पिता के निकट उपस्थित होना था।

स्नान कर राम जाने के लिए प्रस्तुत हुए ही थे कि उन्हें सुमंत्र के आने का समाचार दिया गया। राम चकित हुए—क्या हो गया है पिताजी को ! क्यों बार-बार सुमंत्र को भेज देते हैं ! राम को अभी तनिक भी विलंब नहीं हुआ था। वे निश्चित समय से पूर्व ही पिता के पास जाने के लिए प्रस्तुत थे ताकि उनसे अपनी बात कह सकें। फिर भी सुमंत्र आ गए। कोई साधारण

परिचारक या सारथी आया होता तो बात और थी। पर सुमंत्र—सम्राट के निजी सारथी अनेक विशेषाधिकारों से सम्पन्न। सारथी के साथ साथ उनके मंत्री सखा तथा निजी सेवक! समस्त राजनिलयों में कहीं भी बिना रोक टोक के आने जाने की सुविधा से सम्पन्न। उन्हीं सुमंत्र को पिता ने फिर भेजा है कोई महत्त्वपूर्ण बात है या सामान्य बुलावा ही। संभव है नियत कार्यक्रम में कोई नई कड़ी जुड़ी हो पिता बिना उनकी बात सुने ही काम आगे बढ़ाते जा रहे हैं। प्रबंध जितना आगे बढ़ जाएगा, राम की कठिनाई भी उतनी ही बढ़ जाएगी किंतु सम्राट की व्यग्रता!

तात! मैं आ ही रहा था।

राम ने देखा आज के सुमंत्र पिछली संध्या आने वाले सुमंत्र से बहुत भिन्न थे। उनकी आकृति पर उत्सव और समारोह का उल्लास नहीं था। उत्साहशून्य चेहरा अतिरिक्त रूप से गंभीर लग रहा था। उस पर चिंता की रेखाएं भी सहज स्पष्ट थीं। उनकी आंखों में आज ममता और प्रेम नहीं था उनमें सहज निर्मलता भी नहीं थी। वे आंखें शुष्क नीरस मरुभूमि के समान उजाड़ थीं जीवन-हीन—जैसे उनका जीवन स्रोत ही सूख गया हो। रात की सुख निद्रा के पश्चात उन्हें ऊर्जा और स्फूर्ति से भरे-पूरे लगना चाहिए था किंतु वे प्रातः के निर्वाणोन्मुख दीपक के समान थके थके लग रहे थे।

समारोह के दायित्व से दबे आप रात भर सो नहीं सके? राम का स्वर कोमल तथा मधुर था।

सुमंत्र ने कोई उत्तर नहीं दिया, अपनी अन्यमनस्कता में जैसे उन्होंने कुछ सुना ही नहीं। वे अपनी फटी फटी आंखों से प्रत्येक वस्तु के आर-पार देखते रहे। उनकी आकृति भावशून्य यांत्रिकता लिए हुए थी।

एक अटपटे मौन के पश्चात सुमंत्र बोले राम! आपका कल्याण हो। शीघ्र सम्राट के पास चलिए। सम्राट कैकेयी के महल में उनके पास हैं।' उनका कंठ अवरुद्ध होने की सीमा तक भर्राया हुआ था।

राम का आश्चर्य बढ़ गया—इतनी सुबह सम्राट माता कैकेयी के महल में कैसे पहुंच गए! पिछली शाम तक सम्राट इस विषय में अत्यन्त गोपनीयता बरत रहे थे। सम्राट की आशंकाओं का इंगित कैकेयी की ओर

ही था। यह संभव नहीं कि सम्राट वहां मंत्रणा के लिए गए होंगे। यदि सम्राट ने गोपनीयता का व्यवहार न किया होता, तो बात और थी। तभी स्थिति में कैकेयी, इस अभिषेक में माता कौसल्या से भी अधिक सक्रिय होती।

पर सुमंत्र इतने पीड़ित क्यों है?

बात क्या है तात सुमंत्र?

कुमार स्वयं चलकर देख लें।" सुमंत्र ने अपने होंठ चाप लिये थे।

राम का मन सहसा एक अन्य दिशा में सोचने लगा।

सम्राट ने समाचार गुप्त रखा था, किंतु वह गुप्त नहीं रहा होगा। किसी प्रकार कैकेयी को सूचना मिल गयी होगी। कैकेयी सम्राट के व्यवहार से क्षुब्ध हो गयी होगी। सम्राट क्षमा मांगने रानी के पास पहुंचे होंगे, और अब कैकेयी के चरणों पर सिर रखे पड़े होंगे। यह नई बात नहीं थी। कैकेयी पर सम्राट मुग्ध चाहे कितने ही क्यों न रहे हों, किंतु उस पर विश्वास उन्होंने कभी नहीं किया। अविश्वास के कारण न कैकेयी के प्रति सहज हो सके, न कैकेयी के अप्रतिम तेज के सामने अपना अविश्वास प्रकट कर सके। क्रमशः उनके मन में कैकेयी का भय बैठ गया था और उसके सम्मुख उनका आत्मविश्वास अत्यन्त क्षीण हो गया था। कैकेयी की अप्रसन्नता के भय से उससे पूछे बिना काम कर डालना और फिर कैकेयी के हाथों अपमानित होने के भय से उस काम को छिपाते फिरना सम्राट की प्रवृत्ति हो गयी थी। उसके पश्चात दीन कातर सम्राट और बिफरी हुई सिंहनी सी कैकेयी का नाटक लंबे समय तक चलता था। ऐसे नाटक राम ने इस घर में अनेक बार देखे थे। कहीं ऐसा तो नहीं कि कैकेयी ने इस युवराज्याभिषेक का विरोध किया हो, और अब सम्राट स्वयं को अक्षम पाकर सब-कुछ कैकेयी के मुख से ही कहलवाना चाहते हों? किंतु कैकेयी का राम के प्रति स्नेह... कैकेयी उनके युवराज्याभिषेक का विरोध कैसे करेगी?

कक्ष में प्रवेश करते हुए राम ने जो कुछ देखा, वह अनेक संभावनाओं पर विचार कर उनका साक्षात्कार करने के लिए तैयार होकर आए हुए

राम के लिए भी सवथा अप्रत्याशित था। आज तक उन्होंने माता तथा पिता को राजसी वेश म अत्य त गरिमापूण ढग स राजसिंहासन, मच अथवा पयक पर बठे हुए देखा था। पर आज वृद्ध सम्राट अत्यत अ यवस्थित अवस्था म आस्तरणहीन फश पर पडे थे। उनकी मुद्रा पीडित तथा करुण थी। सारे शरीर म कोई स्पन्न नही था। श्वास चलन का भी कोई प्रमाण नही था नही व सन्ना य नही थ किंतु चत य भी उह नही कहा जा सकता। वे स्थिर शव के समान पडे थ।

माता ककयी कुछ हटकर खडी थी—सीधी दडवत। चेहरे पर उग्रता कठोरता एव हिंसा क भाव थ जिनके कारण व सतुलित नही लग रही थी। वशभूषा भी सामा य नही थी। प्रसाधन स सवथा न्य। रात को सोने के लिए पहने गए कुचल हुए वस्त्रो म ही व उपस्थित थी। यह शोभा प्रिय ककयी की प्रवत्ति क अनुकूल नही था। शरीर पर एक भी आभूषण नही था। सार आभूषण फश पर जहा-तहा बिखर पड थ जस भयकर आवेश म उ हें उतार उतारकर पटका गया हो। क्श बुरी तरह बिखर हुए थे जस किसी ने रात भर उ ह नोचा खीचा हो।

दोनो की ही स्थिति राम को स्तभित कर दने वाली थी।

राम न स्वय को सभाला। उ होन दोना को प्रणाम किया, किंतु आशीवचन किसी क मुख स नही निकला।

क्या हुआ ?—राम सोच रहे थे—कोई भी बोलता नही। बस पिछले दिनो जो कुछ घटा था वह सारा कुछ इतना आकस्मिक और नाटकीय था, कि अब कोइ भी घटना विचित्र नही लगती थी।

पिताजी ! मैं उपस्थित हू। आदेश दें।

दशरथ ने क्षण भर के लिए आखें खोली राम को भरपूर दष्टि से देखा। फिर जसे राम को देख नही पाए। आखें चुरा ली। करवट बल्ली और आखें मूद ली।

क्षण भर खुली उन आखो म राम ने अथाह वेदना को मूर्तिमान देखा था। उनम क्रोध आवग क्षोभ कुछ भी तो नही था। उनम राम के लिए उपेक्षा प्रताडना या उपालभ—कोई भाव नही था। उनम तो पीडा का समुद्र हाहाकार कर रहा था— जस कोई भीतर-ही भीतर निरतर कचोट

रहा हो। उनमे ग्लानि थी, हताशा थी। उग्रता तो थी ही नही।

राम ने कैकेयी की ओर देखा—कैकेयी अतिरिक्त रूप से सख्त नज़र आ रही थी। उसके चेहरे पर दशरथ की आखों की पीडा का एक कण भी नही था। सायास उद्दडता अवश्य थी। कृत्रिम और सायास लाया गया तनाव था।

"माता!"

कैकेयी के लिए मौन बने रहना अधिक सरल था। बोलने के लिए उसे भी प्रयास करना पडा। शब्द अनाहूत नही आए। वह कठोर स्वर मे बोली, "राम! तुम्हारे पिता तुमसे बहुत प्रेम करने लगे हैं।"

"प्रेम तो मुझसे आप भी करती हैं।" राम बोले, "किंतु यह स्थिति..."

कैकेयी का तनाव कुछ कम हुआ। बोली तो उसका स्वर पहले की अपेक्षा कुछ कोमल और सहज था, "सम्राट ने एक वचन मेरे पिता को दिया था, उसकी चर्चा मैं नहीं कर रही। किंतु मेरे उपकार के बदले, शंबर-युद्ध के पश्चात उन्होने दो वर मुझे दिए थे। आज मैं वे वरदान माग रही हू और ये सूर्यवंशी सम्राट वरदान देने के स्थान पर रात भर इसी प्रकार भूमि पर पडे दीर्घ नि श्वास छोडते रहे हैं। इन्होने अपने इस रूप से मुझ पर दबाव डालने का प्रयत्न किया है और अब भी कर रहे हैं कि मैं अपने मागे हुए वरदान फिरा लू।"

कैकेयी के शब्दो ने सम्राट के हृदय पर कशा का-सा आघात किया। वे तडपे, "कैकेयी!"

"क्या?" कैकेयी के आकाश मे ज्वार आ गया। उसे बोलने के लिए प्रयास नहीं करना पडा। आवेश की अग्नि मे बाध जल गया और अवरुद्ध धारा बह निकली, "राम! मैं जानती हू कि मैं बहुत कठोर हो रही हू। सब लोग मुझे बुरा कहेंगे, पर मेरे मन मे तनिक भी पाप-बोध नहीं है। मेरे मन मे तनिक भी मैल और दुराव नही है। अपने पिता की ओर देख तुम्हें लग रहा होगा कि मैं बडी दुष्टा हू, जो अपने पति को इतना कष्ट दे रही हू। पर सच यह नही है पुत्र! तुम्हे मैंने पीडा भी दी है और अपने

मन की ममता भी। बोलो तुम मेरा निष्पक्ष याय करोगे?"

राम मुसकराए पुत्र यायकर्ता की स्थिति म न भी हो तो मा के मन की व्यथा तो सुन ही सकता है।

मैं आज वह सब कहूगी राम! जो चाह कर भी आज तक वह नहा सकी।' ककेयी बोली मैं देवी होने का स्वाग नही कर रही। तुम्हार प्रति विशेष प्रेम और पक्षपात भी नही जता रही"

कहो मा!

मैं वह धरती हू राम! जिसकी छाती करुणा से फटती है तो शीतल जल उमडता है, घणा स फटती है तो लावा उगलती है। दोनो मिल जाते है तो भूचाल आ जाता है! आज मेरी स्थिति भूडोल की है, राम!" आवेश स ककेयी का चेहरा लाल हो गया मैं इस घर म अपने अनुराग का अनुसरण करती हुई नही आयी थी। मैं पराजित राजा की ओर म विजयी सम्राट को सधि के लिए दी गयी एक भेंट थी। सम्राट और मेरे वय का भेद आज भी स्पष्ट है। मैं इस पुरुष का पति मान पत्नी की मर्यादा निभाती आयी हू पर मेरे हृदय स इनक लिए स्नेह का उत्स कभी नही फूटा। य मेरी माग का सिंदूर तो हुए अनुराग का सिंदूर कभी नहीं हो पाए। मैं इस घर मे प्रतिहिंसा की आग म जलती सम्राट स सबधित प्रत्येक वस्तु से घणा करती हुई आयी थी। तुम जैसे निर्दोष निष्कलुष और प्यारे बच्चे को अपने महल म घुस आने के अपराध म मैंने अपनी दासी से पिटवाया था'

मुझे याद है मा!'

वह मैंने तुम्हे नही पिटवाया था मरी प्रतिहिंसा ने सम्राट के पुत्र को पिटवा कर सम्राट को पीडित कर प्रतिशोध लेना चाहा था। तब मैं तुमसे घणा करती थी तुम्हारी मा से घणा करती थी बहन सुमित्रा से घणा करती थी। मैं रघुवशियो से मानव-वश की परपराओ स प्रत्येक वस्तु स घणा करती थी। जहा तक सभव हुआ मैंने बडा उद्दड उच्छ खल और अमर्यादित व्यवहार किया केवल इसलिए कि इन सब के माध्यम मे मैं सम्राट को पीडा पहुचा सकू। पर क्रमश मैंने पहचाना कि मैं तुम्ह या बहन कौसल्या को पीडा पहुचाकर सम्राट को पीडा नहा

पहुंचा रही हू—उससे तो मैं सम्राट् का सुख दे रही हू। तुम लोगो से उनका सबध भावात्मक नही, अभावात्मक था। तुम लोग तो स्वय मेरे समान पीडित थे अपमानित थे। और फिर तुम्हारे और वहन कौसल्या के गुण मेरे सामने प्रकट हुए। मुझे तुम लोगो से सहानुभूति हुई, जो क्रमश प्रेम म बदल गयी। क्या मैं झूठ कह रही हू राम ?'

'नहीं, मा!' राम ने स्वीकार किया, "तुमने मुझे भरत का-सा प्यार दिया है।"

मैंने क्रमश मानव-वशी परपराओ का विरोध भी छोड दिया। मैंने पहचाना कि अपनी प्रतिहिंसा म मैंने न्याय-अन्याय का विचार छोड दिया है। मैं स्वय राक्षसी बन रही हू। मैं किसी अन्य को नही स्वय अपनी आत्मा को पीडा दे रही हू। शनै शनै मैंने स्वय का सहज किया। अपना विरोध छोडने के प्रयत्न मे पिता द्वारा लिया गया वचन भुला दिया शबर-युद्ध के पश्चात मिले अपने वरदानो का उपयोग नहीं किया, और अयोध्या की प्रजा के समान चाहा कि राम ही युवराज हो। तुम ही इस योग्य थे पुत्र! तुम ही इस योग्य हो। किंतु मुझे अपनी सद्भावना का पुरस्कार क्या मिला ?"

राम मौन रहे। वे भरी आखो से कैकयी को देखते रहे।

'इस राज प्रासाद म मुझ पर कभी विश्वास नहीं किया गया। मुझे सदा चुडैल समझा गया। मेरे भाई को आतक माना गया। मेरे मायके की परपराओ को हीन और घृणित कहा गया। मैं सदा यहा अपरिचित होकर रही एक बाह्य वस्तु जिसका यहा के हवा-पानी स कोई मेल नही था। मैं वहन कौसल्या या सुमित्रा या अन्य किसी को उसके लिए दोष नहीं देती। उनसे मेरा सबध ही ऐसा था वे मुझ पर विश्वास नहीं कर सकती थीं। मुझे और किसी म शिकायत नहीं। शिकायत है अपने इस पति से जो बलपूर्वक मुझसे विवाह कर मुझे यहा लाया। जिसने अयोग्य होते हुए भी मुझसे सद्भावना चाही और प्राप्त की, किंतु स्वय मेरे प्रति प्यार दुर्बलता का अनुभव करते हुए भी मुझ पर कभी विश्वास नहीं किया। मैं उनके लिए आकर्षक किंतु भय की वस्तु रही। उसने मुझे अपने सिंहासन पर तो स्थान दिया किंतु हृदय में नहीं। मैं

उस सारे समय के लिए क्या कहू राम ! जब जब सुना कि मेरे पति ने कोई कम किया है कोई निणय किया है, किंतु भयभीत होकर मुझस छिपाया है। झूठ बोला है। उस झूठ को छिपाने के लिए फिर फिर झूठ बोला है। अपन ऐस व्यवहार से उसन अपना आत्म विश्वास खोया है स्वय अपन-आपको और मुझे बार-बार अपमानित किया है। राम ! तुम पुत्र हो मेरे। तुम्हे कस बताऊ कि हमारी रातें प्यार-मनुहार म कटने के स्थान पर झगडा और लानत-मलामत म बीत जाती थी। बार-बार सकल्प करने क बाद भी झगडे होते रह। कलह क्लेश शात ही नही हुए। पति-पत्नी क इन झगडो के दुष्प्रभाव से बचान क लिए उस एक शात और स्नेहिल वातावरण देन क लिए मैं भरत को बार-बार उसके ननिहाल भजती रही

कक्यी का स्वर रुध गया। उसकी आखो म जल और अग्नि एक साथ प्रकट हुई और अत म मैंन क्या पाया राम ! कल रात ढले कुब्जा तुम्हारे युवराज्याभिषक का समाचार लायी। मैंने बहुमूल्य मोतियो की माला कुब्जा को पुरस्कार म दे डाली। किंतु उस मूर्खा, कुटिला दासी न वह मेरे मुह पर दे मारी। किस आधार पर किया उसने यह दुस्साहस ?

ककेयी क्षण भर रुका, और पुन वह निकली तुम्हारे पिता के मेरे प्रति अविश्वास के आधार पर। उसन मुझ बताया कि यह गोपनीय निणय था। सम्राट को आशका थी कि कुछ लोग अभिषेक म विघ्न डालग राम को नष्ट करन के लिए रातो रात उस पर आक्रमण करगे। किससे था भय ? मुझ स ! मेर पुत्र स ! ! मेरे भाई से ! ! ! इसीलिए मुझ बताया नही। भरत का ननिहाल भेज दिया। भरत की अधीनस्थ टुकडियो को उत्तरी सीमात की ओर स्थानातरित कर दिया। पुष्कल का अपहरण करवा उस बदी कर लिया। केक्य के राजदूत की निजी सना का नि शस्त्रीकरण हुआ ककेयी का स्वर और ऊचा हो गया और आखें आक्रोश स जल उठी थुडी है मरी सम्भावना पर ! मेरे चरित्र के उदात्त स्वरूप पर ! यहा कोइ मुझे देवी के रूप म नही देखना चाहता। सब मुझ चुडल समझते है मेरे क्रूर रूप को ही सत्य मानते हैं। तो वही हो राम ! वही हो '

कैकेयी जैसे अपने से ही अवश होकर फफक फफककर रो पड़ी।

राम ने आगे बढ़कर कैकेयी के कंधे पर हाथ रखा "मत रोओ, मा! मुझे तुम्हारी एक एक बात का विश्वास है। मैं तुम्हारे दोनो रूपों को जानता हू। कोई और तुम्हें जितना भी गलत समझे, मैं गलत नही समझूगा। किसलिए बुलाया था—मुझे नि सकोच आदेश दो।"

सम्राट ने एक बार आखें खोलकर राम को देखा। कितनी आशकाए थी उन आखो म जसे राम को चेतावनी दे रही हो 'सावधान, राम! इस मायाविनी के जाल म मत फस जाना।" पर आखें खुली नहीं रह सकी, तरत मुद गयी।

'मथरा साधारण सकुचित अनुदार, मूख तथा नीच चरित्र की दासी है।' कैकेयी पुन बोली उसकी बात किसी विवेकशील व्यक्ति को नही माननी चाहिए। किंतु फिर भी मैं उसकी बात मानूगी। उसकी सलाह पर चलूगी। उसे अपनी हिताकाक्षिणी मानूगी। जब सम्राट के मन म है तो मैं क्यो न मथरा की यह बात स्वीकार कर लू कि राम को भरत स भय है, और शासन प्राप्त कर वह अपने भय के कारण को समाप्त करना चाहेगा। मैं क्यो न यह मान लू कि अपनी आरभिक प्रति-हिंसा म मैंने जो बार-बार बहन कौसल्या का अपमान किया है पुत्र क अधिकार प्राप्त कर लेने पर वे अवश्य ही प्रतिशोध लेना चाहगी। नही तो उनका उद्गार आज मैं कैकेयी के भय स मुक्त हुई' न होता। यदि वे सचमुच मुझे सुनाना न चाहती तो उनकी दासिया यह वाक्य मथरा तक न पहुचाती। सम्राट के अविश्वास ने मेरे चरित्र के दुष्ट तत्वो को उकसा दिया है मेरी प्रतिहिंसा और घणा को जगा दिया है। मैं सम्राट को इसका दड दूगी—एसी आग लगाऊगी कि आग बुझ भी जाए तो उसकी लहर समाप्त न हो। सम्राट को जलाऊगी—चाहे उस अग्नि म स्वय जल जाना पड़े। चाहे तुम अपने शरीर और मन पर टीमत हुए फफोले वहन करो। पर मेरी प्रतिहिंसा शात नहीं होगी। मैं उसे शांत होन नही दूगी।

कैकेयी मौन हो गयी।

राम को लगा, वह अपनी आत्मा स लहन-लहन टूट गयी है।

पर उसका सघप जारी है। वह सम्राट के विरुद्ध ही नही, अपने विरुद्ध भी लड रही है

पर यह सब क्या है ?

क्या चाहती है ककेयी ?

कसी आग लगाना चाहती है ?

बात पूरी तरह स्पष्ट नही थी किंतु ककेयी के वचनो के पीछे निहित प्रक्रिया का कुछ-कुछ आभास राम को मिल रहा था। पति-पत्नी के इन विग्रहपूण क्षणो म राम को क्यो बुलाया गया था ? पिता राम से आखें क्या चुरा रह थे ? ककयी राम को ही क्यो उपालभ दे रही थी ? क्या उन वरदानो का सबध राम से है ?

मुझ क्या आदेश है ? ' राम ने पूछा।

पिता के वरदान पूरे करो।' ककेयी का स्वर फिर कठोर हो गया था।

मेरी क्षमता म हुआ तो अवश्य पूरा करूगा।'

ककेयी का स्वर फिर स कोमल और करुण हो उठा मैं जानती थी कि तुम विरोध नही करोग। इसे मेरी कुटिलता मत समझना पुत्र ! किंतु मुझे कहने दो मैंन किसी को पहचाना हो या न पहचाना हो तुम्हे पहचानन म मैंने तनिक भी भूल नही की है।

राम के अधरो पर मुसकान ही उभरी।

'राम ! मैंने दो वर मागे हैं। क्षण भर ककेयी अपने भीतर की पीडा से जूझती रही और फिर कठोरता का कवच ओढकर बोली पहला तुम्हारे युवराज्याभिषेक के लिए प्रस्तुत की गयी सामग्री स ही भरत का युवराज्याभिषेक हो और दूसरा तपस्वी वेश म तुम आज ही चौदह वर्षों के लिए वनवास के लिए प्रस्थान करो।"

राम को अपन भीतर एक झटका सा लगा। क्या यह दु ख था ? नही ! शायद यह पूरी तरह दु ख नही था—था भी नही भी। यह आकस्मिकता का धक्का था। पर यह आकस्मिकता कितनी अनुकूल थी

राम को समझत देर नही लगी कि पिता वरदानो का तिरस्कार भी नही कर सकते और उ ह स्वीकार भी नही कर सकते। यह उनका सत्य प्रेम

था, पुत्र प्रेम था या मात्र ककेयी का भय ? सत्य प्रेम तथा पुत्र प्रेम म द्वद्व था या मात्र अपनी सुरक्षा का अतिम हताश प्रयत्न ? वे दुविधा मे अस्त व्यस्त, असतुलित, विभ्रम-सी अवस्था म पडे हुए कष्ट भाग रह थे, और ककयी अपने स्थान पर पवत-सरीखी दृढ खडी थी ।

सम्राट न अपनी आत्मा क सपूर्ण बल को सचित कर, अपनी आखें खोली । कुछ बोलन के प्रयत्न म वे थोडी दर बुदबुदाते रहे, और फिर कातर वाणी म बोल 'मुझे मृत्यु के मुख म मत धकेल कैकेयी ! राम चला गया तो मैं जीवित नही बचूगा । मैं हित करन की उत्कट इच्छा म, असतुलित होकर अनहित कर बैठा । तू भी अपना सतुलन खो बठी है । भरत का इष्ट करते-करते तू उसका अनिष्ट करगी '

सम्राट की वाणी म न तो आत्मबल था, न सत्य का तज । वे कैकेयी स याचना कर रह थे उसे अपराधिनी ठहरान का साहस उनम नही था । वे ककयी स आखें नही मिला रह थ, कैकेयी क कृत्य को अत्याचार' नही कह पा रह थे । उनकी अपनी अपराध भावना ककेयी के क्रूर सत्य से पराजित हो चुकी थी । ककयी द्वारा लगाए गए आक्षेपो को व मौन मान्यता दे रहे थे उन्होंने अपने प्रमाद म ककेयी क वय, उसके महत्त्वाकाक्षी ऊजस्वल जिजीविषापूण जीवन के साथ अन्याय किया था अपन कम का कलुष उनक तेज को पूणत मलिन कर गया था

राम के सामने स्थिति पूणत साफ थी । सोचने विचारने का न अधिक अवसर था, न आवश्यकता ।

प्रत्यक्ष जगत विलीन हो गया था । उनके आस-पास कुछ भी नही रह गया था—शून्य कवल शून्य और सामने बहुत दूर एक प्रकाश था कदाचित कोइ अग्नि जल रही थी । उस अग्नि म प्रकाश था आच थी, जलन थी, पीडा थी उसके अनेक मुख थे । व मुख निरतर बदल रहे थे—एक मुख विश्वामित्र का था एक अगस्त्य का था, अत्रि का था, वाल्मीकि का था, भरद्वाज का था शरभग का था सुतीक्ष्ण का था और सारे मुखा स निरतर एक ही ध्वनि प्रस्फुटित हो रही थी— 'आओ ! आओ ! राम, आओ !'

राम उन चेहरों की आखों म जसे बध गये उनकी

गये उस वाणी स सम्मोहित हो गए। राम का हृदय प्रत्यक आह्वान का उत्तर दे रहा था— मैं आ रहा हू आ रहा हू ।'

राम प्रत्यक्ष जगत म लौटे। उनक भीतर अनेक प्रश्न उठ खडे हुए थे। यह वरदान है या शाप ? अब तक राम की चिंता थी कि अभिषक को टालकर वन कसे जाए ? ककेयी ने उनके लिए अवसर उपस्थित कर दिया था।

पर यह सभव कस हुआ ? ककयी राक्षसी है या देवी ?—क्या समझें राम ? क्या सचमुच ककेयी की वर्षों से सचित पीडा आज घणा और प्रतिहिंसा बनकर फूट पडी है ? वह अपनी प्रतिहिंसा के हाथो अवश पिशाची हा गयी है ? या यह केवल नाटक है—केवल एक आड। और सच यह है कि *ककेयी का ववर ककय रक्त अपने अवाछित अनाकाक्षित* पति, अपनी सपत्नी अपने सौतल पुत्र—सब के प्रति शत्रुता का निर्वाह कर रहा है ? क्या ककयी मात्र भरत को राज्य दिलवाने के लिए रघुकुल की परपराओ का खडित कर उसकी मर्यादाओ को नष्ट कर अपन पति को असहनीय यातना अकल्पनीय पीडा दे रही है ? क्या सम्राट की आशकाए सत्य हुइ ?

क्या यह ककेयी की योजना है कि राम वन चले जाए तथा उनकी अनुपस्थिति म असुरक्षित-असहाय दशरथ निराशा और हताशा म प्राण त्याग दें ? क्या ककेयी तयार है कि स्वाथ अथवा प्रतिहिंसा के हाथो अपने सौभाग्य को अग्निसात हो जाने दे ? या वह मात्र विवेकहीन विक्षिप्त कम कर रही है—भविष्य की बात सोचने के लिए उसके पास बुद्धि ही शेष नहा है ?

राम निणय नही कर पाए—ककेयी का कौन-सा रूप वास्तविक है! पर इस समय तो ककेयी वही चाह रही है जो राम के मन का अभीष्ट है। उनका मन अनात ही उसके प्रति आभार से आप्लावित हा उठा। उनकी दुश्चिंता मिट गयी। वे तयार थे कि मुक्त मन से पिता स आग्रह करें कि पिता अपन वचन का पालन करें। राम चौदह वर्षों तक तपस्वी वेश म वनवास करेंगे

पर चौदह वर्षों का वनवास क्यो ? बस दो वर्षों का क्यों नही ? क्या

कक्यी समभनी है कि चौदह वर्षो का समय इतना लवा है कि इस बीच सम्राट् का देहावमान हो जाएगा और भरत अयोध्या म अच्छी तरह अपने पर जमा लेगा तथा अयाध्या के लोग राम को भूल जाएगे हा, इतना समय पर्याप्त था

ककेयी की मुद्रा कुछ और कोमल हुई, पुत्र ! तुम्हारे प्रेम क कारण सम्राट कभी अपने मुख से तुम्ह वन जान के लिए नही कहेंगे। दूसरी ओर अपने सत्य के मुखौटे के कारण वे वरदानो का तिरस्कार भी नही करेंगे। अब निणय तुम्हारे ऊपर है।'

राम क्या कहते ! महत्वपूण यह नही था कि वे पिता के वचन की पूर्ति के लिए वन जा रहे हैं या ककेयी की इच्छापूर्ति के लिए। बात केवल इतनी थी कि उनक पास यही एक अवसर था यदि वे चूक गए तो फिर यह अवसर कभी नहीं आयेगा। पिता म यदि रचमात्र भी आत्मबल जाग उठा और उन्होंने कह दिया कि वे कैकेयी को वरदान नही देंगे राम वन नही जाए— तो फिर राम की चिता पुनर्जीवित होकर पिशाची-सी उनके माग मे आ खडी होगी।

राम निष्कप स्वर मे बोल मा ! *मैं आज ही वन की ओर प्रस्थान करूगा।'*

ककेयी क चेहरे पर हप और आखो म पीडा उभरी "दडक वन !

राम पुन चौंके। विश्वामित्र भी यही चाहते थ। वहीं से राम अपना अभियान आरभ कर सकते हैं। ककयी अपने स्वाथ के लिए उन्हें वन भेज रही है या ऋपि काय क लिए ? दडकारण्य भयकर राक्षसी सेनाओ हिंस्र पशुओ तथा अनेक अत्याचारियो से भरा पडा है। वही ऋपि आश्रमो को सर्वाधिक कठिनाइयों का सामना करना पड रहा है। क्या ककेयी इसलिए उन्ह वहा भेज रही है कि वे जाकर ऋपियो की रक्षा करें, या इसलिए भेज रही है कि राम राक्षसों तथा हिंस्र पशुओ द्वारा मार जाए, वे कभी लौटकर न आए और अयोध्या म भरत का राज्य चिरस्थायी हो ? दडक क्षेत्र म ही शबर से युद्ध करते हुए दशरथ की रक्षा ककयी न की थी। वह राम को वहीं भेज रही है—शबर के वशजो के हाथो राम की हत्या करवाने अथवा राम के हाथों शबर क वशजों का नाश करवाने ?

किंतु इन प्रश्नों का उत्तर कैकेयी ही दे सकती थी, और कैकेयी से ये बातें पूछी नहीं जा सकती थीं। राम को उत्तर पाए बिना ही जाना होगा।

अतत राम बोले माता ! वल्कलों का प्रबंध कर दें। मैं बंधु-बांधवों से विदा लेकर आता हूं।

राम चले गए।

कैकेयी के मुख पर विजयिनी मुसकान उभरी किंतु उसकी आंखों में गहरी व्यथा के चिह्न थे।

"सर्वनाश।"

दशरथ मन शून्य हो गए।

३

कैकेयी के महल से निकलते हुए राम के मन मे एक सहज उल्लास था।

उन्हें रथ पर चढ़ते हुए सुमन्त्र ने देखा। राम तनिक भी दुखी नहीं लग रहे थे। सुमन्त्र अवाक रह गए।

"इतनी-सी बात से आप इतने चिंतित थे, सुमन्त्र काका।"

"तुम इसे इतनी-सी बात कहते हो राम!" सुमन्त्र आगे कुछ कह न सके। चुपचाप घोड़ों को हांक दिया।

और राम को लगा, वे भी उल्लसित नहीं रह गए हैं। उल्लास के साथ ही मन में कुछ आशंकाएं घर करती जा रही हैं, कुछ चिंताएं जन्म ले रही हैं और अनेक प्रश्न वर्षा के पश्चात् धरती फोड़कर उग आये कुकुरमुत्तों के समान सिर उठाए खड़े हैं।

पिता ने उनके अभिषेक का निश्चय किया था तो साथ-साथ उनके मन में आशंकाओं ने भी जन्म लिया था—कहीं राम के अभिषेक का अवसर हाथ से न निकल जाए। आज वही स्थिति राम के मन की थी—कैकेयी ने उन्हें कम का अवसर दिया है, किंतु कहीं यह हाथ से निकल न जाए। सब को उनके वन-गमन की सूचना मिलेगी। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी प्रतिक्रिया होगी—सब अपने अपने ढंग से काम करेंगे। क्या सीता उन्हें वन जाने देंगी? शायद उन्हें न रोकें, किंतु साथ जाने का हठ अवश्य करेंगी। लक्ष्मण राम के निर्वासन की बात सुनकर क्या करेंगे?

नहीं हो जाएग। और फिर राम क बिना ता अयोध्या म वे भी नहीं रहग। मा सिर पटक पटककर प्राण देने को तैयार हा जाएगी। पिता कदाचित पलग से ही नहीं हिलेंग। माता सुमित्रा तक करेंगी और बिना सहमत हुए या सहमत किए उ ह नहीं छोडेंगी। सुयन चित्ररथ त्रिजट अ य मित्र बधु-बाधव

उन सबका स्नेह राम क लिए भय का रूप धारण करता जा रहा था। राम क्षणभर के लिए भी ढील पडे तो व बलात् अयाध्या के सिंहासन से बाध दिए जाएग। फिर वन जान का अवसर शायद कभी न आए। इस धक्के म ही राम अयाध्या से निकल जाए तो निकल जाए काई नहीं मानेगा कि पिता की सत्य प्रतिज्ञा की रक्षा क लिए ककेयी क आदेश पर उनका वन जाना उचित है। राम अपनी बात किसी का समझा नहीं पाएगे, किसी का मना नहीं पाएग।

तो ?

बहुत होगा तो सीता साथ जाना चाहगी। यदि वे बहुत रुढ हुइ तो ल जाने म राम को आपत्ति भी नहीं होनी चाहिए। आखिर इतने दिनो से अनेक ताने उपालभ बालिया-ठोलिया—वे किस दिन के लिए सुन रही हैं। यदि साथ न गयीं तो कम का अवसर उ ह फिर कब मिलगा ? यदि जाना ही चाह तो चलें किंतु राम अपनी ओर स प्रोत्साहित नहीं करेंग।

लक्ष्मण भी साथ जाना चाहग या शायद वन-गमन के समथक होत हुए भी इस प्रकार निर्वासित होकर जाना उन्हें अच्छा न लगे। शायद वे कैकेयी का विरोध करना चाह आवश्यकता होने पर सम्राट क विरुद्ध विद्राह करना चाह। न उनम "यक्तिगत शौय की कमी है न सनिक-असनिक सगठनो की सहायता की आवश्यकता हाने पर उन्ह साम्राज्य की सत्ता का भी समथन मिल जाएगा किंतु लक्ष्मण को समझाना हागा इस प्रकार के किसी भी कृत्य म वन जान का अवसर छिन जाएगा ।

माता सुमित्रा तक करना चाहगी—राज्य के अधिकार के विषय म क्षत्रिय के कत य के विषय म वरदानो की वास्तविकता के विषय म कैकेयी के अधिकार के विषय म वन गमन के औचित्य के विषय म उन्ह कैसे समझाया जाएगा कि इस समय रा य प्राप्ति के लिए सघष से बडा धम

अयोध्या-त्याग है।

और माता कौसल्या ! उन्हें तो किसी भी प्रकार नहीं समझाया जा सकता। वात्सल्य भी कभी यह मानेगा कि संतान त्याग धर्म है—प्रतीक्षा क्या कभी सहमत होगी कि लक्ष्य पास आ जाए तो आखें मूद दूसरी ओर मुड जाना चाहिए ? उनकी पीडा राम देख नहीं पाएंगे

राम किसी को इतना समय नहीं देंगे कि कोई अपने ढंग से सोच कर कम करे और उन्हें रोक ले अयोध्या की स्तब्धावस्था में राम निकल गए तो निकल गए, विलंब हुआ तो नगर द्वार बंद हो जाएंगे

कौसल्या के महल के सम्मुख राम ने सुमंत्र को रोक दिया। रथ से उतरकर बोले, 'आप लौट जाएं आगे मैं स्वयं चला जाऊंगा।'

'मैं प्रतीक्षा करूंगा राम!'

'नहीं काका!' राम मुसकराए मेरी चिंता न करें। सम्राट को आपकी आवश्यकता मुझसे कहीं अधिक होगी।'

राम ने कक्ष मे प्रवेश किया।

माता कौसल्या के सम्मुख वेदी में अग्नि प्रज्वलित थी। उनके आसपास अनेक आवश्यक वस्तुएं बिखरी पडी थीं—दही अक्षत घी मोदक, हविष्य, धान का लावा सफेद पुष्पों की माला खीर खिचडी समिधा तथा जल से भरे हुए कलश। उन्होंने श्वेत रेशमी साडी पहनी हुई थी। वे व्रत के अनुष्ठान में दत्तचित्त इष्टदेव का तर्पण कर रही थीं।

राम के मन में कसक उठी—कितने उत्साह से मां उनके अभिषेक की तैयारियां कर रही थीं। राम उन्हें कैसे सूचना देंगे ? कह दें—मां ! तुम्हारा यह संपूर्ण उल्लास अयथार्थ है। तुम्हारे पुत्र का न केवल अभिषेक ही नहीं होगा अब वह चौदह वर्षों तक तुम्हारे निकट भी नहीं रह पायेगा। क्या अवस्था होगी मां के मन की ? वे यह धक्का झेल पाएंगी ? राम का मन उदास हो गया।

तत्काल उन्होंने स्वयं को संभाला। यदि इतनी-सी बात से विचलित

हो गए तो वे कभी भी अपना कतव्य पूरा नही कर पाएग। कोमल मन अथवा कोमल हाथ कतव्य-पूर्ति म कभी सहायक नही होत। उन्ह दढ रहना होगा। तनिक-सी दुबलता स अवसर हाथ स निकल जाएगा। अभी तो सीता को भी सूचना देनी है। लक्ष्मण भी जानेंग। सारे बधु-बाधव मित्र गण नगर निवासी सुनेंग राम को समझाएगे रोकेंग बाधा देंगे साथ जाने का हठ करेंगे, पर राम को उन सब के निषधा उदास चेहरो तथा अश्रुओ के सागर म से तरकर पार जाना होगा। मोह तथा कतव्य का निर्वाह साथ-साथ नहीं हो सकता। मोह को ताडना होगा—कठोर हुए बिना कभी कोई कतव्य पर पूरा नही उतरा।

कौसल्या अपने इष्टदेव से सबोधित थी। उन्होने राम का आना लक्ष्य नही किया। सहायता के लिए पास बठी सुमित्रा ने चेताया बहन ! राम आए है।

प्रकट ललक के साथ कौसल्या राम की ओर उन्मुख हुई। उनकी आकृति पर उल्लास की असाधारण दीप्ति थी, आखो म कामनापूर्ति की तप्ति थी। किंतु राम के मुख पर उल्लास का कोई चिह्न नही था। वे अत्यन्त गभीर स्थिर तथा आत्मनियत्रित लग रह थ।

क्या बात है राम ?'

राम स्थिर दृष्टि से शून्य म दखत रह मा ! पिता प्रदत्त दो पूवतन वरदानों के आधार पर माता ककेयी ने भरत को अयोध्या का राज्य और मुझे चौदह वर्षों क लिए दडकारण्य का वास दिया है।

कौसल्या न अचकचा पलकें झपक झपककर राम को देखा। नही यह परिहास नही हो सकता। राम ऐसा परिहास नही कर सकता। वह सत्य कह रहा है

कौसल्या स्तभित खडी रह गयी। उनकी सास जहा की तहा थम गयी। प्राण शक्ति जसे किसी ने खीच ली। वण सफेद हो गया और माथ पर स्वेद कण उभर आये। अपनी जीभ स होठो को गीला करने म भी उन्ह एक युग लग गया।

राम !

मैं जा रहा हू मा ! विदा दो।

राम ने झुककर कौसल्या के चरण छुए।

'तुम वन जाने का निश्चय त्याग नहीं सकते पुत्र?' कौसल्या कातर हो उठी।

'असंभव।" राम का स्वर दृढ़ था।

कौसल्या ने भौंचक दृष्टि से राम को देखा। उनके चेहरे की दृढ़ता में, कौसल्या के मन की आशा का आधार जैसे अर्राकर गिर पड़ा, और साथ ही उनका शरीर भी झटके से भूमि पर चला आया।

सुमित्रा और राम ने लपककर कौसल्या को सभाला और पलंग पर लिटा दिया।

कौसल्या ने धीरे से आँखें खोलकर राम को देखा और फिर अपनी दृष्टि सुमित्रा पर टिका दी 'इसे रोक सुमित्रा! कैकेयी तो बहाना है। यह स्वयं ही वन जाने को तुला बैठा है।

कौसल्या की शक्ति जैसे समाप्त हो गयी व निढाल हो चुप हो गयी।

सुमित्रा चुप न रह पायीं। बोलीं इस प्रकार के आदेशों को स्वीकार करना क्या धर्म है? राम! तुम अपना अधिकार ही नहीं छोड़ रहे कैकेयी के अत्याचार का समर्थन भी कर रहे हो। अपने बल को पहचानो पुत्र! तुम्हारे एक संकेत पर कोसल की प्रजा कामुक सम्राट को मार्ग से हटा तुम्हारा अभिषेक कर देगी। और प्रजा को भी रहने दो। अकेला लक्ष्मण इन दुष्टों को दंड देने में पूरी तरह समर्थ है।'

राम मुसकराए 'माँ! धर्म क्या है कहना बड़ा कठिन है। वह कब शपथ में है और कब त्याग में—इसकी परख आवश्यक है। पूर्ण सत्य हमारे सम्मुख प्रत्यक्ष नहीं होता। उस अनाऊ सत्य उन अनदेखी परिस्थितियों के प्रति हमारा क्या दायित्व है—यह भी हम नहीं जानते। भाई-बांधवों की हत्याएं कर रक्त के सरोवर में तैर एक पिशाच के समान राजसिंहासन तक पहुंचना, मेरे जीवन का लक्ष्य नहीं है। इस समय वन जाना ही मेरा कर्तव्य है। माँ! मैं न सम्राट के बल से भयभीत हूं, न भरत के अपने और लक्ष्मण के बल से भी अनभिज्ञ नहीं हूं। किंतु अभी वन प्रस्थान का समय नहीं आया। माँ! अभी मुझे जाने दो

'ठहरो राम!' सुमित्रा का स्वर कुछ रुक्रिन था 'इतनी जल्दी न

गए थे। उन्होंने कहा था कि पिता से मिलकर वे शीघ्र लौट आएंगे। अब तक आए नहीं राम! सुमंत्र काफी चिंतित लग रहे थे। जाने चिंता किस बात की थी। संभव है सुमंत्र की अपनी कोई निजी चिंता हो। संभव है, वृद्ध अधिक काम से व परेशान हो उठे हों। संभव है राम के विषय में ही चिंतित हों।

राम के विषय में चिंता? रघुकुल के शक्तिशाली सम्राट के ज्येष्ठ पुत्र के विषय में चिंता? प्रजा उनसे प्रेम करती है, मंत्री उनके शील पर मुग्ध हैं, राज-परिषद् ने एकमत से उनके अभिषेक का निर्णय किया है। उस राम के विषय में किसी को चिंता हो सकती है? और राम के व्यक्तिगत शौर्य से सीता भली प्रकार परिचित हैं

सीता मन-ही मन पुलकित हो उठीं। राम के विषय में क्या चिंता?

पर वे अभी तक लौटे क्यों नहीं? वे कहीं और तो नहीं चले गए?

संभव है किसी काम से या वैसे ही मिलने के लिए माता कौसल्या के पास गये हों। कौसल्या जैसी पति प्रताडिता स्त्री को राम जैसा पुत्र ही जिला ले गया। एक पक्ष यदि पूर्णत स्नेह शून्य था तो दूसरे पक्ष ने उसकी भरपूर क्षतिपूर्ति की। पुत्र और माता का यह प्रेम, सीता के मन को सदा ही तरल कर देता था।

राम आए। उनकी मुद्रा गंभीर थी। सीता चकित हुई—क्या इतने गंभीर हैं? कदाचित् राज्य कार्य संबंधी कोई चिंता हो। सहसा सीता के मन में आनन्द की धारा फूट निकली। उन्होंने वक्र होठों से मुस्कराते हुए नयनों की कोरों से राम को देखा—कहीं परिहास के लिए अभिनय तो नहीं कर रहे? स्वभाव से अत्यंत गंभीर होते हुए भी, कभी कभी हल्के क्षणों में राम अपने ऐसे ही कौतुक भरे अभिनय से सीता को परेशान कर देते हैं, और जब सीता बहुत चिंतित हो उठती हैं तो खिलखिलाकर हंस पड़ते हैं।

आज फिर वैसी ही मुद्रा बनाए हैं।

"यह किस नाटक की भूमिका है आर्यपुत्र! नटी का क्या रूप होगा?"

पहली बार राम की गंभीरता उदासी में परिवर्तित हुई। प्रात पिता

'देवि ! यह वन गमन परंपरा के बहुत महत्त्व की परंपरा का पालन करना नहीं, अपितु विवाह कर ज्येष्ठ पत्नी का तिरस्कार करना भी है। मैंने उस परंपरा का भी पालन नहीं किया है।' राम मुसकराकर बोले 'लक्ष्मण ! तुम अपने आवेश में अपने वचन भूल रहे हो। मैंने ऋषि विश्वामित्र को एक वचन दिया था। तुम चाहते हो कि आज जब मुझे अपना वचन पूरा करने का अवसर मिल रहा है, मैं अन्य सामान्य राजकुमारों के समान सिंहासन के लिए झगड़ा करूँ, अपने बंधु-बांधवों परिजनों की हत्या करूँ। लक्ष्मण ! यह वनवास नहीं मेरे जीवन का अभ्युदय है, नवीन राजनीति से ऊपर व्यापक मानवीय कर्तव्य निभाने का अद्वितीय अवसर है।'

लक्ष्मण का क्षोभ विलीन हो गया था। समुचित-सा होकर बोले "मैं भूल गया था भैया ! हम वन जाना चाहिए"

राम का ध्यान लक्ष्मण की बात से हटकर उनकी भंगिमा पर आकर टिक गया। वे 'आपको वन जाना चाहिए' न कहकर 'हम वन जाना चाहिए' कह रहे थे।

"हो गये न तुम भी तैयार।" सीता कौतुकपूर्वक बोलीं "यह भी छूत की बीमारी है।"

"ठहरो भाभी ! " लक्ष्मण पुनर्विचार करते हुए बोले "भैया ! यह भी तो हो सकता है कि आप अयोध्या का शासन अपने हाथ में लें—कम-से-कम दुष्टा कैकेयी के हाथ में तो उसे न ही छोड़ें। फिर अपनी सेना सहित दंडक के राक्षसों और उनके संरक्षक रावण से जा टकराएँ।"

"एक मार्ग यह भी है।" राम ने स्वीकार किया "किंतु यदि यह मार्ग व्यावहारिक होता तो कदाचित् दंडकवन को इतनी लंबी प्रतीक्षा न करनी पड़ती। कोई भी सम्राट् अब तक कर चुका होता। लक्ष्मण ! सैनिक अभियानों से जन-सामान्य की असुविधाएँ दूर नहीं होतीं। सेना विजय दिला सकती है, क्रांति नहीं ला सकती। प्रत्येक समस्या का समाधान सेना नहीं है। जन क्रांति जन जागृति से होती है, और उसकी आकांक्षा जनता के भीतर से उत्पन्न होती है। ऊपर से थोपी हुई सैनिक क्रांतियाँ सदा निष्फल होती हैं। ऋषि विश्वामित्र ने बताया था सेनाओं के जाने की

सुविधाए भी उन वनो म नही हैं। हम उन वनों से परिचित भी नही हैं। सेना को ले जान क लिए जो प्रबध वहा होना चाहिए वह भी कदाचित् हमार लिए व्यावहारिक नही है। इतनी बडी सेना उसके वाहनो और शस्त्रास्त्रा को ल जाना, भोजन पानी का प्रबध करना, उनके ठहराए जान की व्यवस्था करना—इनन म तो वन के वन उजड जाएग, और जिनकी रक्षा क लिए सना जाएगी, वे ही लाग सेना के विरुद्ध हो जाएग। वैसे भी अपन रा य म इतनी दूर इतन बडे सैनिक अभियान म विजय प्राप्त करना असभव-सा है। गुरु विश्वामित्र न कहा था, मुझे अकेले जाना होगा। राजसी वेश म जाऊगा, तो जन साधारण दूर स प्रणाम कर लौट जाएग। जन-साधारण अपनी असुविधाओं को वाणी नहीं देता—विशेषकर शासक वग क सामने। वह डरता है कि उसके असुविधा वणन को शासन अपनी निन्दा विरोध अथवा त्रुटि-दर्शन न मान ल। यह काय केवल नि स्वार्थ, साहसी बुद्धिजीवी कर सकते हैं वे द्रष्टा, ऋषि मुनि जो राज्याश्रय का तुच्छ मान, वनों म अपने आश्रम बनाकर वास कर रह है। व लोग राज्याश्रय को महत्त्व नही देत अत व राज्य से अपनी रक्षा की याचना करने भी नहीं आएग। गुरु न स्पष्ट कहा था, मुझे तापस वश म उन ऋषियो के निकट जाकर, उनम समान धरातल पर मिलना होगा। और उनकी याचना के बिना ही उनकी रक्षा करनी होगी। यदि किसी समय मेरा व्यक्तिगत वल तथा दिव्यास्त्रों का ज्ञान उनकी रक्षा म असमर्थ हुआ, तो सेना की आवश्यकता पडेगी। किंतु लक्ष्मण! वह सेना अयोध्या की वेतन भोगी सेना नहीं होगी।'

कौन-सी सेना होगी?" लक्ष्मण हैरान थे।

"कोई बाहरी सना आकर किसी क लिए कोई युद्ध जीत दे तो निश्चित रूप से वह काय नहीं हो सकता जो जन-सामान्य म जागति लाकर, उन्हीं को प्रबुद्ध बनाकर उसी पीडित जाग्रत जनता के बीच म से तयार की गयी सेना से हो सकता है। लक्ष्मण! मैं नहीं जानता कि मुझे सना की आवश्यकता कहा पडेगी कब पडेगी कौन-सी सेना मेरी सहायता क लिए प्रस्तुत होगी। किंतु जिस काय क लिए राम दडक जा रहा है वह यही है कि प्रत्येक जन साधारण अपनी रक्षा के लिए प्रबुद्ध हो सचेत हो

स्वाश्रित हो। उसम प्राण फूकना मेरा काम है—उन्हें माग दिखाना उनका नेतृत्व करना। जब जनता जाग उठती है तो बड से-बडा अत्याचारी भी उसके सम्मुख टिक नहीं सकता। इसलिए मैं तापस वेन म एकाकी ही वन जाऊगा।

यह सब ठीक है भैया ! लक्ष्मण के मन मे अब भी अडचन थी फिर भी अयोध्या का राज्य कैकेयी के हाथो म छोड इस प्रकार निष्कासित होकर जाना तो शोभा नही देता। सत्ता पर अधिकार कर उसे किसी उचित व्यक्ति को सौपकर भी तो वन जाया जा सकता है।'

राज्य जन-कल्याण के लिए होना चाहिए, राम बाले प्रजा के दमन और हत्या के लिए नही। अत राज सिंहासन से अनावश्यक चिपकना मेरे लिए आसक्ति से अधिक कुछ नही है, और आसक्ति सदा अन्याय की जननी होती है। और लक्ष्मण ! 'राम मुसकराए एक बार स्पष्ट हो गया कि बाध्य होकर नहा मैं स्वेच्छा से वन जा रहा हू तो मेरे प्रियजन मुझे कभी वन जाने नही देंगे। माता कौसल्या सिर पटककर प्राण दे देंगी किंतु मुझे जाने नही देगी। भ्रम बना रहने दो

लक्ष्मण के विरोध और प्रश्न मिट गए, विघ्न और जिज्ञासाए पिघल गयी। मन मे एक उत्साह और उल्लास छा गया। आखो म चमक आ गयी कितना आनन्द रहगा भैया ! सिद्धाश्रम-यात्रा की स्मृति आज तक मेरे मन म कभी-कभी टीस उठती है।

लक्ष्मण अपने भीतर स्मतियो म खो गए।

राम लक्ष्मण के मन की बात समझते रहे और मुसकराते रहे। फिर बाधा देते हुए बोले किंतु लक्ष्मण ! वनवास का आदेश केवल मुझे हुआ है।"

ठीक है। लक्ष्मण ने कौतुक भरी आखो से भाई को देखा युवराज्याभिषेक करवाते हुए केवल मुझे वाली भाषा बोलते तो कोई बात भी थी। वनवास के लिए केवल मैं कुछ शोभा नहीं देता। गुरु विश्वामित्र ने भी केवल आपको ही मागा था सम्राट ने भी केवल आपको ही भेजा था—किंतु यह अकिंचन फिर भी साथ गया था।"

राम हस पडे 'तो तुम साथ जाओगे ही ?'

'कोई विकल्प नही।" लक्ष्मण भी हस पडे, "मेरी मा कहती हैं, भैया राम का साथ कभी मत छोडो।"

राम गभीर हो गए, "तुम्हे साथ ले जाने म मुझे कोई आपत्ति नही है, सौमित्र ! साथ रहोगे तो सुविधा भी रहेगी और सगति भी। किंतु "

'क्या, भया ?"

'जिन परिस्थितियो म मैं अयोध्या छोड रहा हू, वे असाधारण हैं। यहा द्वेष और प्रतिहिंसा का विष फला हुआ है। यदि तुम भी मेरे साथ चले जाओगे तो पीछे माता कौसल्या और माता सुमित्रा के भरण-पोषण और उनकी सुरक्षा का दायित्व किस पर होगा ? यदि पीछे अयोध्या मे रहकर, तुम उनकी देखभाल करो, तो मैं निश्चित होकर दडक जा सकूगा।"

नही, भया !' लक्ष्मण ने निषेध की मुद्रा म सिर हिला दिया, इसकी आवश्यकता नहीं पडेगी। एक तो सम्राट् अभी विद्यमान हैं, फिर यदि पीछे भरत हैं, तो शत्रुघ्न भी हैं। माताओं का अनिष्ट नहीं हो पाएगा। अपने भरण-पोषण के लिए उनके पास पर्याप्त धन है। आप चाहे तो जाने से पहले कुछ और व्यवस्था भी की जा सकती है। रक्षा के लिए उनके पास विश्वसनीय सनिक और सेवक हैं। और फिर चाहे माता कौसल्या न हो पर माता सुमित्रा दोनों की रक्षा म पूणत समथ हैं। मेरी मा कहती हैं, वह क्षत्राणी ही क्या, जो अपनी रक्षा न कर सके।"

राम अपनी गभीरता छोड नहीं पाए, 'दूसरा चितनीय विषय यह है, लक्ष्मण ! कि चौदह वर्षों पश्चात जब तुम वन से लौटोगे तब तक तुम्हारा विवाह-योग्य वय व्यतीत हो चुका होगा "

लक्ष्मण ठहाका मारकर हस पडे, जिस वय मे पूज्य पिता जी ने कैकयी से विवाह किया था, क्या मेरा वय उससे भी अधिक हो जाएगा ?'

राम भी स्वय को रोक नहीं पाए। खिलखिलाकर हस पडे।

"तो फिर सेना की चिंता क्यों करते हो देवर !" सीता न हसी म सम्मिलित होते हुए कहा 'तुम और तुम्हारी पत्निया की सेना क्या नहीं कर पाएगी ?

लक्ष्मण विदा लेने चले गए और सीता विभिन्न व्यवस्थाओं म लग गयीं।

राम पुन अनमने हो गए। एक प्रश्न तज आरी के समान उनके मस्तिष्क के ततुओ को आहत कर रहा था।

आखिर राज्य प्राप्ति का प्रयत्न कोइ क्यो करता है ? शासनाधिकार किसलिए होता है ? राजनीतिक शक्ति की आवश्यक्ता ही क्यों पडती है ? राम को राज्य का मोह नही है। उन्ह धन धान्य सपत्ति विलास ऐश्वय—किसी वस्तु का मोह नही है। वे तो स्वय ही अवसर की प्रतीक्षा म थे कि किसी प्रकार इस जजाल से निकल कर वनो म जा सकें जहा मानवता का वास्तविक सघष चल रहा है। यदि उ ह राजसी जीवन क किसी एक पक्ष से भी मोह होता, तो वनो म जाकर वे ऋषियो की रक्षा का सकल्प क्या करते ?

पर कैकेयी ने भरत के लिए राज्य क्या चाहा है ?

ककेयी ने शायद यह सोचा है कि राज्य राम को मिल गया तो भरत के पास धन नही रहेगा। उस भोग विलास की सामग्री उपल ध नही हो पाएगी सेवक सेविकाए नही रहेगी सुख के साधन नही रहेगे। पर राम को यह सब नहीं चाहिए इसलिए भरत के राजा बनने पर राम का कुछ नही छिनेगा। राम तो स्वेच्छा से धन की माया को छोड रहे हैं

किंतु शासनाधिकार धन प्राप्ति क लिए होता है। धनाजन की एक व्यवस्था बना दी जाती है और शासन उस यवस्था की रक्षा करता है। तो शासनाधिकार मूलत किसी विशिष्ट आर्थिक ढाचे की सुरक्षा के लिए होता है। एक विशेप प्रकार की आर्थिक यवस्था एक विशिष्ट शासन तत्र की अपेक्षा करती है। राजनीतिक यवस्था के बदलत ही आर्थिक यवस्था और उस आर्थिक व्यवस्था पर आधृत सामाजिक व्यवस्था भी बदल जाती है

ककेयी ने राज्याधिकार कदाचित भरत के भोग के लिए चाहा है। यदि यही यथाथ है तो भरत भोगी राजा होकर रहेगा। क त यपरायण शासक वह कदापि नही बनेगा। और यदि वह अपना दायित्व नही समझेगा तो वह जनता का रक्षक न होकर उसका शोपक होगा।

राम वन क्यों जा रहे है ? विश्वामित्र तथा अ य ऋषि पूजी तथा हिंसा पर आश्रित राज शक्तियों का नाश क्यों चाहते है ?—राम के मन

म बहुत सारे प्रश्न उभर रहे थे—बहुत सारे विचार—ऊहापोह

विश्वामित्र क्या चाहते थे ? यही तो कि व अपन आश्रम को ज्ञान क आदान प्रदान का केन्द्र बना सकें। सिद्धाश्रम के अडोस पडोस म बसने वाले लोगो—आय नाग शबर किरात, भील—यहा तक की सभव हो तो राक्षसा को भी सुसस्कृत कर सकें। सबको मानव-ममता के आधार पर सम्मानपूवक आजीविका अर्जित करन और अपने व्यक्तित्व क पूण विकास का अवसर दे सकें। पर वे सफल क्या नही हो सक ? कौन रोक रहा था उन्हे। यदि बहुलाश्व के स्थान पर वहा कोई न्यायी शासन प्रतिनिधि होता, तो विश्वामित्र क्या इतने अशक्त होत ? क्या गहन की वैसी अमानुषिक हत्या होती ? क्या गगन क परिवार की स्त्रियों के साथ ऐसा अत्याचार हो पाता ? यह सब-कुछ केवल इसलिए हुआ क्योंकि विश्वामित्र के पास राजनीतिक शक्ति नही थी।

अगस्त्य, सुतीक्ष्ण शरभग, भरद्वाज वाल्मीकि—सभी ऋषि अपनी सपूण तपस्या बुद्धि ज्ञान शक्ति एव आस्था के साथ मानवता के विकास म दत्तचित्त हैं—किंतु जन-जातियो के जागरण से, उनके सक्षम और स्वावलबी हो जाने मे राक्षसा द्वारा उनके शोषण की सभावना समाप्त हो जाएगी। ऐसी स्थिति म राक्षसा की राजनीतिक शक्ति, ऋषि-कार्यों का समथन कसे कर सकती है ? राक्षस अपने सपूण शासन-तत्र को इन ऋषियो के विरोध म लगाए हुए हैं।

सहस्रार्जुन आय सम्राट था—महान भागव ऋषियो का शिष्य। किंतु अपनी शक्ति क मद म वह राक्षस हो गया था—रावण का मित्र। स्वय भागव परशुराम महिष्मती म उपस्थिति होते हुए भी तब तक कुछ नही कर सके, जब तक राजनीतिक शक्ति हैहयराज के हाथ म थी। अतत उन्हे उस अन्यायी राजनीतिक शक्ति को ही मिटाना पडा। एक कार्तवीय सहस्रार्जुन ही क्या उन्होंने अनेक क्षत्रिय राजपरिवारो का समूल नाश किया। जब राज्य अन्याय तथा अत्याचार का प्रतीक बन जाए, तो उसका मिटना अवश्यभावी हो जाता है।

कोई सदेह नही कि बडे यत्न म विकसित की गयी प्रगतिशील न्यायपूण, मानवीय सस्कृति तथा सामाजिक व्यवस्था को भी प्रतिकूल

प्रतिक्रियावादी, प्रतिगामी राजशक्ति अत्यत थोड स ही समय म समाप्त कर सकती है। अत मानव समता क सिद्धात पर आश्रित न्यायपूण समाज क विकास के लिए पहली शत है राजनीतिक शक्ति का हस्तगत करना

और राम क्या कर रह है? हाथ म आयी कोसल की राजशक्ति, भरत के हाथ म देकर उसके माग से हटकर चौदह वर्षों के लिए बहुत दूर चले जा रहे हैं। व रावण की राक्षसी सत्ता क नाश क लिए वन जा रहे हैं—और यदि उनकी अनुपस्थिति म ककेयी तथा भरत ने मिलकर कोसल म ही राक्षसी राज्य स्थापित कर लिया तो? कौन कह सकता है कि प्रति हिंसा म उदभ्रात ककेयी के हाथ म आकर नामन याय की परपरा से हट नही जाएगा? राम भरत को जानते हैं। भरत पर उन्ह पूरा विश्वास है—वह अन्यायी नही होगा। किंतु जानते तो वे कैकेयी को भी थे। आज से पूव कौन कह सकता था कि ककेयी इतनी क्रूर हो सकेगी। किसी अन्य घटना के कारण भरत म भी अपनी मा के समान प्रतिहिंसा और घृणा का विस्फोट नही होगा—कौन कह सकता है? बिना उचित परीक्षण के भरत के विषय म कुछ कहना सभव नही है। यदि ककेयी ने भरत के विलास और भोग के लिए राज्य चाहा है और भरत ने उसका सचमुच वसा ही उपयोग किया, तो अयोध्या और लका मे कोई भेद रह पाएगा क्या? लका तो फिर आर्यावर्त्त से बाहर दूर समुद्र के पास बसी हुई है—अयोध्या आर्यावर्त्त के मध्य मे है। अयोध्या मे कैकेयी अथवा भरत द्वारा स्थापित राक्षसी राज्य अधिक घातक हो सकता है।

सहसा राम चौंक उठे—कैकेयी की बात और है। उसम तीव्र स्नेह और घृणा का विरल सम्मिश्रण है। उदात्त भावनाओ के जागने पर वह अत्यन्त उदार और क्रूर क्षणो म हिंस्र तथा अधम हो सकती है। पर क्या उन्हे भरत पर भी विश्वास नहीं है? क्या उनकी व्यक्ति की परख इतनी कच्ची है?

कुछ भी हो भरत की पहचान आवश्यक थी। भरत पर उन्होने कभी सदेह नही किया था। उनके चरित्र उनकी निस्वार्थता उनकी कत्तव्य परायणता उनकी मानवीयता—किसी भी सदभ म राम को तनिक भी सदेह नही था। पर फिर भी ककयी के व्यवहार ने राम को चेता दिया था।

अब उन्हें प्रत्येक पग पर सावधान रहना होगा। किसी को भी उसके बाहरी व्यापार व्यवहार तथा वार्तालाप के आधार पर स्वीकार नहीं करना होगा। सबका परीक्षण और सावधानी यदि भरत परीक्षण म खरे उतरे तो उनके राज्य म कोसल की जनता का अहित नहीं होगा। ऐसी अवस्था म राम नि शक दडक जा सकेंगे पर उस परीक्षण से पहले उन्हें अयोध्या म अपनी अनुपस्थिति के समय तक के लिए अनक प्रबध करने होंगे माता कौसल्या तथा सुमित्रा की रक्षा का प्रबध। अपने सेवकों मित्रो समर्थकों शुभकांक्षियों की रक्षा तथा भरण-पोषण का प्रबध। और राजनीति को सुमार्ग पर चलाए रखने का प्रबध सूचनाएं प्राप्त करने का प्रबध यह सारी व्यवस्था किए बिना राम अयोध्या नहीं छोड सकते

थोडी देर म लक्ष्मण लौट आएंगे। तब वन प्रस्थान की तयारी आरभ हो जाएगी। राम को उसम पूर्व ही व्यवस्था कर लेनी चाहिए व्यवस्था किस प्रकार की व्यवस्था? पिता वृद्ध हैं—अशक्त। गुरु वसिष्ठ वृद्ध भी हैं अशक्त भी और मर्यादावादी राजभक्त भी। लक्ष्मण उनके साथ ही वन जा रहे हैं। भरत के विषय म अभी कुछ कहा नही जा सकता। शत्रुघ्न भरत के प्रभाव म है। तो फिर कौन? माता सुमित्रा? वे अकेली सक्षम नहीं होंगी। उनकी सहायता के लिए कौन? राम की आखो के सम्मुख अनेक सज्ञाए अनक आकृतिया उभरने लगी गुरुपुत्र सुयन माता कौसल्या के शुभाकाक्षी यजुर्वेदीय तैत्तिरीय शाखा के आचार्य सूत और सचिव चित्ररथ कठशाखा और कलाप शाखा के दडधारी ब्रह्मचारी माता कौसल्या के प्रिय मेखलाधारी ब्रह्मचारी गर्ग गोत्रीय ब्राह्मण त्रिजट लक्ष्मण के विभिन्न युवा-सगठन—समस्त कर्मचारी किसी एक का नहीं, इन सबको सामूहिक रूप से दायित्व सौंपकर कदाचित राम निश्चित होकर जा सकें

'सीते।"

'जी।'

'किसी को माता सुमित्रा के महल मे भेजो और लक्ष्मण को कहलवाओ कि लौटते हुए गुरु वसिष्ठ के आश्रम मे रखे हुए महात्मा जनक द्वारा हम

लिए गए दिव्य धनुष दिव्य कवच तूणीर, सुवर्ण भूषित खड्ग ऋषि विश्वामित्र द्वारा प्रदत्त दिव्यास्त्र तथा अन्य शस्त्रास्त्र अपने साथ लेते आए। साथ ही सुयज्ञ चित्ररथ तथा त्रिजट को संदेश भिजवा दें कि मैं उनसे शीघ्रातिशीघ्र मिलना चाहता हूं। राम रुके और तुम भी माताओं से मिल आओ। मैं पुनः उनके सामने पड़ना नहीं चाहता।

"जी अच्छा!"

लक्ष्मण लौटे तो न केवल वे स्वयं साधारण अस्त्र शस्त्रों तथा दिव्यास्त्रों से लदे हुए थे वरन् उनके साथ आने वाले सुयज्ञ और समिधा चित्ररथ तथा अन्य मित्र भी बहुत सारे अस्त्र शस्त्र संभाले हुए थे। लगता था लक्ष्मण अपने साथ एक संपूर्ण शस्त्रागार ही उठा लाए हैं।

राम ने सहज अपने मित्रों का स्वागत किया और उन्हें आसन दिए।

शस्त्रास्त्र एक ओर रख कर वे बैठ गए। आगन्तुकों में से किसी के भी चेहरे पर न हास था न उल्लास। सबके मन भारी थे।

आपने सुना भैया!' लक्ष्मण बोले।

क्या?'

अभी-अभी कुछ राजाज्ञाओं की घोषणा की गयी है। लक्ष्मण ने बताया उनके अनुसार सम्राट के अंगरक्षक दल का अधिकार-क्षेत्र सम्राट के राजप्रासाद तक ही सीमित रहेगा, नगर का दायित्व पुनः साम्राज्य की सीमाओं की स्थायी सेना का होगा। उन्हें वापस बुलाने के लिए चर दौड़ा दिए गए हैं। तब तक नगर रक्षा का दायित्व कैकेयी के अंगरक्षक करेंगे। निजी सेनाओं पर से नियंत्रण हटा लिए गए हैं तथा न्याय समिति-सचिव पुष्कल को मुक्त कर पुनः अपने पद पर आसीन किया गया है।

'अर्थात सम्राट के सभी आदेश उलट दिए गये हैं। राम मुसकराए इसमें आश्चर्य की क्या बात है सौमित्र! यह तो देर-सबेर से सुनना ही था।

किंतु हम क्या सुन रहे हैं राम!' सुयज्ञ बोले।

तुमने ठीक सुना है मित्र! राम मुसकराए।

'पर, राम ! "

'सुनो बघु !' राम न सुयन की बात काट दी, 'मेरी अशिष्टता क्षमा करना, किंतु समय ही ऐसा है। यह निश्चित हो चुका है कि हम लोग वन जा रहे हैं। इस सदभ मे मुझे समझाना, बाधा देना या साथ चलने का आग्रह व्यथ है। तुम लोग अयोध्या की ओर स निश्चित होकर जाने म मेरी सहायता करो। मैं जा रहा हू, किंतु माता कौसल्या माता सुमित्रा अयोध्या की प्रजा तथा अयोध्या का राज्य पीछे छोडे जा रहा हू। इन सब का दायित्व तुम लोगों पर है। ऐसा न हो कि लौटू ता पाऊ कि अयोध्या नगरी भी दडकारण्य वन चुकी है।'

"स्पष्ट कहो राम ! सुयन बोल 'हमसे क्या अपक्षित है ?"

तुम्ह देखना है मित्र ! कोई अवश सम्राट दोनो माताओ तथा अयोध्या की प्रजा के साथ दुर्व्यवहार न करे। सबका भरण-पोषण यायोचित ढग से हो। अयोध्या म मानवीय समता के आधार पर यायपूर्ण राज्य हो। यहा स्वर्ण हिंसा तथा मदिरा का प्रभुत्व न हो। वर्ग भेद, साम्प्रदायिकता तथा अ य मानवीय विभाजनो को प्रोत्साहन न मिले जिसमे मानव द्वारा मानव का शोषण बन। प्रजा तथा राज्य की उचित रक्षा हो। विलास का ताडव यहा न हो। ऐसा करन के लिए, मित्र सुयन! अपने सहायक सहयोगी बुद्धिजीवी वग के प्रभाव का सदुपयोग करोगे। मित्र चित्ररथ ! तुम मत्रियों अमात्यो, राज-परिषद् क सदस्यो तथा राजपुरुषा पर दष्टि रखाग। आवश्यक होन पर उ ह सतक करोगे और उ ह उचित माग का इगित कराग। और मित्रो !" वे अ य आगतुको की ओर मुडे 'सामा य प्रजा का सुख दु ख देखन उनसे सपक बनाए रखने, उसकी रक्षा करन और उसकी बात मुझ तक पहुचान का काय मैं आप युवा सगठनो के अध्यक्षों, यजुर्वेदीय तत्तिरीय शाखा के आचाय कठशाखा तथा कलाप शाखा क दडधारी ब्रह्मचारियो तथा माता कौसल्या के प्रिय मेखलाधारी ब्रह्मचारियो पर छोड रहा हू। आप लोग जन-सामा य स मिलते जुलते है सपक बनाए रखत है—आपके लिए यह काय कठिन नही हागा।'

'राघव ! हम सहप इस दायित्व को स्वीकार करते हैं।' चित्ररथ बोले, 'यह आपका ही नही, हमारा अपना काम है। आप चिता न करें।

आपकी सावधानी सवथा उचित है। पर यदि काई अनिष्टकारी स्थिति आ जाए और हमारे सभाल न सभल तो उसकी सूचना आपको कस दी जाए ?'

राम मुसकराए आप सावधान रहगे तो ऐसी स्थिति नहीं आएगी। आ गयी तो लक्ष्मण को अयोध्या लौटना होगा। वसे सरयू पार करते ही अयोध्या से बाहर त्रिजट का आश्रम है। उस भी मैंने बुलाया है। वह किसी भी क्षण आ सकता है। आप उन तक सूचना पहुचा दें। वह उस सूचना को अगले पडाव तक पहुचा देगा। इस प्रकार एक एक पडाव चलती हुई वह सूचना मुझ तक पहुच जाएगी।

सुमन और चित्ररथ ने सिर हिला दिए। उनका मन कुछ हल्का हो गया था। राम उनसे दूर अवश्य जा रहे थे किन्तु उनसे असपक्त हो जाने की आशका नही थी।

राम पुन बोले सुयज्ञ ! व्यवस्था का थोड़ा काय शेष है। अपने कमचारियों के व्यय क लिए मैंने पर्याप्त धन सौंप दिया है। फिर भी चाहता हू कि मेरी अनुपस्थिति म मेरे कमचारियो मित्रों, सबधियों अयोध्या क आश्रमो तथा जन-कल्याण म लगी सस्थाओं को आर्थिक सकट न झेलना पडे इसलिए शेष धन तुम मेरी ओर स ग्रहण करो, उसकी रक्षा करो और अवसर देखकर उचित व्यय करो। और मित्र ! जानकी अपनी सखी आर्या समिधा को उपहारस्वरूप कुछ हार सुवण सूत्र, करधनी, अगद तथा केयूर देना चाहती हैं। आर्या समिधा उन्हें स्वीकार करें। अपना हाथी शत्रुजय मैं तुम्हे अपनी स्मृति-स्वरूप दिए जाता हू।"

राम ने थमकर एक दृष्टि सारे मित्रों पर डाली, और कुछ भारी स्वर म बोले अच्छा मित्रो ! विदा। यहा की व्यवस्था कर, अपने-अपने घर चले जाना। केवल चित्ररथ तथा सुयज्ञ हमारे शस्त्रास्त्रों के साथ त्रिजट के आश्रम पर पहुच जाएं। त्रिजट अब तक आ नहीं सका। उससे अब उसके आश्रम मे ही मिलूगा।"

उन्होने मुडकर सीता और लक्ष्मण की ओर देखा 'चलो ! पिता से विदा लें।'

सम्राट से विदा लेने के लिए जाते हुए राम, सीता तथा लक्ष्मण राज-मार्गों से पदल निकले। उनके मित्रों, सुहृदो तथा कमचारियों का झुड उनके पीछे था।

समाचार फैल चुका था। मार्गों पर अपार भीड एकत्रित थी। प्रत्येक भवन के द्वार तथा गवाक्ष खुले थ। गरजते समुद्र के समान विराट जन-समुदाय एकत्रित था। प्रत्येक गली मे निकल निकलकर भीड उस जन-समुदाय म मिलती जा रही थी। कुछ लोग मौन थे कुछ धीरे धीरे बातें कर रह थे, कुछ चीख चिल्ला रहे थे। सब आर एक प्रकार का क्षोभ, एक आवेश एक क्रोध और विरोध विद्यमान था। किंतु कोई नहीं जानता था कि उसे क्या करना चाहिए वह क्या करना चाहता है

राम ने सतक दृष्टि से लक्ष्मण को देखा, "सौमित्र! इस जन-समुदाय को देख रहे हो! यह आवेश म है, स्वय को अक्षम पाकर असतुष्ट और पीडित भी है। यह जन-समुदाय अति प्रज्वलनशील और विस्फोटक है। देखना, कहीं अपने व्यवहार अथवा वाणी से इसे उकसा मत देना नहीं तो विप्लव हो जाएगा। सारी व्यवस्था समाप्त हो जाएगी। माता कैकेयी अपनी प्रतिहिंसा म भूल गयी कि शासक को बनाने और पदच्युत करने म, प्रजा की इच्छा बहुत महत्त्वपूण तत्त्व है। प्रजा के इच्छा क विरुद्ध वे भरत को ता क्या मुझे भी *अयोध्या का सम्राट नहीं बना सकती।* यह घरेलू झगडा भी राजनीतिक आयाम मिलत ही विप्लव म बदल जाएगा।"

इच्छा तो होती है कि धनुप लेकर इस समुदाय के आगे-आगे चलू और कैकयी के महल पर पहुच कर बस एक बार ललकार दू।" लक्ष्मण बोले किंतु वन जाने के लिए शात रहना ही उचित है।'

वे लोग बढते रहे। उनके साथ-साथ भीड भी बढती गयी। कैकेयी के महल तक पहुचते-पहुचते असख्य लोग राम के पीछे चल रहे थे।

महल म प्रवेश करने से पूव राम भीड की आर मुडे, और ऊची आवाज में बोले 'मित्रो! मैं आपके प्रेम और स्नेह का अभिनन्दन करता हू। आप अशात न हों। माता कैकेयी ने मुझे वन भेजना चाहा है, और पिता ऐसी आज्ञा देना नहीं चाहत। समाधान यही है कि वन जाने का

दायित्व मैं अपने ऊपर ले लू। मैं वही कर रहा हू। सीता और लक्ष्मण मेरे साथ जा रहे है। अयोध्या का दायित्व मैं आप पर छोड रहा हू। राजा कोई भी हो किंतु अयोध्या आपकी है। राज्य शासक का नहीं जनता का होता है। आप सजग रह सचेत रह। अपनी अयोध्या की रक्षा करें और देखें कि अयोध्या का कोई भी शासक अनीति के माग पर चल दभ अथवा विलास मे पड, जन विरोधी शासन न कर।

राम ने हाथ जोड मस्तक झुका प्रजा का अभिवादन किया, और महल के प्रवेश द्वार की ओर मुड गए। अपनी पीठ के पीछे प्रजा के सहस्रो कठो से व अपनी जय जयकार सुन रहे थे।

सुमत्र के माध्यम से सूचना भिजवा जिस समय राम सीता और लक्ष्मण के साथ भीतर प्रविष्ट हुए कैकेयी के कक्ष म प्रात काल जैसा एकात नहीं था। वहा माता कौसल्या, माता सुमित्रा तथा सम्राट की अन्य रानिया उपस्थित थी। वसिष्ठ भी विराजमान थ। राज-परिषद के मुख्य सदस्य मत्री, अमात्य तथा सेनापति भी वतमान थे। सम्राट पहले के समान पृथ्वी पर नहीं पडे थ उन्ह पलग पर लेटा दिया गया था। ऐसा लगता था जसे राजपरिवार और राजदरबार के सभी मुख्य व्यक्ति सम्राट को घेरकर किसी महत्त्वपूण घटना की प्रतीक्षा कर रहे थे।

राम सीता तथा लक्ष्मण ने आखें मूदे निस्पद पडे दशरथ को प्रणाम किया।

राम ने मद स्वर म कहा पिताजी !

दशरथ कुछ कहने का साहस बटोरें उससे पूव ही अनेक नारी-कठो से सस्वर रुदन और चीत्कार फूट पडा।

राम ने देखा—व सब सम्राट की सुदरी युवती पत्निया थीं जिनके साथ सम्राट ने कभी आकर्षित होकर अपनी इच्छा से कभी किसी के प्रस्ताव पर अथवा किसी की भट स्वीकार करने के लिए विवाह किए थे। राम ने सम्राट के एस अनेक विवाह अपने शशव स देखे थे—जिनम एक स्त्री के साथ विवाह कर, उस दो तीन दिन अपने महल मे रख राजसी अत पुर म धकेल दिया जाता था। अत पुर मे जाकर न वे किसी की

पुत्रिया थी न वहनें न पत्निया—वे अत पुर की स्त्रिया होती थी। उनके भरण-पोषण का भार राजकोप पर होता था। और किसी का उनके प्रति कोई दायित्व नहीं था।

राम ने जैसे-जैसे होश सभाला था उनकी करुणा अपनी इन तथाकथित माताओं के प्रति बढती चली गयी थी। उन स्त्रियों की स्थिति अत्यत विचित्र थी—न वे बदिनी थी न स्वतत्र। वे सौभाग्यवती विवाहिताए थी, किंतु पति विहीना। वे रानिया थी, किंतु राजपरिवार की सदस्या के रूप म उनम से किसी को कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। अत पुर मे कोई काम नहीं था अत पुर स निकल भागना उनके वश का नहीं था। लगडी बिल्ली के समान व घर के भीतर ही शिकार करती रहती थीं। परस्पर एक दूसरी की सहायक होने के स्थान पर एक-दूसरे के विरुद्ध षडयत्र रचकर, परिवेश को विषला करती रहती थीं

ताडका वन म स अनेक अपहृता बदिनी युवतियो को मुक्त करा कर, राम इन रानिया क प्रति विशेष रूप स सदय हो गए थ। उन्होंने इनके विषय म कई बार सोचा था—एक पुरुष के लिए इतनी स्त्रियो को पत्नी का मान-सम्मान, प्यार और अधिकार देना सवथा असभव तथा अप्राकृतिक था। जिस प्रकार अन्यायपूर्वक अपनी आवश्यकता से अधिक धन एकत्रित कर साप बन, उस पर बठकर अपना या दूसरो का केवल अहित किया जा सकता है वैसे ही इतनी पत्निया को एकत्रित कर न केवल सम्राट न मानवीय अन्याय किया था वरन् अपना और उनका अहित भी किया था। यदि कहीं से स्त्रिया अपहृत कर बलात् लायी गयी होती उन्ह बलपूवक अवरोध म रखा गया होता तो राम उन्ह कब स मुक्त करा चुके होत। किंतु कठिनाइ यह थी कि वे सम्राट की विवाहिताए थीं। वे मुक्त होना नही चाहती थी पत्नी का अधिकार पाना चाहती थी—जो असभव था। उनका बधन न तो अत पुर की दीवारों का था, न सम्राट के पतित्व का। उन्ह उनके अपने सस्कारो न बदी कर रखा था। शशव से उनके मन मे बठा दिया गया था कि नारी का सबस बडा सौभाग्य उसका सुहाग है। पति उसका परमेश्वर है, चाहे पति के नाम पर उन्हें अयोग्य स अयोग्य अमानव क साथ बाध दिया जाए। आज यदि सम्राट इन स्त्रियो को **मुक्त**

भी कर दें उन्हे अपनी पत्निया मानने से इनकार भी कर दें—तो य स्त्रिया उसे अपना सौभाग्य नही मानेंगी वे प्रस न नही होगी। वे परित्यक्ता की पीडा झेलेंगी और परित्यक्ता की पीडा कभी-कभी विधवा की पीडा से भी अधिक घातक होती है। राम इन स्त्रियो के सस्कार नही बदल सके, किंतु अगली पीढी को वे इन गलत सस्कारो का विरोध करना अवश्य सिखाएगे उनके भीतर विद्रोह जगाएगे।

राम ने सम्राट की पत्नियो को करुणा भरी दृष्टि से देखा और बोले, देवियो ! मुझे जाना ही होगा। अपना ध्यान रखना और न्याय के प्रति सजग रहना।'

सम्राट् ने हल्के से अपनी आखें खोलीं और डबडबा आयी उन आखो से राम को देखा 'पुत्र राम ! मुझम शक्ति थी तो विवेक नही था। अब समझ आयी है तो कम शक्ति नही है। जिनसे प्रेम करना चाहिए था उन्हे सदा दुत्कारता रहा, और जो दुत्कारने योग्य थे उन्हे गले मे लगाता रहा। ' सहसा दशरथ न फिर आखें बद कर ली जसे राम की ओर देखना उनके लिए पीडादायक हो ' मत्री सिद्धाथ मे कहो कि वे मेरा समस्त धन कोष अन्न भडार अयोध्या के कुशल वास्तुकार तथा मेरी चतुरगिणी सेना लेकर राम के साथ जाए। राम को समस्त मनोवाछित भोगो से सपन्न कर अयोध्या से भेजा जाए

'नही ! कैकेयी के चीत्कार ने सम्राट की वाणी को मूक कर दिया परपरागत उत्तराधिकार म मिले हुए राज्य को इस प्रकार लुटाने का अधिकार किसी को नही है—स्वय सम्राट को भी नही। व अपना राज्य केवल अपने युवराज को ही दे सकते है। मैं स्वय को इस प्रकार प्रवचित होने नही दूगी।

'धिक्कार !' सब कुछ चुपचाप सुनने वाले सुमत्र सहसा अपना नियत्रण खो बठे। उनके मुख का वण क्रोध से विकृत हो उठा। आखो से जसे चिनगारिया फूट रही थी।

सूत ! ककयी का स्वर स्पष्ट तथा दढ था 'जितना चाहो धिक्कारो। किंतु मनचाहा वर मागने का अधिकार मुझे है। सम्राट या तो मुझे वर दें या न दें। वर देकर अनदिया करने का अधिकार उन्हे मैं

नही दूगी। यदि वे मुझे वर देते हैं तो राम अभी यही वल्कल धारण कर वन जाएगे। '

कैकेयी ने अपने भडारी को सकेत किया, और वह अगले ही क्षण अनेक वल्कल वस्त्र लेकर उपस्थित हो गया।

राम ने किसी की ओर ध्यान नही दिया। वे स्थिर पगो से आगे बढे और उन्होने भडारी के हाथों से वल्कल ले अपने नाप के वस्त्र छाट, धारण कर लिये।

लक्ष्मण ने साथ-साथ वल्कल छाटते हुए कहा, 'मुझे नही मालूम था कि इस महल मे वल्कलो का लघु उद्योग चल रहा है। इतने वल्कलो मे तो सारी अयोध्या वन भेजी जा सकती है।'

कैकेयी उन्हे देखती भर रही कुछ बोली नही।

लक्ष्मण के हटते ही सीता आगे बढी। उन्होने पहला ही वस्त्र उठाया था कि अब तक के मौन साक्षी गुरु वसिष्ठ पहली बार बोले 'ठहरो, बेटी! वनवास राम को मिला है। रघुकुल की पुत्रवधू को वल्कल धारण कर वन-वन भटकने की अनुमति मैं नही दूगा।' गुरु, सम्राट से सबोधित हुए, 'सम्राट्! राम वन जाए। उनकी उत्तराधिकारिणी स्वरूप, उनकी अनुपस्थिति मे सीता अयोध्या का शासन सभाले।"

सीता ने तमककर अपना चेहरा ऊपर उठाया और जैसे अटपटाकर बोलीं, गुरुजनो के विरोध के लिए मुझे क्षमा किया जाए। उत्तराधिकार के नियमों का ज्ञान मुझे नहीं है। जहा राम रहेगे, मैं भी वहीं रहूगी। पत्नीत्व का अधिकार मुझे मिले, यहा मेरी प्रार्थना है।"

सीता ने गुरु की ओर मुड, दोनों हाथ जोड उन पर अपना मस्तक टिका दिया।

राम ने अपनी दाहिनी हथेली ऊची कर मौन का सकेत किया और ऊचे स्वर मे बोले, 'विवाद और प्रस्तावो का अवकाश नहीं है। यह निश्चित है कि मैं वन जा रहा हू। मेरे साथ सीता और लक्ष्मण भी जा रहे हैं। आप सब हमे अनुमति आशीर्वाद और विदा दें।'

राम ने पुन दशरथ को प्रणाम किया, पिताजी! मेरी मा आपकी आश्रिता हैं।"

सबको विदा की मुद्रा म हाथ जोड़ राम द्वार की ओर चल पड़। सीता तथा लक्ष्मण उनके साथ थ। उनके मित्र तथा कमचारी उनके शस्त्रास्त्र लिये उनके पीछे-पीछे चल रहे थे।

कौसल्या अपने स्थान पर निष्प्राण-सी बैठी राम को जाते देखती रही। उनकी आखें क्रमश आसुओ स धुधला गयी थी।

सहसा सुमित्रा तज-सज चलती हुई आयी और राम के सम्मुख द्वार की चौखट मे खडी हो गयी क्षण भर रुको राम। पुत्र तुम निश्चित होकर दडक जाओ और सकुशल लौटो। एक आश्वासन मुझसे लेते जाओ वत्स! सुमित्रा क रहते वहन कौसल्या का बाल भी वाका न होगा—यह इस क्षत्राणी का वचन है।

राम सीता और लक्ष्मण सुमित्रा के सम्मुख झुक गए।

सुमित्रा के मुख पर तज, उत्साह तथा चुनौती के भाव थे।

४

कैकेयी क महल से निकलकर राम सीता और लक्ष्मण राज मार्गों स हाते हुए नगरद्वार की ओर बढे। उनके पीछे उनके मित्र बधु-बाधव कमचारी, विभिन्न वर्गों के युवा नागरिक अनेक मप्रदायो के युवा सन्यासी और ब्रह्मचारी चल रह थे। जा भीड मार्गों पर छोड व महल के भीतर गय थे—वह अब भी वही विद्यमान थी। भवनो के गवाक्ष अब भी खुले थ और कुल-वधुए उनम स झुकी पड रही थी। उनके पहुचने से पहले, लोग स्तब्ध रहत थे, उनके निकट पहुचने पर, उनकी आखो म करुणा उभर आती थी, और उनके आगे बढ जाने पर उनकी जय ध्वनि होन लगती थी।

राम कहीं मुसकराकर एकत्रित भीड को देख लते, कहीं हाथ उठाकर उनकी शाति की कामना करते—कही वृद्ध जनो के दीख पडने पर, हाथ जाडकर, अभिवादन कर देते।

'भया ! मुझे सिद्धाश्रम स विदाई याद आ रहा है।' लक्ष्मण ने मुसकराने के प्रयत्न के बीच भारी गले से कहा।

'हा। कुछ वैसा ही है।' राम बोले, किंतु सौमित्र ! वहा लोगों के मन में हमारे प्रति करुणा नही थी।

'मुझे भी जनकपुर स अपनी विदाई याद आने लगी ता दोनों भाइयो को बुरा लगगा। सीता ने वक्रिम दृष्टि से बारी-बारी दोना को देखा।

राम आश्वस्त हुए—वनवास के कारण सीता हताश नही थी।

'पता होता कि भाभी इतनी ईर्ष्यालु हैं, तो भया को पहले जनकपुर जाने के लिए तैयार कर लेता। ये उपालभ तो न सुनने पडते। सिद्धाश्रम का काम तो लौटते हुए भी हो सकता था। स्वय भी साथ होती, तो सिद्धाश्रम की स्मृति बुरी न लगती।' लक्ष्मण मुसकराए।

इसी बुद्धि के कारण तो तुम्हे अभी तक पत्नी नही मिली, देवर!" सीता ने चिढाया तुम्हारे भया पहले सिद्धाश्रम गये, ताडका और सुबाहु को मारा, मारीच को भगाया, बहुलाश्व और उसके पुत्र को दड दिया, वनजा का उद्धार किया अहल्या को प्रतिष्ठा दी और तब जनकपुर पधारे। उनके आने से पहले उनका यश पहुचा। सबन उन्हे सम्मान दिया। सीधे चले आये होते, तो कोई पहचानता भी नही। अजगव के दशन भी न होते, वही पडे रहते अमराई मे मुनियो के साथ।

वह अवसर तो मैं चूक गया भाभी। बच्चा था न। अब बताओ पत्नी प्राप्त करने के लिए क्या करू ?

बच्चे तो तुम अब भी हो देवर! सीता मुसकराइ परहा वनवास की अवधि म ही तुम युवक हो जाओगे। इससे पूव ही वीरता के दो चार काम कर अपनी प्रतिष्ठा बना लेना। कोई-न-कोई वानरी या राक्षसी मिल ही जाएगी। सुना है उनम से कुछ असाधारण सुदरिया होती हैं।'

'मैं अकेला उत्तर की ओर चला जाऊ भाभी! कम-से कम मानवी तो मिलेगी—सुदर न भी हुई तो क्या।'

न देवर! अकेले कही मत जाना। उत्तर की ओर तो एकदम नही। उस ओर माता ककेयी के सजातीय बसते हैं।

भया! आप सुन रहे हैं। लक्ष्मण ने न्याय की माग की भाभी ने मेरे लिए कोई विकल्प ही नही छोडा।'

राम ने अपनी चिंता झटक, एक क्षण के लिए मुसकराकर, उन दोनो को देखा मैं नही सुन रहा। तुम दोनो मेरी बात सुनो। सामने सरयू के तट पर त्रिजट का आश्रम है। चित्ररथ तथा सुयन अपने रथों तथा कमचारियो के साथ वहा पहुच चुके होंगे। वही हमे आगे की योजना बनानी है। तब सौमित्र यह निणय ले सकेंगे कि उन्ह किस दिशा म

जाना है।"

'भया सब-कुछ सुन रह थे।' लक्ष्मण की आखें तिरछी हो गयी उनम शिकायत भी थी और प्यार भी।

सीता हस पडी।

उनके स्वागत के लिए त्रिजट अपन आश्रम के द्वार पर सुयन तथा चित्ररथ के साथ खडा था।

"स्वागत, राम!"

राम न आश्रम म प्रवेश किया। कधे से उतारकर अपना धनुष आसन के साथ, भूमि पर रखा और बैठ गये। यह सबके लिए बैठ जाने का सकेत था।

'सुनो त्रिजट!" राम ने बात आरभ की हमारे पास अधिक समय नहा है। आज सध्या तक हम तमसा तट तक पहुचना है। अत जल्दी चलना होगा। साथ आए इन सब बधुओ के भोजन का प्रबध शीघ्र कर दो ताकि विलब न हो।'

त्रिजट ने व्यवस्था कर रखी थी। सकेत पाते ही उसके शिष्य ब्रह्मचारियो ने भोजन परोसना आरभ कर दिया।

उधर भोजन चलता रहा और इधर सुयन चित्ररथ तथा त्रिजट आकर राम सीता तथा लक्ष्मण के निकट बठ गये।

हम समस्त शस्त्रास्त्र, अपने रथों मे रखकर अपने साथ ले आये हैं। सुयज्ञ ने कहा 'मरा विचार है कि यहा से हम सब चलें। रात को तमसा क तट पर ठहरें। प्रात सब मित्रो और ब्रह्मचारियों का विदा कर हम आपके साथ चलें और आपको शृगवेरपुर म निषादराज गुह तक पहुचा कर ही लौटें अन्यथा शस्त्रास्त्रा के साथ कठिनाई होगी।"

'आगे के लिए क्या प्रबध होगा राम! त्रिजट ने पूछा।

वहा से गुह के व्यक्ति हम भरद्वाज आश्रम तक पहुचा आएगे।' राम न कुछ सोचते हुए कहा आगे कठिनाई नही होगी। मेरा विचार है सुयज्ञ की योजना उत्तम है।

युवा-सगठनों के लिए क्या आदेश है?' चित्ररथ ने भोजन करते हुए

युवको की ओर सकेत किया।

'क्या लक्ष्मण !' राम बोले, "तुम्हारी युवा सेना अयोध्या मे ऊधम तो नही मचाएगी ?'

'यह तो भरत के व्यवहार पर निभर है!' लक्ष्मण न उत्तर दिया "याय-सगत शासन को ये सहयोग दगे, और यदि भरत ने कैकेयी की प्रतिहिंसात्मक नीति अपनाई तो य अयोध्या को जलाकर क्षार कर दगे।

तो ठीक है मत्रीप्रवर ! राम ने कहा लौटकर अधिकाश ब्रह्मचारी त्रिजट के आश्रम पर ही रहगे। ये लाग अपनी विद्या साधना तथा नान का अभ्यास करेंगे, पर त्रिजट ! लौकिक शस्त्रास्त्रा का अभ्याम भी इन्ह अवश्य कराना। लक्ष्मण के सारे युवा सगठनो के नागरिक सदस्य *अयोध्या म निवास करेंगे। वे प्रतीक्षा करेंगे। यदि सब कुछ सुख शाति स* "यायपूवक चलता रहा—यदि राजनीतिक शक्ति का उपयोग जनता के विरुद्ध नही किया गया तो य आवश्यकतानुसार या तो तटस्थ रहग अथवा भरत का समथन करेंगे। किंतु यदि भरत की राजनीति ने स्वय को जन-विरोधी सिद्ध किया अथवा प्रतिहिंसा की नीति अपनाई तो अयोध्या क भीतर उसक विरोध का दायित्व इन्ही सगठनो पर होगा। यदि भरत न सैनिक अभियान किया तो त्रिजट आश्रम के ब्रह्मचारियो को अप्रत्यक्ष छिपा युद्ध करना होगा ताकि अत्याचारी सेना की गति रोकी जा सके। किंतु सम्मुख युद्ध वे लोग नहीं करेंगे। सम्मुख युद्ध की आवश्यकता पडी तो वह शृगवेरपुर की निषाद सना करेगी। मैं सारी गतिविधि का निरीक्षण चित्रकूट से करूगा और स्थिति पूरी तरह स्पष्ट हो जान पर ही आग बढूगा।"

एक बात कहने की अनुमति मैं भी चाहूगी। सीता बोली।

बोलो प्रिय !

आशकाओ ने अयोध्या म पर्याप्त अनर्थ कर डाला है—आशकाए चाहे सम्राट की रही हो अथवा माता कैकयी की। कही ऐसा न हो कि भरत बचारा भी भरत विरोधी आशकाओ के कारण ही पीडित हो। राम समथक सभी "यक्तियो और सगठना का भरत की ओर स प्रतिहिंसा की आशका है। ऐसा न हो कि अपनी इन आशकाओ के कारण भरत को

गलत समझकर उसका विरोध आरंभ कर दिया जाए। एक बात और भी है। आपके समर्थक संगठित और सशस्त्र हैं। कहीं अपनी शस्त्र शक्ति के प्रमाद में ये लोग भरत के शासन की उपेक्षा करें, उसमें प्रतिहिंसा न जगा दें।"

"नहीं भाभी!" लक्ष्मण बोले, 'हमारे समस्त संगठन सहिष्णु और सहनशील हैं।"

'जैसे तुम हो, देवर!" सीता मुसकराईं।

उग्रता में भैया जैसे और सहिष्णुता में मुझ जैसे। "

लक्ष्मण की बात भागते आते हुए एक ब्रह्मचारी ने काट दी। वह काफी तेजी से भागता हुआ आया था और हांफ रहा था।

'आर्य कुलपति!' उसने त्रिजट को संबोधित किया, अयोध्या की दिशा से एक राजसी रथ बड़ी तेजी से इस ओर बढ़ता हुआ देखा गया है। वह अत्यल्प समय में यहां आ पहुंचेगा।'

लक्ष्मण ने अपना धनुष पकड़ा और उठकर खड़े हो गये।

"ठहरो, धैर्यशील देवर!' सीता ने हाथ से संकेत किया।

थम जाओ, लक्ष्मण! राम हंसे, 'मुझे अनिष्ट की तनिक भी आशंका नहीं है। अभी अयोध्या का शासन सम्राट के हाथ में है। और फिर एकाकी रथी हमारा क्या कर सकता है। संभव है कोई महत्त्वपूर्ण समाचार हो।"

उसी क्षण दो अन्य ब्रह्मचारी, समाचार देने के लिए उपस्थित हुए 'आर्य कुलपति! अयोध्या से आर्य सुमंत्र सम्राट के संदेश के साथ आए हैं।"

'उन्हें सादर लिवा लाओ।' त्रिजट ने कहा।

शेष लोग मौन रहे। क्या है सम्राट का संदेश? ऐसी कौन-सी बात है, जो सम्राट अयोध्या में नहीं कह सके, और उसके लिए पीछे से सुमंत्र को भेजा गया है। क्या सम्राट की ओर से कोई गुप्त संदेश है?

सुमंत्र आए। राम ने उन्हें प्रणाम किया। चारों ओर स्तब्ध मौन देखकर वे समझ गए कि सब उनकी ही प्रतीक्षा में थे। वे उच्च स्वर में

बाल आय ! आपक चल जान क पश्चात राजमहल म वाद विवाद तो अनक हुए है किंतु स्थिति म कोई परिवतन नही आया है। सम्राट के आदश से मैं एक श्रेष्ठ रथ लकर आपकी सेवा म आया हू। उनकी इच्छा है कि रथ मे आप लोगो को घुमा फिराकर व य जीवन का परिचय करा दू। आप लोग यह दख लें कि जानकी किसी भी प्रकार व य जीवन की कठिनाइया नही सह पाएगी। अत आप अयोध्या लौट चलें।

तात सुमन्त ! राम क अधरो पर मोहक मुसकान थी रथ की हम बडी आवश्यकता है। हम रात से पूव तमसा तट और कल अवश्य ही शृगवेरपुर तक पहुचना है। शृगवेरपुर तक आप हम पहुचा दें। व य जीवन दिखाकर लौटाने की बात आप न सोचें। लौटना असभव है।

लौटना असभव है। सुमत्र का स्वर हतप्रभ था।

'पूणत !

'जानकी भी नही लौटेंगी ?

नही ! सीता, राम से भी अधिक दढ थी।

सुमत्र स्तभित-से उनको देखत रहे जस समझ न पा रहे हो कि क्या कह। फिर कुछ सभलकर बोले सम्राट की आशका पूण हुई। व जानत थे कि तुम नही लौटोग। पर पिता का मन । उनकी मुद्रा बदली जस युद्ध म कोई योद्धा पतरा बदलता हो राम ! सम्राट ने अपनी पुत्र वधू क लिए कुछ वस्त्राभूषण भिजवाए हैं। ये राजकोष से नही सम्राट के निजी कोष से भिजवाए गए है। इन पर ककयी का कोई अधिकार नही है। सम्राट के साथ-साथ राजगुरु न भी इह ग्रहण करने का अनुरोध किया है।

सीता ने आखो म सकोच भरे क्षण भर राम को देखा जस सोच रही हो कि उत्तर राम देंगे या व स्वय दें। किंतु जब राम कुछ नही बोले तो वे स्वय सुमत्र स सबोधित हुइ तात सुमत्र ! यह सम्राट का अनुग्रह है। किंतु मैं अपने वस्त्राभूषण अयोध्या म त्याग आयी हू। अब और आभूषण लेकर क्या करूगी ? तापसी द्वारा वस्त्राभूषण ग्रहण किय जाने म क्या औचित्य है ?'

सुमत्र का मुखमडल मुरझाकर एकदम दीन हो गया जस हरी फसल

पर ओने पड़ गय हा। उनकी आखें डबडबा आयी। वाणी रुध गयी। कापते कठ से बोले, "वैदही ! वद्ध ससुर की भावनाओ पर निष्ठुर आघात मत करो। पुत्रि ! अपनी सतान म एक अदभुत मोह होता है किंतु यह वद्ध तुम्ह बताना चाहता है कि पुत्र-वधू के प्रति श्वसुर की भावना पिता की भावना से भी सूक्ष्म और कोमल होती है। जो कुछ वह अपनी पत्नी और सतान के लिए नही कर सकता समय होने पर अपनी पुत्र-वधू तथा पौत्र पौत्रियों के लिए करना चाहता है। सम्राट की भावना का अनादर न करो सीत !

सुमत्र की अवस्था देख सीता स्तब्ध रह गयी जैसे वह सुमत्र न हो, स्वय दशरथ हो।

अपने विवाह के पश्चात सोता न सुमत्र को बहुधा राजमहलो म देखा था किंतु यह कभी नही सोचा था कि वे इस परिवार स भावात्मक धरातल पर भी इस सीमा तक जुडे हुए हैं—विशेषकर सम्राट से। तभी तो सम्राट ने उन्ह अपन निजी सारथी से मत्री तक के दायित्व सौंप रखे थ। सीता ने सम्राट के इस रूप को कभी नहीं देखा था। सुमत्र इतन पीडित थे तो स्वय सम्राट कितने पीडित होग

आय !" सीता न मधुर स्वर म कहा आप स्वय को मेरी स्थिति म रखकर सोचें। अपना धन धान्य दान कर यदि श्वसुर की भेंट स्वीकार करूगी तो क्या यह त्याग का नाटक मात्र न होगा ?"

तात !" राम बोल मेरी ओर स भी सोचिए। अयोध्या स स्वय खाली हाथ निकल आऊ और सीता क माध्यम स धन सपत्ति साथ ले चलू क्या यह तपस्वी जीवन जीना होगा ?'

'मैं तक नही कर सकता।" सुमत्र कातर स्वर म बोले 'मेरा तक तो मात्र भावना का है।'

'राम !" सुमत्र बोले, विवाद अनावश्यक है। देवी इस भेंट को अगीकार करें। सम्राट ने कुछ सोच समझकर ही, ये वस्त्राभूषण भेजे हैं। आप शस्त्रास्त्र ल जा रहे हैं, सीता को वस्त्राभूषण ले जाने दें। य भी एक प्रकार के शस्त्रास्त्र ही हैं। समय आने पर आप सब की रक्षा करेंगे। धन भी अपने आप मे एक बल है—उसकी क्षमता सम्म नहीं है।'

ग्रहण कर देवी वदेही !" मत्री चित्ररथ ने कहा।

"ग्रहण करें भाभी ! ' लक्ष्मण ने भी उसी स्वर म कहा, और फिर स्वर दबाकर धीर स बोल, अपनी देवरानी को आप आभूषण तो पहनाएगी ही राक्षसी हुई तो क्या वानरी हुई तो क्या और मानवा हुइ ता क्या ?

सीता मुसकराकर चुप रह गयी।

सुमत्र के सकेत पर ब्रह्मचारियो ने वस्त्राभूषणो का पिटारा सीता क सम्मुख रख दिया। सीता न उसम मे दो एक आभूषण धारण कर लिये यह ग्रहण की स्वीकृति थी।

सुमत्र प्रसन्न हा उठे मैं धन्य हुआ दवी जानकी !'

भोजन समाप्त हात ही चलने की व्यवस्था की गयी। राम सीता, लक्ष्मण तथा कुछ ब्रह्मचारी सुमत्र क रथ म आरूढ हुए। सुयन अपने अनेक ब्रह्मचारी शिष्यो क साथ अपन रथ म थे। चित्ररथ कुछ युवाओ क साथ अपने रथ म बठ। शेष लोग निजट आश्रम के छकडो पर सवार हुए। साथ चल पडा।

सुमन्त्र के घोडे शक्तिशाली और वेगवान थ। चित्ररथ तथा सुयज्ञ के रथो के घोड भी अच्छे थ। किंतु आश्रम क छकडा के घोड उस गति स नही चल सकत थे। अत सब लोगो को धीमी गति से चलना पड रहा था।

रथ और छकडे बढत चले गए। सूय ढलने लगा था। धूप म भी वह प्रखरता नही रही थी। सब लोग सहसा ही चुप हो गए थे—कुछ अतीत की स्मृतियो म खोए थे कुछ को भविष्य की चिंता थी वतमान म तो केवल चलना ही था।

क्या सोच रहे हो सौमित्र ? राम न पूछा।

सोच रहे हैं कुछ जल्दी चल पन्न वन के लिए। उत्तर सीता ने दिया कम स कम विवाह करके चलते तो सम्राट छोटी पुत्र वधू के लिए भी एक पोटली आभूषण तो भेजते ही।'

सुना लक्ष्मण ! राम मुसकराए 'यदि कटाक्षो की गति यही रही तो चौदह वर्षों म तुम परेशान हो जाओग।

'भाभी अपनी उदासी छिपाने के लिए चुहल कर रही हैं। यह वाकचातुय तो केवल आवरण है। उदासी दूर हो जाएगी तो मुझे परेशान करना भी छोड देंगी।' लक्ष्मण ने असाधारण सहिष्णुता का परिचय दिया।

चलो। उदास तुम होगे, देवर! जिसे अपने निपट बचपन म ही मा से दूर जाना पड रहा है। मैं तो अपने पति के साथ वन विहार के लिए जा रही हू।'

सीता मुसकरायी, पर अपनी गभीरता छिपा नही पायी। पता नही लक्ष्मण ने परिहास किया था या सचमुच वे सीता के व्यवहार का विश्लेषण इसी प्रकार कर रहे थ। पर सीता सचमुच उदास हो गयी थी। किस बात की उदासी थी? राज्य स, राजमहलो मे सुख-ऐश्वय से—उन्हे मोह नही था। राम साथ ही थे। तो क्या केवल माता कौसल्या के लिए? कितनी निभर थी माता उन पर। वसी कातर स्त्री सीता ने और कोई नही देखी। ममता वात्सल्य, प्यार। कौसल्या वास्तविक मा हैं—व स्त्री नही हैं मात्र भावना हैं। उनकी याद जब-जब आएगी सीता उदास हो जाएगी और माता सुमित्रा! सुमित्रा की याद भी सीता को आएगी। व उनको याद करके भी उदास हो जाया करेंगी, पर उनके लिए नही, अपने लिए। माता सुमित्रा क पास जाते ही कोई भी व्यक्ति आत्म विश्वास से भर जाता है। वे कवच के समान किसी को भी घेर लती है—निभय कर देती है। आते आते भी उन्होने कहा था " एक आश्वासन मुझसे भी लेते जाओ वत्स। सुमित्रा के रहत बहन कौसल्या का बाल भी बाका न होगा—यह इस क्षत्राणी का वचन है।" याद तो सीता को अपनी माता सुनयना की भी आती रही है। पर ममता व्यक्ति के कत य म तो बाधक नहीं होनी चाहिए। कत य और प्रगति के लिए व्यक्ति और समाज का कई बार निर्मोही होना पडता है।

सुमन्त ने रथ रोक दिया।

व लोग तमसा के तट पर पहुच गए थ।

पीछे आने वाले दोनो रथ भी रुक गए। धीरे धीरे शेष छकडे भी

आ पहुचे।

राम सीता तथा लक्ष्मण रथ से उतर आए।

'तात सुमत्र ! राम ने घोडो को थपकी देते हुए कहा इ ह खोनकर दाना-पानी दे ें और आप भी विश्राम करें।'

सुयन चित्ररथ और त्रिजट भी वाहना स उतर उनके पास आ गए।

मित्रो !' राम बोले सब के ठहरन की उचित व्यवस्था कर दो। वन म फल काफी सख्या और मात्रा म उपल ध है। उ ही का भोजन होगा। और एक बात सब को कायक्रम स्पष्ट समझा दा। कल प्रात हम बहुत जल्दी चल पडेंगे। हमार साथ क्वल आय सुमत्र सुयन तथा चित्ररथ जाएगे। शेप लोग आग जाने का हठ न करें अ यथा व्यवस्था भग हागी।

अनेक लोग विभि न प्रकार की यवस्थाओ मे लग गए किंतु सीता और राम का सारा काय स्वय लक्ष्मण न किया। उ होने एक ऊची सी जगह दख कर पत्ते बिछा राम और सीता के लिए दा ायाए तयार कर दी। तमसा से पानी लाकर उन शयाआ के निकट रख दिया।

फनाहार क पश्चात जब राम और सीता अपने लिए बनायी गयी शयाओ पर आ गए, तो अपन धनुप की टेक लगा लक्ष्मण उनसे कुछ हटकर पहरे पर खडे हो गए।

राम न सब कुछ चुपचाप देखा। अयोध्या से बाहर आज वह उनकी पहली रात थी। वनवास की सारी अवधि क रहन सहन का प्राय यही रूप होगा। बहुत होगा तो लक्ष्मण कोइ कुटिया बना देंगे। व लाग उम कुटिया म इसी प्रकार पत्र शयाओ पर साएगे। वक्षो से तोडकर लाए गए फल वन द्वारा दिए गए क द मूल नदी का जल और आहेर द्वारा प्राप्त आहार—इ ही पर चौदह वप कटेंगे। वस लक्ष्मण द्वारा बनायी गयी कुटिया काफी अच्छी और सुखद होती है। अयोध्या के बाहर क वनो म आहेर क लिए जाने पर अनक बार लक्ष्मण द्वारा बनायी गयी कुटियाओ मे राम रहे हैं। सनिक अभियानो म भी इसी प्रकार की अस्थायी यवस्था लक्ष्मण न की है। वे लक्ष्मण की इस कला के प्रशसक रहे है।

सिद्धाश्रम की यात्रा म भी, गुरु न कई बार उन्हें पड़ों के नीचे ठहराया था किंतु भेद केवल इतना है कि इस बार वे अयोध्या के निर्वासित राजकुमार हैं, और निवासन की अवधि बडी लबी है।

लक्ष्मण पहरे पर खड हैं। य ऐसे ही सन्नद्ध रहग। कदाचित् लक्ष्मण को यह वनवास कष्टप्रद न लग। लग भी ता वे ऐसा दिखाएग नहा। जीवन के कष्ट लक्ष्मण का दीन नही कर पात—वे उन्ह चुनौती-से लगत हैं, और चुनौतिया लक्ष्मण की जिजीविषा म वद्धि ही कर सकती हैं—उसका क्षय नहीं। किंतु सीता! सीता ने कहा था कि व साधारण कया हैं और सम्राट सीरध्वज ने उन्ह साधारण जीवन के लिए भी प्रशिक्षित किया है। पर क्या इतना लबा वनवास सीता झेल पाएगी? अभी तो वे यात्रा म हैं इसलिए नवीनता के आकषण म कदाचित वन्य कष्टों का अनुभव न करें। किंतु जब वे एक स्थान पर ठहर जाएगे जीवन नियमित और उबाऊ हो जाएगा—तब सुविधाओं का अभाव अधिक खलेगा। तब कोई व्यवस्था करनी होगी

क्रमश कोलाहल शात हो गया। प्रत्येक व्यक्ति कहीं-न-कहीं स्थिर हो गया था। कुछ ही समय म प्राय लोग सो गए थे।

लक्ष्मण को सोना नही था, न ही वे उनीदे थ। विभिन्न प्रकार के विचार उनके मस्तिष्क म उथल-पुथल मचा रहे थ। मन सिद्धाश्रम की यात्रा से इस यात्रा की तुलना कर रहा था। उस यात्रा का उद्देश्य क्या था, और इस यात्रा का उद्देश्य क्या है? यह वनवास सुखद है अथवा दु खद? इसके लिए कौन उत्तरदायी है—दशरथ? कैकेयी?? या स्वय राम??? इसके लिए किसी को दोष दिया जाए या न दिया जाए? यदि दिया जाए तो किसको कितना दोष दिया जाए? अयोध्या म पीछे क्या होगा? भरत की प्रवत्ति क्या होगी? कैकेयी का प्रभाव किसकी कितनी क्षति करेगा?

सुमत्र आकर लक्ष्मण के पास बैठ गए मुझे नीद नही आ रही सौमित्र!

'आइए तात!" लक्ष्मण बोले 'जब तक नींद न आए मरे पास

चढिए।"

तुम सालोग नही लक्ष्मण ?

"मैं पहर पर हू आय।"

किंतु वनवास तो चौन्ह वर्षों का है। सुमन्न ने कहा।

लक्ष्मण हस पड, शृगवेरपुर अथवा ऋषि आश्रमों म पहरे की आवश्यकता नही हागी। फिर वन म जहा कही भया राम अपना आश्रम बनाएग वहा सुरक्षा की समुचित व्यवस्था हागी। चौन्ह वर्षों तक कोई व्यक्ति निन रात नही जाग सकता आय। और आखिर तो लक्ष्मण भी एक व्यक्ति मात्र ही है।'

यही ता मैं भी सोच रहा था राजकुमार! सुमन्न बाल एसी मरा सभव नही है। पर अयोध्यावासी तो अब शायद सुख की नीद कभी नही सोएग।

सुमन्न सहमा उदास हो गए।

क्यो आय ?'

लक्ष्मण! यक्ति को अशुभ नही बोलना चाहिए। राजा के विषय म और भी नही। उस व्यक्ति के विषय म तो एकदम नही जो तुम्हारा कुटुम्बी हो। पर फिर भी मैं अपनी चिंता तुम्हारे सामने प्रकट कर रहा हू।

क्या बात है, आय सुमन्न ? लक्ष्मण के स्वर म हल्की सी चिंता थी।

तुम्हारे आन के पश्चात अयोध्या म स्थिति अधिक नही बदली। सम्राट उसी प्रकार आखें बद किए आधे सोए आध जागे-स पडे है। हा इतना परिवतन अवश्य हुआ है कि वे ककेयी के महल से हटकर साम्राज्ञी कौसल्या के महल म चल गए है। सम्राट पश्चात्ताप और आत्मग्लानि से अत्यधिक पीडित हैं। व भयभीत भी हैं। सोए माए चीत्कार करन लगत है। एसा लगता है मानो अपने शत्रुओ को देख रहे है। और फिर अपनी रक्षा क लिए राम को पुकारने लगत है मुझे लगता है, यह स्थिति उनके प्राण ले लेगी

लक्ष्मण ने उपक्षा से अपना मुह दूसरी ओर फिरा लिया।

तुम उनसे वहुत रुष्ट हो।" सुमत्र वोले ' किंतु मैं सम्राट का वाल-
खा हू पुत्र। मरी ममता लवे साहचय से ज मी है। मैंने सम्राट का वह
प देखा है, जव उनकी दप दीप्त आखें आकाश से नीचे नही देखती
था। चेहरे पर तज दिपता था। उनकी ठोकरा से पहाड हिल जाते
थ

आपने उनका वह रूप नही दखा आय सुमत्र! लक्ष्मण की वाणी
वक्र हा उठा जब सुन्दरी युवती देखत ही उनके मुह म पानी भर आता
था। विभिन्न सामान्य जन की कन्याओ, सामता की पुत्रियो और राजाआ
की राजकुमारियो का वे अपने सनिक बल की धमकी अथवा वास्तविक
बल स प्राप्त करते थे। अपनी साम्राज्ञी को उन्हाने जूत की नोक पर रखा
और राम जस पुत्र की विकट उपेक्षा की। आपने उनका वह रूप नही देखा,
जव व क्रमश वृद्ध हो रहे थे काया और बुद्धि क्षीण हा रही थी, आखो की
ज्योति मद हा रही थी पेशिया गलकर चर्वी बन रही थी और तब भी
सम्राट वर यात्राए कर रहे थे। दप स दमकती कवयी के पीछे अनाथ वृद्ध
के समान डोलत फिरना क्या तनिक भी सम्मानजनक था '

मैंने यह सब भी देखा है सौमित्र! किंतु भद मात्र इतना है कि मैं
सम्राट को प्रेमी की दष्टि स देखता हू। उनकी दुबलताओं को पहचानकर,
उनके दोषो के प्रति करुणायुक्त हा उठा हू, और तुम उनके पुत्र होकर भी
उन्ह एक छिद्रान्वेषी आलोचक की दृष्टि मे दखत हा राजकुमार! जो
सारे गुणो को एक अवगुण पर वार देता है। सम्राट अपने दोष नही
जानत ऐसी बात नहीं है। अब जिस पश्चात्ताप से वे पीडित हैं, उसकी
ओर तुम्हारा ध्यान नहीं गया। अनेक वार उन्होन मुझस कहा है कि समय
रहत उन्होंने क्या नही समझा कि उनकी पत्नियो म से केवल साम्राज्ञी
कौसल्या उनसे प्रेम करती हैं। अन्य पत्निया उनसे घणा करती हैं भय
खाती हैं, अथवा उनसे कुछ प्राप्त करना चाहती हैं। रानी सुमित्रा का कल
दिन भर म उन्होंने कितना सराहा है। उन्होंने कहा रानी सुमित्रा के मन
म अथाह प्यार है, ममता है, पर वह ममता केवल पीडिता के लिए है।
पीडक लोगा के लिए उनके पास केवल घणा है। और यह उनका ही प्यार
और बल था, जो साम्राज्ञी को जिला ले गया—अन्यथा अयोध्या म एसा

कौन था, जो युवती कौसल्या और बालक राम की रक्षा करता। सम्राट ने स्वीकार किया है कि साम्राज्ञी के प्रति अपने पिता अज के मुखर स्नेह के कारण व साम्राज्ञी से उदासीन हो गए थे। साम्राज्ञी के विरोधहीन आत्म समर्पण ने उनके त्याग और बलिदान ने सम्राट की दृष्टि में उनका महत्त्व समाप्त कर दिया था। सम्राट का व्यक्तित्व उस समय मुखर वाक् चतुर, लीलामयी युवती की आकांक्षा करता था। वसी युवती अंत में उन्हें कैकेयी के रूप में मिली जिसने उन्हें इस स्थिति तक पहुंचा दिया।

लक्ष्मण के मन की वितृष्णा उनके चेहरे पर प्रकट हो गयी आप जो भी कहें आर्य सुमंत्र ! मैं वैसा व्यक्ति नहीं हूं जो तनिक से पश्चात्ताप के कारण किसी के सारे पूर्व अपराध क्षमा कर दे। मुझे आपके सम्राट से कोई सहानुभूति नहीं है। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि यदि भैया राम अनुमति दे देते तो सम्राट को या तो बंदी कर लेता या उनका वध कर देता। कैकेयी से मैं रुष्ट हूं, इसलिए नहीं कि उसने सम्राट को पीड़ित किया है उसके लिए तो मैं कैकेयी के सम्मुख नतमस्तक हूं। कैकेयी के प्रति मेरा क्रोध भैया राम के निर्वासन के कारण है लक्ष्मण रुक गए 'आप जाकर सोने का प्रयत्न करें आर्य। कल प्रातः हमें जल्दी चलना है। मैं नहीं चाहता कि आप सम्राट का पक्ष प्रस्तुत करें और उनके प्रति मेरे मन में छिपी घृणा प्रकट हो।'

सुमंत्र उठकर खड़े हो गए। उन्होंने कुछ कहा नहीं।

तीनों रथ बड़ी क्षिप्र गति से निरंतर बढ़ते जा रहे थे।

दोपहर ढल गयी थी। संध्या होने को थी। रात से पहले उन्हें शृंगवेरपुर के साथ लगकर बहती गंगा तट पर पहुंचना था।

पिछली रात सुमंत्र काफी देर से सोए थे और लक्ष्मण सोए ही नहीं थे। पर फिर भी प्रातः सारी व्यवस्था समय से हो गयी थी। पीछे छूटने वाले लोगों से विदा लेना सरल नहीं था। युवा संगठनों के सदस्यों और ब्रह्मचारियों का हठ बड़ा ही प्रबल था किंतु वे सब अनुशासन में बंधे हुए थे। जितनी जल्दी संभव हुआ सब से विदा लेकर राम, सीता और लक्ष्मण सुयज्ञ चित्ररथ और सुमंत्र के साथ चल पड़े थे। तमसा तट पर छूटे हुए

तोगा के निकट-आश्रम अथवा अयोध्या तक लौटने की व्यवस्था निजट के अधीन थी, अत वे भी साथ नहीं आए थे।

दोपहर के भोजन के समय थोडा-सा स्कने के समय को छोडकर वे लोग निरंतर चलते रहे थे। अयोध्या राज्य की सीमा पार कर अयोध्या के ममता का भूमि को भी वे पीछे छोड आए थे। माग म वेद-श्रुति गोमती तथा स्यन्दिका नदिया पडी थी किंतु सेतुओं की उचित व्यवस्था होने के कारण उन्हें पार करने म असुविधा नहीं हुई थी।

दोपहर के भोजन के उपरात चलने के समय स ही धूप कुछ कम हो गयी थी। हवा ठडी थी और रथ वेग से चल रहा था। लक्ष्मण रात भर के जगे थे इस समय रथ म बठे-बैठे ही ऊंघ गए।

माग भर सीता दूर तक फैले खेतों उनम काम करते कृषक स्त्री-पुरुषों को देखती आयी थीं। कभी-कभी व किसी जनपद क बीच से, किसी ग्राम के पड़ोस से भी निकल थे। नगरों के निकट का माग उन्होंने जान-बूझकर नहीं लिया था। सीता माग म आए वन प्रातरों को भी देखती रही थीं। सोचती रही थीं—अब तक उन्होंने महलों का सुव्यवस्थित जीवन ही देखा था, जहा सब-कुछ उपलब्ध था और कोई असुविधा नहीं थी। वहा किसी को कोई भौतिक परेशानी नहीं थी। वहा भी दु ख थे किंतु उनका स्वरूप और ही था अब वे जहां से गुजर रही थीं, यह ससार कोई और ही था।

वे जनकपुर के राजमहल में पली हैं रानी सुनयना और सम्राट् सीरध्वज उनके माता पिता हैं किंतु कौन कह सकता है, उनके जनक जननी कौन हैं। उनके जनक जीवित हो तो किस वय के होंगे जननी कैसी होगी। वृद्ध हो चुके होंगे बेचारे। निधन भी अवश्य ही होंगे—नहीं तो अपनी पुत्री को इस प्रकार खुले खेत म क्यों फेंक जाते। कम अर्जित करते होंगे वे अपनी आजीविका ? इस वृद्धावस्था म कहीं किसी खेत म कुदाल चला रहे होंगे। पसीना बह रहा होगा। हाफ रहे होंगे। कभी-कभी हाथ कांप भी जाता होगा माथा घूम जाता होगा कहीं किसी राजा-सामत क भूदास हुए तो माथा घूमने पर सैनिक कोड़े से मारते होंगे

सीता आगे सोच नहीं पायीं। उनके शरीर में फुरफुरी-सी आ गयी। क्यों खोजती हैं वे अपनी जननी को, जनक को। धरती पर अपना पसीना

गिराने वाले भट्टियो म अपने शरीरो का तपाने वाले—सभी तो उनके जननी-जनक जसे हैं। व उन्ही स प्यार करें। उनके लिए कुछ करें। क्या नही राज्य की ओर स सब के उचित भरण-पोषण सम्मानपूण आजीविका का प्रबध होता ? क्यो राज्य केवल राजा का है ? क्या वह सारी प्रजा की सपत्ति नही है ? इस विषय म मानव स प्यार करन वाल सभी लोगो को कुछ साचना होगा ये भेद मिटान होंगे—धनी निधन क शोषक और शोषित के आय तथा आर्येतर क शृगवेरपुर का राजा गुह भी तो आय नही है। वह निषाद है। राम उसे अपना परम मित्र मानते हैं। कितना विश्वास है उन्ह उस पर। राम न सीता को बताया था—बहुत पहल कभी राम किसी राज्य-काय स इधर आए थ तो निषादराज गुह से उनका परिचय हुआ था। गुह उन्ह एक ईमानदार तथा सच्चा आदमी लगा था। इसीलिए जब आय सामतो न अपने राज्य विस्तार के उपक्रम म शृगवेरपुर को भस्मीभूत करना चाहा तो राम न उनका दृढ विरोध किया था। राम क कारण ही इन सारे आय सामतो के जनपदो क बीच यह निषाद राज्य बचा हुआ था। राम की इच्छा के अनुसार ही गुह ने अपनी सनिक शक्ति कुछ बढा ली थी। किंतु राम न बड खेद स सीता से कहा था कि अच्छे योद्धा होने पर भी अच्छे शस्त्रों क अभाव म निषाद किसी व्यवस्थित आय सेना से लड नही पाएगे। फिर राम सिद्धाश्रम गए थ। वहा उन्होने निषादो पर अत्याचार करन और उसका समथन करने वाले पिता-पुत्र को दडित किया था। तभी से गुह राम का अभिन्न मित्र हो गया था। वह उनके लिए प्राण भी दे सकता था

क्रमश रथो की गति धीमी होने लगी थी। सामने गगा का गभीर प्रवाह अपना वग दिखा रहा था। आस-पास ही कही शृगवेरपुर होगा सीता ने सोचा—आज रात उन्ह यही विश्राम करना है।

तीनो रथ रुक गए। सब लोग रथो स उतर आए। राम न क्षण भर इधर उधर दृष्टि दौडाई और अपने निरीक्षण का निणय सुना दिया हम इस इगुदी वक्ष के आस-पास विश्राम करेंगे। तात सुमत्र ! रथो और घोडो की व्यवस्था आप सभाल लें।

राम न अपना धनुष और तूणीर वक्ष के तने से टिका दिए। वे खाली हाथ लौटकर रथ के पास आए 'बधुओ! हम अपना शस्त्रागार उतार लें। रथ आगे नही जाएगे।'

'राजकुमार! ' सुमन्त्र कुछ कहने को हुए।

'आर्य!" राम का स्वर दृढ था 'इसमे विवाद असहमति अथवा पुनर्विचार का कोई अवकाश नही है। यह निश्चित है कि अब न रथ आगे जाएगे, न आप सुयज्ञ अथवा चित्ररथ म से कोई आगे जाएगा। यहा से अगले पडाव तक सहायता का दायित्व गुह का होगा।"

सुमन्त्र उदास हो गए। कितने हठी हैं राम! अपने कर्तव्य के सामने किसी की कोमल भावनाए उनके लिए कोई मूल्य नही रखती। और कर्तव्य भी कैसा? पिता ने अपने मुख से एक बार भी वनवास का आदेश नही दिया किंतु सुमन्त्र का मन कही आश्वस्त भी था—राम दृढनिश्चयी हैं राम आत्म विश्वासी हैं।

सुमन्त्र घोडों को खोलकर उनकी देखभाल मे लग गए। राम, सीता लक्ष्मण, सुयज्ञ और चित्ररथ विभिन्न धनुष, विविध प्रकार के बाणो स भरे तूणीर खड्ग तथा अनेक दिव्यास्त्र रथो म स उठा-उठाकर इगुदी वक्ष के तने के साथ टिकाने लगे।

सीता को कार्य करते देख, एक-आध बार, सुयज्ञ तथा चित्ररथ न कहा भी, 'आप ऐसा कठिन कार्य न करें आर्या! हम लोग अभी किए देत हैं।'

किंतु राम ने उन्हें तत्काल टोक दिया, 'सीता को भी अपने ही समान स्वतन्त्र तथा समर्थ व्यक्ति समझकर कार्य करने दो और वैसे भी वनवास की अवधि म सहायता करने क लिए तुम लोग साथ नहीं रहोगे।'

इधर रथों स शस्त्रागार उतारा गया और उधर अपने कुछ सैनिकों क साथ आते हुए गुह दिखाई दिए।

राम अपना सहज गाभीर्य त्याग चचलतापूर्वक भागे। दौडकर उन्होंन गुह को गले स लगा लिया, कितने दिनो क पश्चात मिल हो, मित्र!'

गुह की आखो म आसू आ गए यही तो मैं भी कहता हू राम ! इतने दिनो के पश्चात मिल हो और वह भी इस प्रकार। महल म न आकर इगुदी वक्ष के नीचे टिक गए।

उन्होने बडी करुण दष्टि से राम साता और लक्ष्मण को देखा।

किंतु उनके आसू और करुणा अधिक देर नही टिकी। अगल ही क्षण आसू सूख गए। चेहरा तमतमा उठा। वाणी म ओज भर आया राम ! मेरे गुप्तचरो ने तुम लोगो के यहा पहुचने और तुम्हारे वनवास की सूचनाए प्राय साथ-ही साथ दी है। यह उनकी शिथिलता का प्रमाण अवश्य है, पर उसस क्या। आते आते मैं अपनी सेना को युद्ध के लिए प्रस्तुत होने का आदेश देकर आया हू। मेरी सेना अयोध्या की सना के बराबर नही है—न सख्या म न युद्ध-कौशल म न शस्त्रास्त्रो म। पर उसस क्या ? मेरे वीर साम्राज्य की उस वेतनभोगी सेना को पल भर म नष्ट कर देने का हौसला रखत हैं। तुम हमारे साथ हो राम ! तो हम किसी से भी टकरा जाएगे आज रात विश्राम करो। कल प्रात ही अभियान होगा।

गुह भया ! लक्ष्मण हसे पहल मुझसे गले मिलोगे या पहले अयोध्या पर सैनिक अभियान करोगे ?'

गुह कुछ सकुचित हुए सौमित्र ! तुम्ह फिर कटाक्ष करने का अवसर मिल गया। अपने आवेश म मैं कभी कभी अपना सतुलन खो बठता हू।'

गुह और लक्ष्मण गल मिले। राम शात भाव स उन्ह देखते रहे। उनके अलग होते ही बोले पहल मेरे साथ एक ही लक्ष्मण थे अब तो तुम दोनो हो। तनिक सीता का प्रणाम भी स्वीकार कर लो तो सैनिक अभियान की योजना बनाते है।

सीता ने हाथ जोड दिए 'जेठ के सम्मुख तो अनुज वधू वसे ही सकुचित हो जाती है और फिर जब जेठ सनिक अभियान करते हुए आए तो प्रणाम करने म विलब हो जाना स्वाभाविक ही है। आशा है जेठ जी क्षमा करेंगे।'

आशीवचन की मुद्रा मे हाथ उठा गुह क्षण भर भौचक्के से खडे रह गए, और फिर जोर स खिलखिलाकर हस पडे अच्छा तमाशा बनाया तुम लोगो न मेरे आवेश का। इतने शात जनों के बीच तो एक आविष्ट

व्यक्ति मूखता से आविष्ट लगने लगता है।"

गुह देर तक हसते रहे। फिर सहज होकर अपने सैनिकों की ओर मुडे 'शस्त्र शिथिल कर शात होकर बैठ जाओ, वीरो! ये लोग युद्ध की मुद्रा म नही है। ' वे घूमे पर राम! निर्वासन से तुम रुष्ट नही हो क्या? अयोध्या के राज्य पर तुम्हारा पूण अधिकार है, वरन पिछले कई वर्षों से अयोध्या का शासन तुम्ही चला रहे हो। "

'आओ, पहले इन लोगो से तुम्हारी पहचान कराऊ।' राम बोले, 'ये सुयज्ञ है गुरु वसिष्ठ के ज्येष्ठ पुत्र और मेरे मित्र। ये हैं सम्राट क मत्री चित्ररथ, मेरे सुहृद। ये लोग हम पहुचाने आए है। मेरी अनुपस्थिति म तुम्हे अयोध्या म इन्ही से सपक बनाए रखना है।"

परस्पर अभिवादन क पश्चात्, गुह फिर पहले विषय पर लौट आए, 'तुम रुष्ट क्यो नही हो, राम? देख रहा हू ऐसी भयकर घटना के पश्चात् भी लक्ष्मण तक शात हैं।"

राम का तेज, उल्का के समान प्रकट हुआ 'यह न समझो गुह! कि मैं इतना असमथ हू या अयोध्या म मुझे इतना भी जन-समथन प्राप्त नही है कि कोई मुझसे मेरा अधिकार छीनकर, मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझे निर्वासित कर देता। मैं अपनी इच्छा से न चला आया होता, तो कोई इसे सभव नही कर पाता। और अपनी इच्छा से अधिकार त्यागने म आक्रोश कैसा? आरभ म लक्ष्मण भी तुम्हारे ही समान क्रुद्ध हुए थे किंतु बात समझकर शात हो गए और साथ चले आए। राम हस पडे इसका अथ यह नही है कि तुम भी बात समझकर मेरे साथ चल पडो।'

गुह हतप्रभ रह गए। राम का वह तेज और यह हसी। कितने आश्वस्त हैं राम! चितन की मुद्रा म गुह बोले मैं तुम्हारे साथ चलने की बात नही सोच रहा। मैं तुम्हारा राजतिलक शृगवेरपुर म करूगा। तुम चौदह वर्षों तक यहीं राज्य करो राम!'

राज्य ही करना होता तो अयोध्या क्या बुरी थी।" राम पुन मुसकराए शृगवेरपुर म तुम ही राज्य करोगे, किंतु एक काम मेरा भी करना होगा।'

क्या ?' गुह तन्मय हो गये।

'संभावना बहुत कम है।" राम मुसकराए, "दुहरा रहा हूं, संभावना बहुत कम है, किंतु यदि हमारा अनिष्ट करने के लिए भरत ने इस ओर सैनिक अभियान किया तो तुम बाधा दोगे और चित्रकूट में हम इसकी सूचना भिजवाओगे।"

'अवश्य।'

राम का विश्वास और उनकी ओर से सौंपा गया उत्तरदायित्व पाकर गुह महत्त्वपूर्ण हो उठे।

वार्तालाप में तनिक शिथिलता पाते ही सीता बोली, 'यदि अनुचित न हो तो पूछूं, जेठानीजी के दर्शन नहीं होंगे क्या ?

गुह एक बार फिर से सकुचित हो उठे, क्षमा करना वैदेही! मैं सैनिकों को साथ लेकर चला आया था, पत्नी को भूल ही गया। अब सब लोग मेरे साथ चलो। मेरे महल पर पधारो...।" और राम को मुसकराता देख कुछ आपत हुए बोले, कदाचित वनवास की अवधि में राम किसी भी नगर में नहीं जाएंगे, चाहे वह शृंगवेरपुर ही क्यों न हो, किंतु तुम और लक्ष्मण...'

'नहीं, जेठजी!" सीता मुसकराइं, पति को वन में छोड़ पत्नी का राजमहल में जाना उचित नहीं होगा। जेठानी जी आशीर्वाद देने यहां तक आ सकती तो हमारा सौभाग्य होता।'

राम बोले, 'गुह! औपचारिकता छोड़ो, हम तुम्हारे महल में नहीं जा सकते। हम स्वादिष्ट भोजन भी नहीं चाहिए। वैसे तुम्हारे राज्य में आये हैं, वन्य भोज से जैसा सत्कार कर सकते हो, यहीं कर दो। और यदि प्रातः विदा के समय भाभी के दर्शन हो सकें, तो यथेष्ट होगा।

जैसी तुम्हारी इच्छा।"

गुह उठ गए। अपने सैनिकों के साथ वे प्रबंध के लिए चले गए। शेष लोग राम के निकट आ बैठे। अब तक सुमंत्र भी घोड़ों की व्यवस्था से मुक्त हो चुके थे।

इंगुदी वृक्ष के निकट लक्ष्मण द्वारा बनाई गयी पत्र शैयाओं पर राम

और सीता चले गये तो सुमन्त और चित्ररथ भी अपनी अपनी गैयाओं पर लेट गए। किंतु पिछली रात प्राय जागते रहने पर भी लक्ष्मण सोने के लिए तैयार नहीं थे। वे अपना धनुष और तूणीर लेकर कुछ दूर सन्नद्ध प्रहरी के समान बैठ गये। सुमन्त भी उन्हीं के पास जा बैठे।

'लक्ष्मण! तुम सो जाओ भाई।" गुह बोले 'मैं अपने सैनिकों के साथ स्वयं जागकर पहरा दूगा। तनिक भी चिंता मत करो।'

लक्ष्मण हस पड़े 'भयर गुह! मेरे सो जाने पर तुम भी सो गये तो? तुम भैया और भाभी के प्रहरी बन बैठे रहो मैं तुम्हारा प्रहरी बन जागूगा।'

'तुम्हे मुझ पर विश्वास नहीं।" गुह को आश्चर्य हुआ।

'तुम्हे मुझ पर हो तो तुम सो रहो। लक्ष्मण हस विश्वास की बात छोडो। तुमसे कुछ बातें करने के मोह म रात भर जागूगा। आओ बैठो।"

तुम अपनी दुष्टता नहीं छोड़ोगे।' गुह के मन म ममता उमड आयी, 'तुम धन्य हो लक्ष्मण। यदि तुम किसी प्रकार राम को इस बात के लिए तैयार कर लो कि वे मुझे अपने साथ ले चलें तो मैं अपना राज्य तुम्हे दे दूगा।"

'भैया के साहचर्य के लिए तो कोई भी अपना राज्य मुझे दे देगा। यह भावना सम्राट दशरथ की भी थी, किंतु लक्ष्मण अपना राज्य किसी को नहीं देना चाहता।'

'कौन-सा राज्य? गुह ने पूछा।

'भैया राम का साहचर्य।'

सौमित्र! सुमन्त्र बोले "तुम अभी तक सम्राट से रुष्ट हो। तुम उन्हे पिता न कहकर, सम्राट कहते हो।'

'तात सुमन्त्र! यह विषय न ही छेड़ें तो अच्छा है।' लक्ष्मण की आखों म क्षण भर म ही ज्वाला धधक आयी "सम्राट के विषय म मैंने आपको अपना निश्चित मत कल ही बता दिया था।'

रात के अंतिम प्रहर म आकर निषादराज गुह प्रात अपनी रानी के साथ लौटे। रानी ने राम और लक्ष्मण के अभिवादन का उत्तर देकर,

सीता को आलिंगन म कस लिया।

सीता की निषाद रानी से यह पहली भेंट थी, किंतु स्नेह का आधार पहले से ही स्थापित हो चुका था। निषाद रानी ऊचे कद तथा इकहरे बदन की ऊर्जा स भरी हुई सुन्दर युवती थी। रग सावला था। गौर-वर्णी आय कन्याओ के सौंदय की अभ्यस्त आखो को वह रग क्षण भर के लिए खटकता था किंतु वण के पूर्वाग्रह को भेदने और नष्ट करने म उसका सौंदय अधिक समय नही लता था। आय सौम्य सस्कारो म पला सीता का मन दो क्षणा म ही निषाद रानी के आकषक सौंदय की प्रतिष्ठा को मान गया। और फिर उस मुख मडल पर झलकता हुआ स्नेह उसे ममतापूण बना रहा था। यौवन तथा वात्सल्य के अदभत आकषण ने उसके रूप को अलौकिक आयाम दिया था।

तुमने विकट जोखिम का काम किया है, सीत !' निषाद रानी न अपना बाहुपाश ढीला कर बाहो की दूरी पर रख, सीता को प्रेम स निहारत हुए कहा।

सीता मुसकराइ राम जस वीर पति की पत्नी ही यदि ऐसा जोखिम न उठाएगी तो दूसरा कौन उठाएगा।

ठीक कहती हो सखी! निषाद रानी बोली युवराज के असाधारण शौय म किसी को भी सदेह नही। पर व तनिक सभ्रम से बोली यह मत समझना सीते! कि मैं अपना गान बघार रही हू। बात केवल इतनी-सी है कि हम इस प्रदेश म रहत हैं और हमारी नौकाए और जल-पोत दूर-दूर तक यात्राए करत है इसलिए इधर क वनो की जानकारी हम है। ये वन ऐसे नही है बहिन! जहा कोई पुरुष भी सुरक्षित हो, फिर नारी की तो बात ही क्या।

सीता ने मुग्ध दष्टि स उस सावल सौंदय पुज के स्नेह को देखा और बोली ठीक कहती हो दीदी! पर जब राम उन जोखिम के बीच जा रह हैं तो मैं अपन प्राणो का क्या मोह करू। उन्हे रोक लो न मैं जाऊगी, न लक्ष्मण जाएगे।'

निषाद रानी हस पडी "चतुर हो, बहिन। जानती हो युवराज को रोकने की शक्ति किसी म नही है। पर मैं एक असमजस म हू। तुमसे

बया कहूं—कि वे पुरुष हैं। जाखिम का सामना कर सकते हैं। उन्हें जाने दो। साथ जाकर उनका जाखिम न बढ़ाओ। या कहूं—कि पुरुष तथा नारी की समता सिद्ध करने के लिए इस पितृ-सत्तात्मक समाज की नारी विरोधिनी नीति का विरोध करने के लिए अवश्य साथ जाओ।'

सीता भी गभीर हो गयी 'इस समय तो केवल यही कहो कि नारी पुरुष की स्पर्धा भूलकर मैं अपने प्रिय के प्रेम म बधी उनक सग जाऊ।'

रानी की आखें डबडबा आयी तुम धन्य हो वैदेही! इतना प्रेम यदि सभी कहीं होता। सुखी और प्रेम करने वाले दपति को देखकर मुझे कितना सुख होता है तुम्हें क्या बताऊ। तुम्हारे जेठ प्राणपण से प्रयत्न कर रहे हैं कि निषाद दपत्ति सम धरातल पर, समानता की भावना स प्रेम के आधार पर जिए'

वदेही! राम न पुकारा जाने का समय हो गया प्रिये!'

व लोग घाट पर आये। जल-पोत सरीखी एक बडी-सी नौका चलन के लिए तयार खडी थी। उनके साथ आए सारे शस्त्रास्त्र सुव्यवस्थित ढग स नाव मे लगा दिये गए थे। अनेक नाविक तथा सशस्त्र दडधर, नौका से सन्नद्ध बठे थे, और घाट पर निषाद सैनिकों की टुकडिया उन्हे विदा देने क लिए प्रस्तुत थीं।

अच्छा! अब विदा दो मित्र!'

राम ने आलिंगन के लिए गुह की ओर हाथ बढा दिए।

'हम साथ चल रहे हैं भाई।' गुह बोले, आओ प्रिय!

निषाद रानी नाव म बठने के लिए आगे बढीं।

"भाभी! क्या कर रही हैं आप!' राम बोले, और वे गुह की ओर घूम 'अपनी सत्ता का प्रयोग मुझ पर मत करो। तुम और भाभी हमारे साथ नही जाओगे। तुम्हारे नाविक भी हम भरद्वाज आश्रम तक ही पहचाएगे, और इन सशस्त्र दडधरों को नाव स उतर आने का आदेश दो।

राम! यह सब मैं अपने प्रेम क कारण"

गुह की बात राम ने बीच म ही काट दी तुम्हारी भावना मैं

समझता हू। नही तो क्या तुम समझते हो कि हमारी रक्षा कुछ दडधर करेंगे। दडधरो को नौका से उतरने का आदेश दो।'

राम!

जो कह रहा हू वही करो भाई मेरे।' राम स्नेह भरी वाणी म बोले तुम्हे जो काम सौंपा है उसे स्मरण रखो। अपनी सीमाओ दुग और सेना का ध्यान रखो। प्रजा को शस्त्र शिक्षा देकर मनिक कम के लिए सन्नद्ध रखो।

जसी तुम्हारी इच्छा राम!'

गुह ने दडधर-नायक को नौका खाली करने की आज्ञा द दी।

सौमित्र! राम बोले सब स विदा लो और सीता को नाव म बठा कर तुम भी नाव म बठो।

'अच्छा भया।

राम देख रह थे—लक्ष्मण गुह निषाद रानी सुमत्र सुयन तथा चित्ररथ से विदा ले रहे थ। उनका कहा दूरी के कारण राम सुन नही पा रहे थ किंतु उनके चेहरे के भावो से स्पष्ट था कि व परिहास की मुद्रा म थे *और सब पर ही कोई-न-कोई कटाक्ष कर रहे थे।*

निषाद रानी से विदा लती हुई सीता भावुक हो उठी थी। उनका सहज विनोदी मन इस समय करुणा स भरा हुआ था। निषाद रानी का *आलिंगन प्रगाढ तथा ममतापूर्ण था। उनकी आखो म अश्रु झलमला आय* थे। सुमत्र को सीता ने अपने श्वसुर के से सम्मान क साथ प्रणाम किया था। सुमत्र की आखो से धाराप्रवाह अश्रु बह रहे थ। राम को लग रहा था— *सुमत्र अभी वद्ध सम्राट के ही समान सत्ता शून्य होकर गिर पडेंगे। सीता* ने बहुत अच्छा किया कि व आग बढ गयी। सुमत्र को सभलने का अवसर मिल गया। सुयन तथा चित्ररथ को सीता ने तटस्थ सम्मान के साथ *प्रणाम किया। और गुह को प्रणाम करते हुए वे फिर विनोदमयी हो गयी* थी। उन्होने गुह पर फिर कोई कटाक्ष किया था और भोले जेठ गुह अनुज वधू के परिहास और जेठ की मर्यादा म बधे कसमसाए से मुसकरा कर रह गए।

लक्ष्मण के हाथ का अवलब लेकर सीता नाव म बठ गयी।

'अच्छा मित्र ! विदा !" राम ने हाथ जोड दिए। निषाद रानी के पास आकर व रुके, "भाभी ! अपना ध्यान रखना और निषादराज पर अकुश। गुह बहुत जल्दी आवेश म आ जाते हैं।'

निषाद रानी के मुख-मडल पर वक्र मुसकान उठी, "वे स्त्री का अकुश मानेंगे क्या ? देवर ! तुम्हारे ही बडे भाइ है।'

'न व स्त्री का अकुश मानें न आप पुरुष का बधन मानें, किंतु बुद्धि, विवेक, सतुलन और प्रेम की मर्यादा तो सब ही मानेंगे। अपने इन्ही गुणो का उपयोग करना। आपकी प्रजा भाग्यवान है कि उन्ह आप जसी रानी मिली।

निषाद रानी हस पडी दखती हू लक्ष्मण ने तुमस केवल सीखा ही नहीं तुम्ह कुछ सिखाया भी है। तुम भी चापलूसी करना सीख गए देवर!'

राम हसत हुए आग बढ गय। सुमन्त्र के सम्मुख आकर वे गभीर हो गए 'सुमत्र काका ! मरी मा का ध्यान रखना।'

वे रुके नही। उन्ह भय था, सुमत्र कही फिर स भावुक न हो उठें। सुयज्ञ तथा चित्ररथ को बारी-बारी गले लगाकर बोले, "सजग और सावधान रहना।'

नौकारूढ होकर, हाथ के सकेत से राम ने नाविको को चलने का आदेश दिया। बिना एक भी शब्द उच्चरित किए नाविक चल पडे। हाथो के सकेत से ही विदा दी और स्वीकार की गयी।

क्रमश नाव किनारे से दूर गहरे पानी की ओर बढ़ रही थी। तट पर खडे हुए सुमत्र सुयज्ञ चित्ररथ गुह, निषाद रानी और निषाद सनिक शनै शनै दूर होते जा रहे थे। उनकी मुद्राओं से स्पष्ट था कि वे तब तक वही खडे रहेंगे जब तक उनको नाव दिखाई दती रहगी।

राम सीता और लक्ष्मण की आखें भी किनारे पर ही लगी रही। केवल नाविकों ने ही अपना ध्यान तत्काल किनारे से हटाकर जल धारा पर केंद्रित कर लिया था।

किनारा आंखो से ओझल हो जान पर, राम न अपनी दृष्टि सीता और

लक्ष्मण की आर फेरी। वे दोनो ही इस समय अन्तमुखी हुए कुछ सोच रहे थे। अब वे लोग न केवल अपने राज प्रासादो अयोध्या नगर तथा अपने राज्य की सीमा स बाहर निकल आये थ वरन अपन परिचित रा या स भी परे हो गए थे। निषादराज गुह के राज्य की सीमा वह अतिम प्र ग था, जिसम वे स्वय को सहज सुरक्षित समझ सकते थे। उस सीमा को भी वे तेजी स पीछे छोडत जा रहे थे। आज रात का पडाव गगा तट पर किसी अपरिचित प्र श म होगा। किसी भी आवश्यक वस्तु की समुचित व्यवस्था नही होगी। आज ही नही आज से भविष्य के चौ ह वर्षों तक यही स्थिति रहेगी। वे लोग न केवल असुरक्षित होगे वरन सब प्रकार से असुविधा जोखिम आशकाओं तथा तनाव भरा जीवन जिएगे। राम सोचत जा रहे थे क्या उनके लिए उचित था कि व अपने प्रेम म बधे लक्ष्मण और सीता को ऐसा कठिन जीवन जीन के लिए अपने साथ ले आते? प्रम अव्यावहारिक होता है यावहारिक कठिनाइयो की ओर स उसका आखें बद होती है। सीता और लक्ष्मण ने तो नही सोचा पर राम का तो सोचना चाहिए था। राम उनस बडे हैं अधिक अनुभवी हैं और उनका प्रम भावुक न होकर विवेक स सतुलित होने क कारण कतव्याकत य का निणय भी कर सकता है। सीता उनकी पत्नी है लक्ष्मण छोटे भाई है। उनक प्रति भी तो राम का कुछ कत य है। क्या वह कतव्य यही था कि व उ ह असुविधा और जोखिम के सवग्रासी मुख म धकेल दें? पर कतव्य इन दोनो के ही प्रति नही है कत य तो माता कौसल्या सुमित्रा और पिता के प्रति भी है जि ह वे अयोध्या म छोड आए हैं

राम! सीता कह रही थी, ये नाविक हमे कहा तक पहुचाएग?

राम अपने चिंतन से उबरे। वे दूसरा के विषय म सोचत सोचते स्वय को भून गए थे। शृगवेरपुर के घाट पर विदा देने के लिए वे नाव म जिम स्थान पर खडे हुए थे वही खडे रह गए थ।

वे आकर सीता के पास बठ गए गगा-यमुना के सगम पर स्थित भरद्वाज-आश्रम तक।

कितना समय लगगा?

यदि गुह का अनुमान ठीक हुआ, तो कल दोपहर तक हम भरद्वाज मुनि के दर्शन कर पाएंगे।'

सीता मौन ही रही।

भाभी को निषादराज का अनुमान जंचा नहीं।' लक्ष्मण वक्र मुसकान के साथ बोले, वे अभी गणना कर आपको बताएंगी भैया! कि इतना समय नहीं लगना चाहिए। या कदाचित वे कोई छोटा मार्ग ही खोज निकालें।

सीता भी मुसकरायी 'सौमित्र ठीक कह रहे हैं। अपनी गणना के अनुसार मुझे यह सब ठीक नहीं लग रहा है। ये नाविक रात्रि तक इसी प्रकार चप्पू चलाते रहें और देवर लक्ष्मण दिन भर बातें भी बनाएं और रात भर जाग कर पहरा भी दें—यह संभव नहीं है।"

ठीक कहती हो सीते!' राम बोले मुझे भी लक्ष्मण की वाक्-चातुरी कुछ ऊंघती-सी लग रही है। अच्छा हो कि लक्ष्मण नाव के भीतरी भाग में जाकर अपनी नींद पूरी कर लें।'

राम उठकर नाविकों के मुखिया के पास चले गए सुनो मित्र! नाव काफी गति पकड़ चुकी है। हमें कोई ऐसी विशेष जल्दी नहीं है। यात्रा लंबी है। बारी-बारी कुछ नाविकों को विश्राम के लिए भेज दो। कदाचित रात को भी हमें बारी-बारी जागना पड़े।"

जैसी आपकी इच्छा।"

नाविकों का मुखिया अपनी व्यवस्था में लग गया।

लक्ष्मण आराम करने चले गये। राम ने सीता को देखा—वे अनमनी-सी क्षितिज को घूरती हुई मौन बैठी थीं। उन्हें अकेली छोड़ दिया जाए तो यही उनकी सहज मुद्रा थी। सीता में गंभीरता और चपलता का विचित्र मिश्रण था। लक्ष्मण साथ होते तो उनके व्यंग्यों की स्पर्धा में सीता का वाग्वदग्ध्य चिर-जागरूक रहता था। वे पास न होते तो पति-पत्नी में भी हास-परिहास हो जाता था पर अकेली होते ही सीता अपनी उस चिर गंभीरता तथा मौन चिंतनधारा में डूब जातीं।

'क्या सोच रही हो सीते?"

सीता चौंकी तेसे ही तनिक माता कौसल्या के विषय म सोच रही थी। क्या आपको एसा नही लगता कि हमने उन्ह अयोध्या म अकेली छोड कर उचित नही किया ?"

'क्या ? एसी क्या बात है ?" राम हल्के ढग से मुसकराए 'वे अपन राजप्रासाद म सुविधापूण जीवन के बीच अपने पति के सरक्षण म है।"

है तो। किंतु मैंने सम्राट को रानी कैकेयी के सम्मुख जितना अक्षम देखा है उससे एकदम नही लगता कि कोई किसी के भी सरक्षण म है। मुझे अयोध्या का प्रत्यक व्यक्ति केवल रानी कैकेयी का दया पर पडा लगता है। मैं न अधिक भीरु हू न आशकित, किंतु फिर भी मैं माता कौसल्या की सुरक्षा की ओर स सतुष्ट नही हो पा रही।'

कोई विशेष बात है प्रिय ? राम गभीर हो गए।

जाने से पूव मैं उनसे विदा लने गयी थी। सीता बोली 'मुझे देखत ही वे रो पडी और रोत रोत उन्होंने कहा कि आप उनके पास से इस प्रकार भाग आए थ जसे डरते हो कि वे आपको पकड कर बैठा लेंगी और आपका कोई काम अधूरा रह जाएगा '

स्थिति तो यही थी, सीत !

मैंने कहा मा ! उन्ह कई प्रकार की व्यवस्था करने की जल्दी थी इसलिए चले गए। वे बोली जल्दी किसे नही होती बेटी ! पर कोई देखे मैंने कितनी लबी प्रतीक्षा की है। मैंने अपना दुख कभी अपने बेटे के सामने भी प्रकट नही किया क्योंकि वही मरे लिए सबसे बडा आश्वासन था। मेरा सारा जीवन पति की प्रताडना और सपत्नियों की उपक्षा की कथा रहा है। मैं एक सामान्य सामन्त की पुत्री—इस रघुकुल म कभी वह महत्त्व न पा सकी जो एक साम्राज्ञी को मिलना चाहिए। मरे जीवन म सुख का पहला क्षण तब आया था जब मरा राम मेरी गोद म आया। मैंने तिल तिल कर उसे पाला कि बडा होकर ज्यष्ठ पुत्र होने के नात वह युवराज बनेगा फिर सम्राट बनेगा—मेरे दुख क दिन कट जाएगे। सुख की घडिया आएगी वर्षों के सजोए मेरे स्वप्न को आकार मिलने को हुआ, जब मैंने कहा कि मैं कवेयी के भय से मुक्त हो गयी तो इस कवयी

न फिर दग मार दिया। वह रोज प्रहार करती थी, रोज शस्त्र चलाती थी, और मैं अपने महाप्रहार की प्रतीक्षा में चुपचाप दम साधे पड़ी थी। मैं नहीं जानती थी बेटी! कि वह मेरे अंतिम प्रहार को निष्फल करने के लिए झूठे-सच्चे वरदानों की काल्पनिक कहानियां लिये, पहले से ही तैयार बैठी है!' माता ने मुझे अपनी भुजाओं में बांध लिया 'बेटी! राम को समझाओ। वह एक बार कह दे कि वह पिता की प्रतिज्ञाओं के लिए उत्तरदायी नहीं है। उसका अभिषेक हो या न हो, किंतु वह अयोध्या से नहीं जाएगा। सीते! राम अयोध्या में नहीं रहा, तो मेरी रक्षा कौन करेगा? मेरा पालन कौन करेगा! "

राम विह्वल हो उठे। मां ने, अपनी ओर से कभी पुत्र को अपनी पीड़ा का तनिक भी आभास नहीं दिया था। पहली बार उन्होंने अपनी व्यथा खोलकर सम्मुख रखी थी। सच कहती हैं मां! इन प्रासादों में राम ने भरत के ननिहाल की चर्चा पचासों बार सुनी थी। कैकेयी के मायके, केकय-नरेश, युधाजित—सब के विषय में बातें होती थीं पर राम ने अपने अथवा लक्ष्मण के ननिहाल की चर्चा कभी नहीं सुनी। कभी माता कौसल्या अथवा माता सुमित्रा के मायके से यहां कोई नहीं आया—जैसे इन महलों में उनकी चर्चा उनका प्रवेश—सब-कुछ वर्जित हो।

पर किस अनुपयुक्त घड़ी में मां ने अपनी पीड़ा को वाणी दी थी।

राम की अपनी पीड़ा गहराती जा रही थी—काश! मां ने ये बातें पहले कही होतीं। काश! विश्वामित्र अयोध्या में न आए होते और राम ने उनको वचन न दिया होता। पर अब क्या हो सकता था। राम संसार में घटते अत्याचार की झलक पा चुके थे उसके विरुद्ध लड़ने का वचन दे चुके थे। उन असंख्य लोगों की पीड़ा के सामने एक व्यक्ति की निजी पीड़ा क्या अर्थ रखती है। ठीक कहा था विश्वामित्र ने—एक वृहत् सामाजिक दायित्व का निर्वाह करने के लिए अपने संकीर्ण पारिवारिक स्वार्थों की बलि देनी ही होगी। एक व्यक्ति के सुख के लिए—चाहे वह व्यक्ति स्वयं माता कौसल्या ही हो—समस्त ऋषियों दलित जन जातियों ज्ञान विकास रत लोगों तथा न्याय प्रतीक्षित जनों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। राम का अपने सामाजिक मानवीय दायित्वों को पहले देखना

अतिथियों के लिए सब प्रकार की व्यवस्था का निर्देश देकर भरद्वाज आकर उनके पास बैठ गए।

राम ! मैं ऐसे स्थान पर बैठा हू जहा आर्यावर्त के विभिन्न भागों के सब प्रकार के लोगों का आवागमन लगा रहता है। मेरे पास अधिकांशत ऋषि मुनि तथा तापसगण ही आते हैं राजपुरुषों तथा व्यापारियों के आतिथ्य का अवसर भी कभी कभी मिलता है। किंतु तुम जैसे युवराज का अपनी पत्नी और भाई के साथ शुभागमन आज पहली बार हो हुआ है। क्या ऐसा संभव है राम ! कि तुम लोग यहीं मेरे आश्रम म या मेरे आश्रम के निकट ही अपने वनवास की अवधि व्यतीत कर सको ?

राम बहुत मीठे ढग से मुसकराए यदि ऐसा संभव होता तो उसे हम अपना सौभाग्य समझते ऋषिवर ! किंतु यह स्थान सगम के तट पर होने के कारण अयोध्या से इतना निकट है कि वहा से यहा और यहा से वहा व्यक्ति तथा समाचार इतनी शीघ्रता और सुविधा से पहुच सकते हैं कि यह वनवास न होकर वनवास का नाटक मात्र रह जाएगा। अयोध्या से निरतर ऐसा संपर्क बनाए रखना न हमारे लिए श्रेयस्कर है न अयोध्या के लिए।"

ठीक कहते हो राम !" ऋषि चिंतन में अर्ध-लीन हो गये तो फिर कहा आश्रम बनाने का निश्चय किया है ?

माता कैकेयी की आज्ञा दडकारण्य म जाने की है। अतत हम वहीं जाना है किंतु मार्ग मे रुक रुककर ऋषि मुनियों तथा जन साधारण के जीवन से परिचय प्राप्त करते हुए उनकी कठिनाइयों को देखते हुए उनके साथ समय व्यतीत करते तथा उनकी सहायता करते हुए हम आगे बढना चाहेंगे। पहले पडाव के लिए आपके निर्देश की अपेक्षा है। वैसे मैं चाहता हू कि ऋषि वाल्मीकि के दर्शन कर हम चित्रकूट के आस-पास मदाकिनी-तट पर तपस्वियों के साथ कुछ समय बिताए।

'तुमने बहुत ठीक सोचा है वत्स ! ऋषि कुछ उदास भी थे और प्रसन्न भी 'तुम्हारी दोनों ही बातें अच्छी हैं। चित्रकूट बहुत सुदर स्थान है। वहा की प्राकृतिक शोभा अदभुत है। मदाकिनी का जल स्वच्छ, निर्मल

तथा स्वास्थ्यकर है। आस-पास कोई नगर अथवा जनपद न होने के कारण बहुत जन रव नहीं है, अनेक तपस्वियो के आश्रमो के कारण जन शून्यता भी नहीं है। किंतु वत्स " ऋषि मौन हो गये।

किंतु क्या ऋषिवर !' लक्ष्मण ने पहली बार अपना मौन तोडा।

सीता मुसकराई—लक्ष्मण की उत्सुकता जाग उठी थी।

"वह स्थान अब बहुत सुरक्षित नही समझा जाता।' भरद्वाज बोले राक्षसो की दृष्टि उस क्षेत्र पर बहुत दिनो से लगी हुई थी। अब क्रमश उनका आतंक बढता जा रहा है। यदा-कदा होने वाले उनके आक्रमण अब नियमित घटनाओ मे परिवर्तित होते जा रहे हैं। उस क्षेत्र मे बसने वाले आर्य तथा आर्येतर जातियो के टोले पुरवे शनै शनै उजडते जा रहे हैं। राक्षस नही चाहते कि सामान्य जन परिश्रम कर ईमानदारी से अपनी आजीविका कमाए तथा शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करें। वे नही चाहते कि तपस्वियो तथा बुद्धिजीवियो का ज्ञान और बल साधारण जनता को मिले, ताकि उनका जीवन सरल हो सके। वे ज्ञान विज्ञान को जन-साधारण से दूर रखना चाहते हैं। वे नही चाहते कि विभिन्न जातिया परस्पर एक दूसरे के निकट आए और परस्पर अपने ज्ञान का लाभ बाटें। चित्रकूट मे अब अधिकांशत भीरु तपस्वी बचे हैं जो राक्षसो के किसी अत्याचार का विरोध नही करते वहा निर्धन तथा उपायहीन वनवासी बचे हैं, जिनके पास अन्य स्थानो पर जीविका कमाने का कोई संबल नहीं है या वे सुविधाजीवी लोलुप जन बचे हैं जो राक्षसो के सहायक होकर स्वय राक्षस हो गये हैं।

प्राय यही स्थिति सिद्धाश्रम प्रदेश की भी थी।" लक्ष्मण धीरे से बोले।

दुष्ट संचित धन हिंस्र पशु-बल तथा भ्रष्ट राजनीतिक सत्ता की पुंजीभूत कृति, इस राक्षसी प्रवृत्ति को यदि न रोका गया तो वह आश्रमो का क्या, समस्त आर्यावर्त और देवभूमि को भी ग्रस लेगी। पहले तो सुमाली के भाई-बांधव ही राक्षस थे अब अनेक यक्ष गंधर्व किरात तथा आर्य भी राक्षस होते जा रहे हैं। स्वर्ण को अपना सर्वस्व मानने वाला मनुष्य के पशुत्व को उकसाने वाला रावण प्रत्येक दुष्टता को प्रश्रय दे रहा है। वह

समस्त मानवीय मूल्यो का ध्वस कर रहा है। तात्रिक अधविश्वासो तथा अभिचार कृत्यो स वह ज्ञान एव सत्य का गला घोट रहा है। मानवता के भविष्य क स्वरूप की अवज्ञा कर, वह किसी भी प्रकार अधिकाधिक भोग-विलास मे लगा हुआ है।'

इसका प्रतिरोध कैसे होगा ऋषिवर? सीता बोली, 'क्या इन दो धनुर्धारी वीरो के द्वारा?'

'नही पुत्रि! ऋषि हस, प्रतिरोध करेगी जागरूक तथा चतुर, भ्रष्ट व्यवस्था क लोप समझने वाली अपने श्रम से आजीविका अर्जित करने वाली जनता। य दो धनुधर तो उसक सकल्प क प्रतीक मात्र है। यदि कोई यह समझता है कि दो व्यक्ति विश्व की प्रवत्तियो का रोक सकते हैं, तो यह भ्रम है। वे प्रभावित कर सकते है जन मत तयार कर सकते हैं माग दिखा सकते हैं नेतत्व कर सकते है। वस राक्षसत्व प्रकृति का अनघड और आदिम रूप है प्रत्यक युग उसका अपन ढग स विरोध करता है। ये धनुधर उसका विरोध करन वाले न तो पहल व्यक्ति हैं न अतिम होग। यह सघष तो चिरतन है कभी तीव्र होता है कभी मद। कही केद्रित होता है कहा विकेद्रित। आज भी प्रयाग से अधिक यह चित्रकूट म है चित्रकूट स अधिक जनस्थान म और जनस्थान से अधिक किष्किधा म और उसस भी अधिक लका म।'

राम कुछ विस्मित हुए 'ऋषिश्रेष्ठ! जनस्थान के विषय म मुझे गुरु विश्वामित्र ने बताया था किंतु किष्किधा और लका के विषय म मुझे ज्ञात नही था। वहा कौन रावण का विरोध कर रहा है?

व्यक्ति रावण स अधिक महत्त्वपूण प्रवत्ति रावण है। ऋषि बोल विरोध उस दुष्ट प्रवत्ति और भ्रष्ट व्यवस्था का है जिसका अधिनायकत्व रावण कर रहा है। जनस्थान म अगस्त्य और पुत्री लोपामुद्रा उससे जूझ रहे है सशस्त्र जन बल तयार कर। किष्किधा म वाली का छोटा भाई सुग्रीव उसक सहयोगी हनुमान और जामवत यहा तक कि वाली का तरुण पुत्र अगद भी, रावण क निरतर वधमान प्रभाव स प्रतिदिन उलझ रहे हैं। किंतु उनकी समस्या और भी विकट है। उनका अधिपति वाली स्वय राक्षस नही है। वह एक प्रकार का पूजापाठी और कमकाडी व्यक्ति है, जो

उस धार्मिकता का आवरण प्रदान करता है, किंतु उसमे कुछ दुर्बलताए हैं। वह स्त्री-लोलुप और कामी है। फिर रावण का मित्र होने के कारण न केवल वह अधिकाधिक सुविधाजीवी होता जा रहा है, तथा प्रजा की उपेक्षा कर रहा है, वरन् रावण के बढ़ते हुए प्रभाव का विरोध भी नहीं कर रहा। सुग्रीव और उसके साथी विकासमान दुष्टता को देख रहे हैं, और भीतर-ही भीतर ऐंठ रहे हैं। और अत मे, स्वय रावण के अपने घर मे विभीषण और उसके मुट्ठी भर साथी हैं। विभीषण रावण का भाई होते हुए भी, उसकी किसी नीति से सहमत नही है, किंतु रावण के सम्मुख वह पूर्णत अशक्त है। राघव! आज राक्षसी शक्तिया सगठित है और मानवीय शक्तिया बिखरी हुई हैं। विजय सगठन की होती है। अत राक्षसी तत्र का ध्वस करने का श्रेय भी उसी व्यक्ति को मिलेगा, जो राक्षस विरोधी शक्तियो का सगठन करने मे सफल होगा'

सहसा भरद्वाज अत्यत भावुक हो उठे, 'और मेरी विडबना यह है राम! कि मैं शरीर से यहा बैठा हू और आत्मा मेरी लोपामुद्रा और अगस्त्य मे बसती है। उन्होने राक्षस विरोधी इस सघर्ष को चिंतन के धरातल से, कर्म के धरातल पर उतार दिया है। सघर्ष केवल सिद्धात के धरातल पर होता है, तो प्रवृत्ति का विरोध कर हम व्यक्ति के साथ समझौता कर जी लेते हैं, किंतु सघर्ष के कर्म धरातल पर उतरने के पश्चात् कोई समझौता नहीं होता समन्वय नही होता सह-अस्तित्व नही होता।"

भरद्वाज मौन हो नहीं हुए किसी और लोक मे लीन हो गये। कोई और व्यक्ति भी नहीं बोला। चारो ओर निस्तब्धता छा गयी। सीता ने दृष्टि उठाकर राम को देखा—वे भरद्वाज से कम लीन नही थे। इतने लीन वे कभी-कभी ही होते थे और तभी होते थे, जब उनके मन मे कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण घटित हो रहा होता था, और उनका निश्चय करने का क्षण होता था जब कोई विचार कर्म मे परिणत हो रहा होता था और लक्ष्मण! लक्ष्मण के मन मे जो कुछ था वह सब उनके मुख मडल पर प्रतिबिंबित था। वे उग्र से उग्रतर होते जा रहे थे

'भैया! हम यहा से कब चलेंगे?' सहसा लक्ष्मण ने पूछा।

आवागमन की सुविधा नहीं थी। कदाचित इसी कारण से जनसंख्या विरल ही थी।

पयस्विनी नदी पार करते ही वाल्मीकि आश्रम की सीमा आरंभ हो गयी थी। आश्रम के चिह्न प्रकट होते ही, राम ने अपने पग रोक लिये। उनके पीछे आते हुए लक्ष्मण, सीता तथा भरद्वाज शिष्य भी रुक गये। राम ने अपने हाथों के खड्ग, कंधों के धनुष तथा पीठ पर दोनों ओर बंधे हुए भारी भरकम तूणीर उतारकर पृथ्वी पर रख दिए। यह संकेत था कि यहां अधिक देर तक रुकना पड़ सकता है। सबने अपने कंधों, बाहुओं तथा अपने हाथों के शस्त्र भूमि पर रख दिए।

आश्रम की मर्यादा के अनुसार सशस्त्र वे भीतर जा नहीं सकते थे, और शस्त्रों को इस एकांत वन में असुरक्षित छोड़कर स्वयं आश्रम के भीतर चले जाना, उचित नहीं था।

राम ने लक्ष्मण की ओर देखा।

मैं ऋषि के दर्शन कर अनुमति ले आऊं ?'

यही करना होगा।" राम मुसकराए।

लक्ष्मण शस्त्रहीन हो आश्रम के मुख्यद्वार की ओर बढ़ने ही वाले थे कि चार अपरिचित ब्रह्मचारियों ने उनके सम्मुख आ, हाथ जोड़ सम्मानपूर्वक प्रणाम किया।

राम ने देखा—वेश सबका एक ही था किंतु वर्ण और आकृति का भेद स्पष्ट कह रहा था कि वे ब्रह्मचारी विभिन्न जातियों से संबद्ध थे। दो गौर वर्ण के थे। दो पीताभ वर्णी थे। उनके शरीर पर भूरे रंग के पतले लंबे लोम थे। निश्चित रूप से इस प्रदेश से कुछ अन्य आर्येतर जातियों की आबादी भी आरंभ हो गयी थी। वाल्मीकि आश्रम में जाति मिश्रण है तो अन्य आश्रमों में भी यही स्थिति होगी।

आर्य! कुलपति ऋषि वाल्मीकि की ओर से हम आपका स्वागत करते हैं। वे आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

सीता चकित रह गयी ऋषि को हमारे आगमन की सूचना कैसे मिली ?

'देवि! यह तो ऋषि ही बता सकेंगे।"

साधना ता करत हैं, उसके माध्यम स जन मामान्य तक पहुचते भी है उनम न्याय के पक्ष और अन्याय के विरोध का प्रचार भी करत हैं, किंतु जब कभी आत्मरक्षा की आवश्यकता पडती है तब हम अपने शस्त्रधारी शत्रुओं का विरोध नही कर पात और अपनी कला के साथ नष्ट हो जात हैं। क्या यह उचित नही कि हम अपनी कला के साथ-साथ शस्त्र भी धारण करें '

सीता का लगा मुखर के चेहरे का आवेश असाधारण था। बोली 'ऋषिवर! इम ब्रह्मचारी का प्रश्न मात्र सैद्धातिक विवाद नही है। वह सवन्नात्मक और भावनात्मक धरातल पर भी इन प्रश्नो म उलझा हुआ है। यह उसके मस्तिष्क का ही विवाद नही उसके हृदय की उलझन भी है।

ऋषि उल्लसित हो उठे, तुमने ठीक पहचाना पुत्रि! मुखर के चितन की पृष्ठभूमि म उसके अपने जीवन की घटनाए हैं। यह बालक सुदूर दक्षिण स मरे पास आया है। इसक पिता बहुत अच्छे कवि तथा सगीतज्ञ थे। खर क राक्षस सैनिको ने इनके कुटुब को नष्ट कर डाला।'

'सुदूर दक्षिण से यहा तक के बीच अनेक आश्रम पडते होंगे, मुखर उन सब का छोडकर इतनी दूर क्यो चला आया?' लक्ष्मण ने ऋषि की बात के बीच मे ही पूछा।

"सगीतकार पिता का प्रभाव। वह कला की साधना से शून्य किसी आश्रम म नही टिक सका। किंतु कुटुबियो के वध का भी मुखर भूला नही पाता। यह प्रतिक्षण शस्त्र क आकर्षण का अनुभव करता है। तुम्हारे शस्त्रो म भी यह अभिभूत हो उठा है, और शस्त्र विद्या तथा शस्त्र प्रशिक्षण की बात सोच रहा है।

किंतु यह बालक कही बहुत गलत भी नहीं सोचता गुरुवर!' सीता बोली, क्या एमा नहीं हो सकता कि कला का साधक शस्त्र की साधना भी कर! आपने इम आश्रम म काव्य और सगीत के साथ थोडा-सा समय शस्त्र विद्या को क्या नही दिया जा सकता!'

मैं तुम्हारी बात का विरोध नही करता पुत्रि!' वाल्मीकि बोल, "किंतु यदि ऐसा हो सकता, तो कदाचित हम प्रत्येक कलाकार को पूण

है। इस लक्ष्य तक पहुचन के लिए अनेक माग है पुत्र ! एक माग वह है जो तुम लोगो ने चुना है—शस्त्रो से अन्यायी का दमन। और एक माग वह है जो मैंने चुना है—कला की साधना। काव्य और सगीत की माधना, ताकि शब्द की शक्ति से लोगो के मन म अ याय का विरोध जगाया जा सके। न्याय का पक्ष समझाया जा सके। यदि प्रत्येक व्यक्ति तुम्हारे समान अ याय का सशस्त्र विरोध करेगा और कोई भी व्यक्ति मेरे समान शब्द शक्ति स न्याय और अन्याय का भेद उचित और अनुचित का अतर नही बताएगा तो अ याय का विरोध धीरे धीरे शस्त्र शक्ति के कारण केवल विरोध म बदल जाएगा। इसीलिए यह आवश्यक है पुत्र ! कि हम जन सामान्य को उसके अधिकारो के प्रति सचेत बनाए उसे उसके शत्रु शोषक वग की पहचान कराए उसे मानवता के उच्चादर्शों का ज्ञान दें और साथ ही-साथ उनम अन्याय के विरोध की भावना जाग्रत करें, ताकि जब कभी वे विरोध करें वह मात्र विरोध न होकर अन्याय और शोषण का विरोध हो। वे यह जान कि कहा उ ह शक्ति शस्त्र और हिंसा का प्रयोग करना है कहा उनका प्रयोग अनुचित है। हम उन्ह समझाना पडेगा पुत्र ! कि दस्यु और सनिक म क्या भेद है। नि स्वाथ होकर जन कल्याण के लिए शस्त्र का प्रयोग करने वाला वीर सनिक है, अयथा वह दस्यु है। इसीलिए मैंने कला के माध्यम का आश्रय लिया है।

राम ने देखा—मुखर बडी तन्मयता स गुरु की बात सुन रहा था, किंतु उसकी भगिमा कह रही थी कि वह उस बात स सहमत नही है। अपने सकोच को बडी चेष्टा से भग कर वह बोला गुरुवर ! एक शका मुझे भी है।

बोलो वत्स ! ऋषि मुसकराए एक साहसी प्रश्न अनेक दमित सकुचित जिज्ञासाओ को उठाकर उनके परो पर खडा कर देता है। लक्ष्मण के प्रश्न ने तुम्हारे साथ यही किया है। मैं जानता हू तुम्हारी इस विषय मे पर्याप्त रुचि है, और जब कभी ऐसा विवाद उठ खडा होता है तुम्हारे मन म भी उथल पुथल मच जाती है। पूछो !

मुखर ने अपनी त मयता को समेटा अपनी शक्तियो म सामजस्य स्थापित किया और बोला, गुरुवर ! मुझ ऐसा लगता है कि हम कला की

साधना तो करते हैं, उसके माध्यम से जन सामान्य तक पहुंचते भी हैं उनमें न्याय के पक्ष और अन्याय के विरोध का प्रचार भी करते हैं किंतु जब कभी आत्मरक्षा की आवश्यकता पडती है तब हम अपने शस्त्रधारी शत्रुओं का विरोध नहीं कर पाते और अपनी कला के साथ नष्ट हो जाते हैं। क्या यह उचित नहीं कि हम अपनी कला के साथ-साथ शस्त्र भी धारण करें '

सीता को लगा, मुखर के चेहरे का आवेश असाधारण था। बोली, ऋषिवर ! इस ब्रह्मचारी का प्रश्न मात्र सैद्धांतिक विवाद नहीं है। वह संवेदनात्मक और भावनात्मक धरातल पर भी इन प्रश्नों में उलझा हुआ है। यह उसके मस्तिष्क का ही विवाद नहीं उसके हृदय की उलझन भी है।'

ऋषि उल्लसित हो उठे 'तुमने ठीक पहचाना, पुत्रि ! मुखर के चिंतन की पृष्ठभूमि में उसके अपने जीवन की घटनाएं हैं। यह बालक सुदूर दक्षिण से मेरे पास आया है। इसके पिता बहुत अच्छे कवि तथा संगीतज्ञ थे। खर के राक्षस सैनिकों ने इनके कुटुंब को नष्ट कर डाला।'

सुदूर दक्षिण से यहां तक के बीच अनेक आश्रम पडते होंगे मुखर उन सब को छोडकर इतनी दूर क्यों चला आया ? ' लक्ष्मण ने ऋषि की बात के बीच में ही पूछा।

संगीतकार पिता का प्रभाव। वह कला की साधना से शून्य किसी आश्रम में नहीं टिक सका। किंतु कुटुंबियों के वध को भी मुखर भुला नहीं पाता। यह प्रतिक्षण शस्त्र के आकर्षण का अनुभव करता है। तुम्हारे शस्त्रों से भी यह अभिभूत हो उठा है और शस्त्र विद्या तथा शस्त्र प्रशिक्षण की बात सोच रहा है।

किंतु यह बालक कहीं बहुत गलत भी नहीं सोचता गुरुवर ! सीता बोली, क्या ऐसा नहीं हो सकता कि कला का साधक शस्त्र की साधना भी करे ! आपके इस आश्रम में काव्य और संगीत के साथ थोडा-सा समय शस्त्र विद्या को क्या नहीं दिया जा सकता !"

'मैं तुम्हारी बात का विरोध नहीं करता, पुत्रि ! वाल्मीकि बोले, "किंतु यदि ऐसा हो सकता, तो कदाचित हम प्रत्येक कलाकार को पूर्ण

मानव बना सकते। जो सच्चे कलाकार न्याय-अन्याय कर्तव्य-अकर्तव्य तथा अपने सामाजिक दायित्व को समझ सकें और उन्हें कार्यान्वित कर सकें—ऐसे कलाकार दुर्लभ ही नहीं अलभ्य भी हैं वैदेही। कला की साधना बड़ी ईर्ष्यालु है। वह कलाकार को अन्य किसी भी दिशा में ताकने का अवकाश नहीं देती। कलाकार क्रमशः अपनी साधना में इतना डूबता चला जाता है कि वह अन्य प्रत्येक क्षेत्र की उपेक्षा कर देता है। संभवतः मेरे भीतर का कलाकार भी मेरे व्यक्तित्व को पूर्ण नहीं बनने देता। वह स्वयं अपने आपको ही पूर्ण बनाना चाहता है। न मैं शस्त्र विद्या का अभ्यास कर पाया न अपने शिष्यों को करा पाया। परंतु मैं इसका विरोधी नहीं हूं। संभव होने पर इस आश्रम में शस्त्राभ्यास भी कराया जाएगा।

राम की दृष्टि मुखर के चेहरे पर जमी हुई थी। मुखर ने अपने कुलपति का स्पष्टीकरण सुना, किंतु उसके चेहरे पर अंकित विरोध अभी मिटा नहीं था।

राम बोले तो उनका स्वर अत्यंत स्नेहिल था, 'मुझे लगता है बंधु! कि तुम्हारे कुटुंब के साथ हुए अत्याचार ने तुम्हारे मन पर अमिट छाप छोड़ी है। वह छाप तुम्हारे मन में निरंतर घृणा उपजाती है, और वह घृणा तुम्हें शांत नहीं होने देती।'

मन की बात को प्रकट होते देख मुखर झेंपा, 'आपने ठीक समझा आर्य! लज्जित हूं, मेरे मन में घृणा का भाव आज भी जमा हुआ है। बहुत चाहने पर भी मैं अपने मन में सात्विक भावों को प्रतिष्ठित नहीं कर सका।'

सीता मुसकराईं, 'तुम ऐसा क्यों समझते हो मुखर! कि यह घृणा सात्विक नहीं है।'

'देवि! हम घृणा को सात्विक कैसे कह सकते हैं?'

आश्रम की शांति को कुछ उपेक्षा करता सा लक्ष्मण का किंचित उच्च स्वर गूंजा, 'अन्याय के विरुद्ध मन में जो घृणा उपजे, वह काव्यशास्त्र में चाहे सात्विक भाव न हो ब्रह्मचारी! किंतु ऐसी घृणा पूज्य है, पवित्र है, अलौकिक है। उसे तो कण-कण संचित करना चाहिए। यदि संसार में ऐसी घृणा न रहे तो अत्याचार से कौन लड़ेगा? इस घृणा के कारण तुम अपने

आपको विशिष्ट जन मान सकते हो। लज्जित होना, मात्र अज्ञान है।'

आर्य लक्ष्मण!" मुखर अपने कोमल स्वर म बोला, 'आज हमारे परिवेश म रोज ही कोई-न कोई अत्याचार होता है प्रतिदिन मानवता की हत्या होती है। यह सारा ऋषि समुदाय ब्रह्मचारी समाज, आचाय और मुनि—सब देखते और सुनत हैं। वे लाग अत्याचार के समयक नही है किंतु उनम से किसी के भी मन म वैसी तीव्र घणा नही है जैसी मेरे मन म है। यही मुझे साचने को बाध्य करता है कि कही एसा तो नही कि मरी प्रकृति ही अधम है, और शप लोगो की सात्विक प्रकृति के कारण उनके मन म घणा न उपजती हो।"

लक्ष्मण उत्तर म कुछ कहन को उत्सुक थे किंतु राम ने बात का सूत्र पहन पकडा, "बधुवर मुखर! अन्य ऋषि मुनि, ब्रह्मचारी आचाय इत्यादि क्या सोचते हैं मैं नही जानता। पर मेरा विचार है कि परिवेश मे होने वाले अत्याचारो को केवल सुनकर उनकी सूचना प्राप्त कर सामान्य व्यक्ति क मन म असहमति ही जन्म सकती है उसके विरुद्ध तीव्र ज्वलत उग्र विरोध उत्पन्न नही होता। हम सूचनात्मक धरातल पर ही उससे जुडत है भावनात्मक धरातल पर उससे हमारा कोई सबध नही होता। इसलिए तुम इस प्रकार सोचो कि दुर्भाग्य या सौभाग्य से वह अत्याचार तुम्हारे अपन सगे बधु बाधवा के साथ हुआ। तुम निजी रूप से उस अत्याचार से पीडित हुए। इस प्रक्रिया ने तुम्हारे मन को इतना निमल तथा सवदनशील बना दिया है कि तुम्हारे मन म भावनात्मक धरातल पर उस अत्याचार के विरुद्ध घणा जन्म लती है। शेप लोगो को ऐसा अवसर नही मिला। वस्तुत कोई समुदाय निजी रूप से पीडित होकर अन्याय के विरुद्ध कम उठता है व्यक्ति ही उसका अनुभव अधिक करता है। समुदाय व्यक्तियो का अनुसरण करता है। समय है इस व्यक्तिगत निजी लिप्ति के कारण ही तुम अत्याचार के विरुद्ध अपने आस पास के समुदाय का नेतत्व कर सको।"

साधु, राम! वाल्मीकि बोले तुम मुखर की आत्मग्लानि को दूर कर सकाग। मैंने भी इसे यथाशक्ति समझाया था। पर, कदाचित मैंने इस रूप म सोचा ही नही। यह भी प्रकृति का एक द्वद्व ही है पुत्र! अत्याचार से पीडित व्यक्ति सबसे अधिक दुखी भी होता है पर वही दुख उस अत्याचार

के विरुद्ध लडने की शक्ति भी देता है। अत अत्याचार का नाश करने के लिए उसका ग्रास बनना भी आवश्यक है। जो जितना अधिक पीडित और शोषित होगा, उसके मन म अत्याचार और शोषण क विरुद्ध उतनी ही उग्र ज्वलत अग्नि धधक उठेगी और वह न्याय का भी उतना ही बडा समथक होगा। इसे प्रकृति का द्वद्व न कहू तो क्या कहू—जो व्यक्ति जितना बडा अत्याचारी और शोषक है वह जन सामान्य म न्याय क लिए उतनी ही उद्दाम आग जला देता है।

ऋषि मौन हो गए। कुटिया म स्तब्धता छा गयी। सब अपने-अपने मन की किन्ही तहो म खोए थ। बोल कोई भी नही रहा था।

सध्या के भोजन के लिए राम सीता लक्ष्मण तथा उनके साथी भरद्वाज शिष्यों को कुटिया से बाहर आना पडा। ऋतु अनुकूल होने क कारण भोजन की व्यवस्था खुले म की गयी थी। सारे शिष्य पक्तिबद्ध बठे थ। विभिन्न जातियो के ब्रह्मचारियो आचार्यों तथा कुलपति म कही कोई भेद नही था। भोजन सामग्री क रूप म ब्रह्मचारियो न वन्य फल तथा कद मूल परोस दिए थ।

ऋषिवर!" राम ने कुलपति को सबोधित किया 'आपके शिष्य अधिकाशत कला की एकात साधना मे लगे रहते हैं वे जीविका उपाजन क लिए अन्य कोई काय करने का तो समय नही पाते होगे ?'

तुम्हारा अनुमान ठीक है राम! वाल्मीकि बाले, 'यह हमारी एक बडी कठिनाइ है।"

आप किसी राज्य स अनदान की इच्छा नही रखते ?

'राज्य का अनुदान! वाल्मीकि गहरी चिता म पड गए अनेक बार साचा है राम! पर राजाश्रय कालाकार की कला का काल है पुत्र। राज्य क अनुदान का आरभ मे कदाचित कोइ विशेष लक्ष्य नही होता। वह कला को सरक्षण देता है, किंतु जब उसक सरक्षण म पल कर कला शक्ति अर्जित कर लती है तो सरक्षक राज्य उस शक्ति का उपयोग अपने पक्ष म करना चाहता है जो कला क लिए काम्य नही है। राजाश्रय म पलकर किसी राज्य का अनुदान लेकर कलाकार को उस आश्रय तथा अनुदानदाता का

ध्यान कला से भी अधिक रखना पडता है। पुत्र ! अन्याय वहीं होता है, जहा सत्ता और धन होता है। कला का मूल धर्म अन्याय का विरोध है। कला जब सत्ता और धन के आश्रय मे चली जाती है तो अपने मूल धर्म से च्युत हो जाती है।'

'अर्थ यह है कि" राम मुसकराए "जिसके आश्रय मे कला पनप सकती है वह उसी का विरोध करती है। राज्य कला को आश्रय देता है, तो वह उसके साथ ही अपने काल का भी आह्वान करता है।'

"हा, पुत्र ! 'वाल्मीकि बोले, 'कलाकार विद्रोही होता है और शासन विद्रोह नही चाहता। कलाकार और शासन सहमत हो तो कलाकार को ईमानदार न समझो। शासन द्वारा पूजे जाने वाले कलाकारो मे वास्तविक कलाकार विरले ही होते हैं अधिकाश भाड मात्र होते हैं। इसीलिए मैंने अपने आश्रमवासियो तथा कला को किसी राज्य से जोडने किसी शासन अथवा सत्ता से ग्रथित करने का प्रयत्न नही किया। मैंने सदा चाहा है कि कला अपने बल पर विकसित हो अपने परो पर खडी हो यथासभव आर्थिक रूप मे भी स्वावलबी हो। यदि ऐसा न हो सके तो किसी राज्य से अनुदान लेने के स्थान पर वह जनता मे अपनी जडें फैलाए। जन-सामान्य से अपने लिए प्राण-शक्ति अर्जित करे।"

'इसमे कोई कठिनाई नही है क्या ?" सीता ने पूछा।

पहले तो दिखाई नही पडी थी किंतु अब उस ओर से भी क्रमश चिंताए ही घरती जा रही हैं।'

"कैसी चिंताए ?" लक्ष्मण उत्सुक जिज्ञासा से उनकी ओर देख रहे थे।

वाल्मीकि थोडी देर मौन रहे फिर बोले 'पुत्र ! अभी उनका अग्रिम आभास पा रहा हू। जन सामान्य मे अपनी जडें फैलाने का परिणाम यह है कि हम उनसे आर्थिक सहायता की आवश्यकता होती है। जब कलाकार, जनता की माग के बिना उसके सम्मुख अपनी कला का प्रदर्शन करता है और उस प्रदर्शन का पारिश्रमिक चाहता है तो जन-सामान्य उसे कलाकार न मानकर भिखारी मान बैठता है, और भीख के रूप मे कला का मूल्य नहीं दिया जा सकता। धीरे धीरे कलाकार निर्धन होता जाता है और इस

निधनता और आर्थिक पराश्रितता क कारण जनता उसकी कला का मूल्य और भी कम आकती है। कलाकार का सामाजिक स्तर गिरता जाता है। जो समाज धन मे व्यक्ति का मूल्य आकता है उसम कलाकार निधन ही नही अत्यज अस्पश्य और शूद्र मान लिया जाता है। कला स आजीविका कमान वाला अनेक पूरी की पूरी जातिया इसी प्रकार हीन घोषित कर दी गई है। यह चिता मेरी आत्मा को घुन क समान खा रही है राम ? कि कही ऐसा तो नही कि मैं समाज के श्रेष्ठ युवको को कला का शस्त्र देकर अपने स बलवान अपने स अच्छा मनुष्य बनाने के स्थान पर उन्ह सामाजिक दष्टि से भिखारी अथवा अत्यज बना रहा हू। ऐसा तो नही है कि मुभसे काव्य और सगीत की शिक्षा पाकर मरे य शिष्य समाज के लिए अधिक उपयोगी नागरिक बनने के स्थान पर गली-गली काव्य और सगीत का रस लुटाने हुए हथेली फलाकर गहस्थो से भिक्षा मागत फिरेंगे और उनकी दष्टि म कलाकार क स्थान पर घणित जीव होकर रह जाएगे। जब इनके लिए इस भविष्य की कल्पना करता हू तो मुझे कला से सामाजिक व्यवस्था म और कही अपने आपसे भी वितष्णा होने लगती है।'

'क्या एसी कोई शासन-पद्धति नही ऐसा कोई राज्य नही कला जिसका समथन करे और उस समथन क कारण राजाश्रय उसके लिए भय का कारण न रह ?

कला सदा वामा होती है राम ! वाल्मीकि इस गतव्य प्राप्त होते ही गतव्य नही रहता—वह आगे खिसक जाता है। कला अदभुत महत्त्वाकाक्षिणी है। ऐसी कोई व्यवस्था नही जिसमे कलाकार कोई त्रुटि न देख पाए।"

तो इसका समाधान क्या हो जाय ? लक्ष्मण अधीर हो उठे।

समाधान ही तो अभी मैं खोज नही पाया, पुत्र ! कला और राज्य के इस द्वद्व मे फसा कलाकार कभी अपना धम नही निभा पाता कभी अपने सम्मान की रक्षा नही कर पाता। मैं नही जानता कि अधिक घृण्य कौन है—वह कलाकार जो राजाश्रय या आर्थिक दष्टि स अपने सम्मान की रक्षा कर कला के साथ धोखा और बेईमानी करता है अथवा कला के प्रति

इमानदारी का व्यवहार करने वाला राजाश्रय को ठुकराने वाला कलाकार जो आर्थिक दृष्टि से पराश्रित होकर अपने परिवार को भूखा मारता है, और स्वयं अपनी तथा अपनी संतान की दृष्टि में घृणा और उपहास का पात्र बन जाता है।

'इस द्वंद्व का अंत कब होगा, ऋषिवर?' सीता ने पूछा।

'कला को आजीविका का साधन न बनाया जाए तो यह द्वंद्व है ही नहीं, और आजीविका का साधन बनी रही तो कदाचित यह द्वंद्व कभी समाप्त नहीं होगा। कलाकार वही धन्य है जो कला से कुछ मांगता नहीं—न धन, न यश, वरन् उसके लिए स्वयं को खपा देता है।'

ऋषि अत्यंत उदास थे।

५

प्रात भरद्वाज शिष्य अपने आश्रम लौट गए।

एक एक धनुष तूणीर तथा खड्ग साथ ल शेष शस्त्रो की सुरक्षा का समुचित प्रबध कर राम लक्ष्मण और सीता अपने आश्रम के लिए स्थान चुनने निकल। स्वय वाल्मीकि अपने कुछ शिष्यो को ले उनके साथ साथ मदाकिनी क किनारे किनारे घूमे। मदाकिनी की गति अपने नाम के अनुरूप इतनी मथर थी कि कहना कठिन था कि उसम प्रवाह था भी या नही। पानी की गहराइ भी अधिक नहीं थी। बिना घाट क भी किसी भी स्थान पर जल भरने अथवा स्नान करने म कोई जोखिम नहीं था। मन्दाकिनी के दोनो ओर ऊचे कगार थ किंतु पवत की चोटिया की ऊचाई अधिक नही थी। पवत पथरीला भी नही था। ऊचे-नीचे मिट्टी क ढह जैसे अनक टीले थे। आस-पास घने वन थे।

राम न मदाकिनी पयस्विनी और गायत्री के सगम से थोडा इधर कगार से हटकर एक दीघ वत्ताकार टील को आश्रम के लिए पसद किया। स्थान चुन लिये जाने पर कुटिया निर्माण का वास्तविक काय आरभ होना था जिसका दायित्व लक्ष्मण पर था।

वाल्मीकि कुछ शिष्यो को पीछ छोड स्वय लौट गए। उ ही शिष्यो के नेतत्व म राम लक्ष्मण और सीता वन के भीतर गए। और तब लक्ष्मण न नियत्रण सभाल लिया। उ होन अपनी आवश्यकता बताई और लकडी क

लिए स्वय देखभाल कर वृक्ष चुने।

कटाई आरभ हुई।

सीता के हाथ मे एक कुल्हाडी देकर राम ने भी एक कुल्हाडी उठा ली। वाल्मीकि शिष्यो के चेहरो पर हतप्रभता विरोध और सकोच प्रकट हुए।

राम हस पडे 'मित्रो! वनवासी का जीवन बिताना है, तो वनवासी के ही समान काम भी करना पडेगा।"

किंतु आय! देवी वैदेही।

व भी वनवासिनी हैं। वैसे भी परिश्रम शरीर और मन को स्वस्थ और सतुलित रखता है।'

लक्ष्मण इस बीच कुछ नही बोले। वे जानते थ राम एक नवीन जीवन पद्धति की ओर बढ रहे थे। उन्हे रोकना व्यर्थ था—रोकने की आवश्यकता भी क्या थी। वैसे भी लक्ष्मण के मन मे अनेक प्रश्न तथा उनके समाधान के लिए अनेक योजनाए उथल-पुथल मचा रही थी। आश्रम कैसा होगा? एक कुटिया भया और भाभी के लिए। एक कुटिया स्वय लक्ष्मण के लिए। दोनो कुटीरों के बीच एक शस्त्रागार। शस्त्रागार के दो द्वार जो दोनो कुटीरो म खुलते हो। एक कुटिया अग्निशाला के रूप म। एक कुटिया रसोई के लिए। एक कुटिया अकस्मात आ जाने वाले किसी अतिथि के लिए। बीच म एक खुला क्षेत्र, जहा वे इच्छुक वनवासियों को शस्त्राभ्यास करा सकें। थोडी-थोडी भूमि प्रत्यक कुटिया के पास शाक भाजी तथा फूलों की क्यारियो के लिए

आश्रम के चारो ओर बाड की भी आवश्यकता थी—जगली पशुओ और शत्रुओ से सावधान रहने के लिए। फिर उनके पास शस्त्र थे जिनके कारण व सुरक्षित थे, किंतु शस्त्रो के कारण ही उनके लिए जोखिम भी बढ गया था। शस्त्रो को छीनने अथवा उन्हे नष्ट करने के लिए भी उन पर आक्रमण हो सकता था।

इस सारी योजना को कार्यान्वित करने के लिए बहुत सारी लकडी चाहिए थी। उतनी लकडी एक ही दिन म नही काटी जा सकती थी, और फिर केवल लकडी ही नही काटनी थी। सध्या तक दो कुटीर अवश्य तैयार

हो जाना चाहिए थ। नप राम, वे धीरे धीरे लकडी काटकर करते रहेगे।

पडा पर ठकाठक कुल्हाडिया चल रही थी।

सीता थककर दम लने के लिए एक ओर बठ पसीना सुखा रही थी। ब्रह्मचारिया का विश्वास था कि योद्धा होने पर भी राम श्रमिक नही थे। अत थोडी दर मे वे भी थक जाएगे। किंतु राम के चेहरे पर अथवा कुल्हाडी के आघात की प्रबलता म थकावट का कोई लक्षण नही था। शस्त्र परिचालन के अभ्यास म किया गया श्रम सहज ही उन्ह कुल्हाडी चलान का बल भी दे रहा था। साधारणत कामल सा लगन वाला राम का शरीर श्रम की प्रगति के साथ साथ फूलता जा रहा था। उनकी पेशिया दढ़तापूवक अपना आकार प्रकट कर रही थी तथा क्रमश उनके प्रहार सधे हुए और सहज होते जा रहे थे।

लक्ष्मण का मन अपनी निर्माण योजनाओ म तथा आखें कटकर आयी सामने पडी लकडी पर थी। व अपनी आवश्यकतानुसार उन्ह चीर फाड रहे थे, अलग अलग नाप और गणना के अनुसार उनका वर्गीकरण कर रह थ।

सहसा लक्ष्मण का ध्यान अनजाने ही चरते हुए निकट आ गए हरिणो के झुड की ओर चला गया। वे वन्य मृग थे। किसी आश्रम के साथ उनका सबध नही लगता था नही तो इस घन वन म व नही आते। उनके आग आगे एक आकषक काला हरिण था लक्ष्मण का ध्यान आया, दोपहर क भोजन का प्रबध भी अभी करना था। उनके अभ्यस्त हाथो न धनुप पर बाण चढाया और छोड दिया।

झुड के भागने तथा काले हरिण के गिरने के कोलाहल से शेप लोगों का ध्यान उस ओर गया। लक्ष्मण को उस ओर बढते दख ब्रह्मचारी भी हरिण के पास चले गए।

साधु देवर!" सीता बोली तुम साथ आए हो इसकी उपयागिता ता आज मालूम हो रही है। आवास का प्रबध करते-करते तुमने भोजन का प्रबध भी कर दिया।'

'भाभी !" लक्ष्मण हस भोजन के सदभ म अपनी सीमा यही तक है। अब आग का न्ाम आप सभाल लें। दो व्यक्ति सहायताथ साथ ले लें औरजब तक हम लोग लकडिया का काम निबटात हैं तब तक आप इस भून लें।'

'अपने भैया का ध्यान रखना सीता मुसकराइ 'कही मुझ पर यह आराप न लगे कि मैं जान-बूझकर, लक्डी काटने का कठिन काम छोड, हरिण भूनने का सरल काम लेकर बठ गयी हू।'

अरे नही भाभी !' लक्ष्मण बोले, और कौन इतना अच्छा भाजन पकाएगा। कृपया आप वही काम सभालें। आज के अभियान का नायक मैं हू। काय विभाजन मैं ही करूगा।"

'नायक ! मुखर अपनी पक्ति स आग बढ आया, देवी वैदेही की सहायता के लिए मैं स्वय को प्रस्तुत करता हू। इस काम का कुछ अनुभव मुझे भा है।"

ठीक है, मुखर ! लक्ष्मण बोले 'अपने किसी मित्र को साथ ल लो!'

सीता के निर्देशानुसार, मुखर चेतन क साथ मिलकर हरिण को वहा स हटा, सुविधाजनक स्थान पर उठा ल गया। वहा उन्होंने उसका चम उतारा, उसके खड किए, और लकडिया को व्यवस्थित कर, आग जलाइ।

सीता बताती गयी और मुखर तथा चेतन उन मास खडो के विभिन्न काणा और पक्षा को आग पर रखत और उलटते-पलटते गए। आवश्यकता नुसार कभी-कभी सीता स्वय भी उन खडो का निरीक्षण कर कोण परिवर्तित कर देती।

देवी वदही !"सहसा बीच म मुखर बोला, सौमित्र ने जिस प्रकार इतनी दूर से एक ही बाण स इतने बडे हरिण का मार गिराया, क्या वैसे ही वे राक्षसों को भी मार सकते है?"

सीता ने मुसकराकर मुखर को देखा। वह लक्ष्मण की बाण विद्या से बहुत चमत्कृत लग रहा था।

'सौमित्र इससे भी अधिक दूर से एक नही, अनेक उत्पाती राक्षसों

को मार सकते हैं। सीता बोली।

कितना अच्छा होता यदि मेरे पिता ने भी यह विद्या सीखी होती।' मुखर अपने अतीत में डूब गया 'तब मेरे सारे कुटुंब की राक्षसों के हाथों इस प्रकार निरीह हत्या न होती। उसने रुककर क्षणभर सीता को देखा दवी वदेही '

तुम मुझे दीदी कहो मुखर!' सीता के स्वर में ममता थी।

दीदी!' मुखर की आँखें चमक उठीं 'मेरे पिता कहा करते थे कि उनकी लेखनी किसी शस्त्र से कम नहीं। गुरुदेव वाल्मीकि भी प्रायः यही कहते हैं। मुझे लगता है कि इसमें कहीं कोई भूल है। लेखनी किसी को प्रेरित कर शस्त्र उठवा सकती है यह ठीक है। केन्द्र में रह, लेखनी शस्त्रों द्वारा संरक्षित रह सकती है यह भी ठीक है, किंतु लेखनी अपने-आप में शस्त्रों की स्थानापन्न नहीं हो सकती

अपनी बात का प्रभाव जानने के लिए मुखर रुककर सीता की ओर देखने लगा।

मुझे ऐसा लगता है मुखर!' सीता बोली 'तुम अधिकांशतः लेखनी वालों के संसार में रहे हो मैं शस्त्र वालों के संसार में। मैं अपने अनुभव से नहीं केवल कल्पना के आधार पर उनके परस्पर संबंध पर विचार कर सकती हूँ।'

"मैंने सुना है दीदी " चेतन कहते कहते रुक गया। कदाचित् वह समझ नहीं पा रहा था कि इस संबोधन की अनुमति उसे भी है अथवा नहीं।

हाँ! कहो कहो।" सीता ने उसे प्रोत्साहित किया।

मैंने सुना है दीदी! राम लक्ष्मण से भी बहुत अच्छे अधिक शक्तिशाली तथा कुशल धनुर्धर हैं, और उन्होंने बहुत पहले अनेक राक्षसों का वध भी किया था।"

तुमने ठीक सुना है चेतन! माता मुसकराई, 'राम के न्याय शक्ति और कौशल को शब्दों में बाँधना कठिन है।

क्या राम अपनी यह विद्या दूसरों को भी सिखाएँगे?' चेतन का स्वर बहुत भारी था।

क्यों नही ! यदि सुपात्र मिला ता अवश्य सिखाएगे।"

चनन आग म भुनते हुए मास-खड को परखने लगा। मुखर की आखें क्षितिज पर टिक गयी। वह कुछ भी देख नही रहा था। वह सोच रहा था। उसके चितन के साथ साथ, आखो का शून्य भाव, क्षीण ज्योति म बदलता जा रहा था।

भोजन के पश्चात काटी गइ लकडिया को लेकर व लाग नय आश्रम के लिए चुन गए स्थान पर आ गए। अब शक्ति और श्रम के स्थान पर कौशल की आवश्यकता थी। प्रत्यक व्यक्ति निरतर काम करता दिखाई पड रहा था किंतु लक्ष्मण सबसे अधिक व्यस्त थ । निर्माण-काय बडी शीघ्रता से हो रहा था। सूय से जैसे होड लगी हुई थी। अतत लक्ष्मण सफल हुए । जिस समय तीन कुटीर बन तैयार हुए सूर्यास्त म अभी समय था ।

एक बार फिर म वाल्मीकि आश्रम की आर यात्रा आरभ हुई। अत्यत सावधानी से सारा शस्त्रागार नय आश्रम म स्थानातरित किया गया और राम सीता तथा लक्ष्मण न अपने आश्रम म प्रवश किया। बडे कुटीर म राम तथा सीता का स्थान था छोटा कुटीर लक्ष्मण के लिए था, और उन दोनो को मिलान वाला मध्य कुटीर शस्त्रागार था। मध्य कुटीर म बाहर की आर खुलन वाला न ता कोइ द्वार था न गवाक्ष। उसम से एक-एक लघु द्वार राम-सीता तथा लक्ष्मण वाले कुटीरो म खुलता था।

व्यवस्था पूर्ण होन पर वाल्मीकि शिष्य अपने आश्रम की ओर लौट गए। उन्ह सूर्यास्त स पूव अपन आश्रम में पहुचना था। उस दल के पीछे पीछ सबस धीमी गति से चलन वाला व्यक्ति मुखर था।

रात को लक्ष्मण सोन के लिए अपनी कुटिया म चल गए, ता राम ने सीता की ओर परीक्षक दृष्टि स देखा, क्या प्रतिक्रिया है सीता का आज तक की घटनाओ के विषय म ?

अयोध्या मे बाहर न यह पहला दिन था न पहली रात। किंतु अब तक व लोग चलते रहे थे। प्रत्यक दिन पिछले दिन से भिन्न था, और

प्रत्येक रात पिछली रात से। कोई असुविधा अधिक नहीं खटकती थी क्योंकि अगला दिन उसी प्रकार कटने वाला नहीं था। आज मे उनके जीवन मे एक विराम आया था, और एक सीमा तक स्थायित्व भी। वनवास की सारी अवधि उन्हें चित्रकूट में व्यतीत नहीं करनी थी, किंतु संभव है कि उन्हें यहां वर्ष भर नहीं तो कुछ मास लग जाए। जाने कब अयोध्या के दूत, भरत को बुलाने जाएं। कैकयी को भरत के युव राज्याभिषेक की जल्दी है इसलिए दूतों को भेजने में अधिक समय नहीं लगेगा। केकय राजधानी बहुत निकट नहीं है। दूतों को पहुंचने में कुछ समय लगेगा फिर भरत के नाना उसे विदा करने में भी समय लगाएंगे ही। भरत लौटेंगे उनका अभिषेक होगा, वे सत्ता हाथ में लेंगे, तब कहीं जाकर उनकी नीति स्पष्ट होगी। तब तक राम को चित्रकूट में रुकना होगा

वनवास की अवधि में लक्ष्मण किसी प्रकार की असुविधा का अनुभव नहीं करेंगे—राम जानते थे—उन्हें केवल राम का संग मिल जाए तो वे मग्न हो जाते हैं और यहां तो सामने एक लक्ष्य भी था। यह सारा चित्रकूट प्रदेश उनके सम्मुख था। यहां के लोगों से परिचय प्राप्त करना था। उनकी जीवन-पद्धति को समझना था उनकी कठिनाइयां और समस्याओं को जानना था। विभिन्न आश्रमों की व्यवस्था और उनके शिक्षण-स्तर को परखना था। फिर प्रकृति एक चुनौती के समान उनके सामने खड़ी थी। पर्वत नदी वन हिंस्र पशु, और जैसा कि भरद्वाज आश्रम से ही सुनाई पड़ना आरंभ हो गया था कि इस क्षेत्र में राक्षसी अन्याय भी बढ़ता जा रहा था। लक्ष्मण इन सब में उलझ रहेंगे। उन्हें अयोध्या की याद नहीं आएगी माता की याद भी नहीं आएगी। जानने सुनने को कुछ नया हो करने को कुछ अपूर्व हो, सामने एक चुनौती हो तो लक्ष्मण स्वयं को भी भूले रहते हैं

पर सीता! चार वर्षों के दाम्पत्य जीवन में राम ने सीता को अच्छी प्रकार जाना-समझा था। किंतु लोक चिंतन कहता है कि स्त्री कोमल होती है उसका मन कठिनाइयों से भागता है तथा वैभव और सुविधा की ओर झुकता है। सीता के आज तक के व्यवहार ने इस चिंतन का समर्थन नहीं किया था। वे सदा लोक-कल्याण की प्रवृत्ति की ओर झुकी थीं किंतु

आज स पहले तो राम उनके साथ इस प्रकार का कठिन व"य जीवन व्यतीत करने के लिए बाहर भी नही निकले थे। सभव है इस कठिन जीवन म सीता को असुविधा हो

दवी सीत !' राम का स्वर बहुत मदु था।

सीता ने चौंककर पति की ओर देखा, 'क्या बात है राम! आप मुझे प्रिय' नही कह रहे। इतने अतिरिक्त कोमल और शिष्ट क्यो हो रहे हैं? कहीं फिर से मुझे अयोध्या लौट जाने का प्रलोभनयुक्त उपदेश देन का विचार ता नही है?'

राम की आधी चिंता दूर हो गयी। वे कुछ हल्के हुए और कुछ सहज भी।

'नही, प्रिये! अयोध्या लौटने को नही कहूगा, किंतु यह पूछने की इच्छा अवश्य है कि इस व"य जीवन म कोई असुविधा तो नहीं? वन म आने का कोई पश्चात्ताप कोई उत्तर विचार कोई पुर्नविचार ?'

झगडे की इच्छा तो नहीं?' सीता सुहाग भरी मुसकान अधरों पर ले आयी।

नही! राम मुसकराए 'पर अपनी पत्नी की उचित देखभाल मेरा कत"य है। इसलिए उसकी सुविधा-असुविधा को तो जानना होगा। जो राम सीता से विवाह कर उसे अपने घर लाया था, वह अयोध्या का सभावित युवराज था वनवासी नहीं। मेरे मन म एक अपराध भावना है प्रिय! कि मैं तुम्हे और लक्ष्मण को तुम दोनो के प्रेम का "ड दे रहा हू।

सीता पुन मुसकराइ 'प्रेम तो अपने-आप म एक दड है। प्रेम किया है ता उसका दड भी स्वीकार करना ही होगा। वह कोई नयी बात तो नही। किंतु एक असुविधा मुझे है। '

'क्या?' राम न उत्सुकता से पूछा, वही तो मैं भी जानना चाह रहा हू।'

सीता गभीर हो गयीं यदि चौदह वर्षों तक मेरे पति मुझसे इसी प्रकार औपचारिक व्यवहार करते रह, और एक भले आतिथेय के समान

अपने-आप को भी परायी लगने लगूगी ''

राम जोर से हस पडे।

'मैं आपके साथ इसलिए आयी थी कि हमारे बीच राज प्रासाद और राज-परिवार की सारी औपचारिकताए समाप्त हो जाएगी। मैं अपने पति के लिए सघन जनसख्या वाले प्रदेश की इकाई न होकर उनके इतनी निकट होऊगी कि वे अनेक कामो के लिए मुझ पर निर्भर होंगे। हम दोनो सहज रूप मे दो साथियो के समान कार्य करेंगे। मैं उन्मुक्त प्रकृति के बीच अपने प्रिय के साथ जीवन के नये आयाम देखूगी और आत्म निर्भर इकाई के रूप मे समाज के लिए कुछ उपयोगी हो सकूगी।'

राम आगे बढ़ आए। उन्होने सीता के कधो पर हाथ रख दिए यही होगा प्रिये! यही होगा। जाने क्यो मैं कभी-कभी विभिन्न सभावनाओ पर विचार करते करते कोई ऐसी बात सोचने लगता हू जिसमे स्वय मुझे भी अपनी पत्नी की उदात्तता समझने मे कठिनाई होने लगती है उन्होने सीता को अपनी बाहो मे भर लिया मुझे लगता है सीते! व्यक्ति कितना ही दृढ निश्चित तथा आत्मविश्वासी क्यो न हो यदि वह मनुष्य है तो उसके जीवन मे कभी न-कभी तो दुर्बल क्षण आते ही है— जब वह आशकित होता है असभव सभावनाओ की कल्पना करता है तथा स्वय अपने सबधो पर सदेह करता है।

'प्रिये! ऐसे ही क्षणो मे बल देने के लिए सीता तुम्हारे साथ आयी है। सीता ने अपना सिर राम के वक्ष पर टिका दिया।

तो ऐसा ही हो प्रिये! कल से तुम्हारा नया जीवन आरभ हो। कल प्रात से तुम वनवासिनी वदेही बन जाओ एक स्वतत्र आत्मनिर्भर व्यक्ति, राम के साधारण जीवन की सगिनी और सहगामिनी।

सीता ने मस्तक उठाकर दुलार से राम की ओर देखा।

राम मुग्ध हो उठे।

सवेरे राम ने लक्ष्मण को जगाया उठो सौमित्र! सावधान हो जाओ। मैं और सीता मन्दाकिनी पर जा रहे है।

वे दोनों कुटिया से निकल आए। बाहर निकल सीता ने उस

चमत्कारपूर्ण उषा को मन भरकर देखा। उनकी गति चपल तथा उत्फुल्ल थी। व कभी राम क साथ चल रही थी, और कभी राम से दो डग आगे। टीले की ढाल पर दौडने मे वैसे भी कोई परिश्रम नही था।

सुबह की सैर के लिए ऐसे तो हम अकेले पहले कभी नही निकले। सामा य जन होना भी कितना सुविधाजनक है।' सीता बोली 'ऋतु कितना मोहक है।"

प्रस न हो ?"

बहुत !'

तो मदाकिनी स पूछ लो ऋतु कितनी मोहक है। राम बोल 'यहा घाट नही है। सभलकर आना। कही कही नदी अप्रत्याशित रूप से गहरी भी हो सकती है।'

सीता ने राम के पीछे-पीछे जल म प्रवेश किया।

यहा और कोई नही आएगा ?

आना निषिद्ध तो नहीं।" राम बोल, यह अयोध्या का राजघाट नही है जिस पर आज्ञा द्वारा प्रतिबध लगाया जा सके। पर किसी के आने की सभावना कम ही है। आस-पास आबादी प्राय नही है। जहा आश्रम अथवा ग्राम होंगे—मदाकिनी उनके पास स ही बहती होगी। उनकी आवश्यकता वहीं पूरी होती होगी व यहा नही आएगे।"

अयोध्या म सरयू हमारी होते हुए भी हमारी नही थी। मदाकिनी हमारी न होत हुए भी हमारी है। राजनीतिक अधिकारों से प्राकृतिक अधिकार कितना अधिक सहज है।

'अधिकार तो सारा धरती का है।' राम बोल स्वय को धरती की सतान बना लेने पर सारे अधिकार प्राप्त हो जाते हैं।"

सीता की उत्फुल्लता क्रमश विकसित होती गयी। वे मुक्त रूप से जल म उतरती गयी। मदाकिनी के सहज प्रवाह मे तरना कितना अच्छा लग रहा था—न कोई बधन न नियत्रण, न प्रतिरोध। जी चाहता था धारा के साथ तरती-तरती दूर तक निकल जाए।

व तेजी से तरती हुई, राम के पास से निकल गयी राम ! मुझे पकडो।'

राम ने सीता को देखा—पिंजरे से छूटे पक्षी ने खुला आकाश मिलते ही पंख खोल उड़ानें भरनी आरम्भ कर दी थीं। उसकी सारी आशंकाएं सर्वथा निर्मूल थीं। सीता का ऐसा उल्लास तो उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था।

उन्होंने अपनी गति बढ़ाई। अगले ही क्षण वे सीता के समीप थे "पकड़ूं ?'

सीता ने ढेर सारा पानी उनकी ओर उछाल दिया और खिलखिला कर आगे बढ़ गयीं, अरे युवराज की मर्यादा को क्या हो गया। साधारण जन के समान अपनी पत्नी के पीछे भाग रहे हैं।"

"अपनी पत्नी के पीछे भागने वाला साधारण जन होता है और दूसरों की पत्नियों के पीछे भागने वाला विशिष्ट जन ?" राम हंसे।

"परम्परा तो यही है।' सीता खिलखिलाई "वस्तुतः भी समर्थ जन कब अपनी पत्नियों के पीछे भागे हैं ?'

"पत्नी के पीछे भागना तो पुरुष मात्र की नियति है देवी। विशेषकर रघुवंश में। और तुम तो मेरी प्रिया भी हो।"

राम ने आगे बढ़कर मार्ग छेक लिया "लौट चलें ? सौमित्र प्रतीक्षा कर रहे होंगे।'

'चलो। पर सन्ध्या समय फिर आएंगे। तैरना बहुत अच्छा लग रहा है।'

"अवश्य।'

किनारे पर आ उन्होंने सूखे वस्त्र पहने।

अपने आश्रम की दिशा के कगार की ओर मुड़ने से पहले सीता ने एक दृष्टि मंदाकिनी के जल पर डाली। दूसरे तट पर पानी से लगकर खड़ा वह कुबड़ा अर्जुन वृक्ष कितना अच्छा लग रहा था। उसकी डालें प्रवाह के ऊपर तक झुक आयी थीं और पत्ते पानी को छू रहे थे। तैरते हुए सीता उसके पास से निकली थीं तभी उन्हें इस वृक्ष ने आकर्षित किया था। और उनकी अपनी ओर के तट पर टिटहरियों का वह जोड़ा... किंतु कुछ दूर पर यह क्या था ? कोई मानव आकृति थी। हां स्पष्ट हो गया। घड़ा भरती हुई कोई भील-कन्या थी।

आप चलें। मैं अभी आती हू।"

राम अकेले अपने आश्रम की ओर चले। सीता कदाचित उस भील किशोरी से परिचय करना चाहती थी। वे लोग आश्रम के इतने निकट थे कि सीता को अकेली छोडने म किसी सकट की सभावना नही थी।

सीता को अपनी ओर आते देख, भील किशोरी रुक गयी। उनके निकट आने पर कुछ ठिठकी फिर जैसे साहस कर हल्के से बोली "देवि! आपको पहले तो कभी नहीं देखा।"

सीता मुसकराइ 'मैं देवी नही दीदी हू। समझी? तुम्हारा क्या नाम है?'

मैं सुमेधा हू।" किशोरी की प्रगल्भता कुछ सकुचा गयी।

'सुदर नाम है। किसने रखा है तुम्हारा नाम?

"ऋषि वाल्मीकि ने।" सुमेधा बोली 'बाबा कहते हैं पहले ऋषि का आश्रम हमारे गाव के बहुत निकट था, तब हम उनके आश्रम म बहुत आया-जाया करत थे। व मुझसे बहुत स्नेह करते थ।"

'ऋषि ने अपना आश्रम क्यो हटा लिया? सीता ने पूछा।

राक्षस लोग रोज झगडा करत थे। ऋषि की साधना मे विघ्न पडता था। ऋषि उत्तर की ओर हट गए।"

सीता के लिए यह नयी सूचना थी। चकित होकर बोलीं 'और तुम्हारा गाव?'

गाव म गडबड हानी रहती है।' सहसा सुमेधा कुछ भयभीत और व्याकुल हो उठी, दीदी! मुझे पानी ले जाना है। फिर बताऊगी।"

वह चल पडी किंतु कुछ ही क्षणो के बाद लौटी आप कहा रहती हैं?"

'वह ऊपर टीले वाला आश्रम हमारा है।" सीता ने इगित किया कब आओगी?'

दोपहर को।' सुमेधा घडा उठाए भागती चली गयी।

सीता उसके आकस्मिक भय और व्याकुलता को समझने का प्रयत्न करती हुई लौट आयीं।

प्रातःकालीन कार्यों से निवृत्त हो लक्ष्मण ने कुल्हाड़ी संभाली, और पिछले दिन लायी गयी लकड़ियों में व्यस्त हो गए।

नायक ! मेरा कर्तव्य भी बताएँ।" सीता बोलीं।

"भाभी ! आज आपका और भैया का इस निर्माण में कोई काम नहीं है। मेरी ओर से आप मुक्त हैं।

तो मैं क्या करूँ ?" सीता ने जैसे अपने-आपसे प्रश्न किया।

तुम्हारी शस्त्र-शिक्षा आरंभ होगी।" राम बोले, "जाओ शस्त्रागार में से एक धनुष, एक तूणीर और दो खड्ग ले आओ।"

राम ने धनुष तथा खड्ग का चुनाव सीता पर छोड़ दिया था। सीता शस्त्रागार के भीतर गयीं तो उनके मन में अनेक प्रश्न उठ खड़े हुए—क्या राम यह मानकर चल रहे हैं कि सीता को शस्त्रास्त्रों के प्रकारों तथा वर्गों का आरंभिक ज्ञान है ? अथवा वे ऐसे आरंभिक ज्ञान को इस प्रशिक्षण के लिए आवश्यक नहीं समझते ?

उन्होंने एक धनुष उठाया, किंतु उठाते ही लगा कि धनुष भारी था, चालन के लिए बहुत देर तक उसे हाथों में उठाए रखना सीता के लिए संभव नहीं होगा। यदि वे उसे उठाए भी रहेंगी तो अधिकांश बल और ध्यान धनुष को उठाये रखने में ही लगा रहेगा, लक्ष्य-संधान के लिए न तो बल बचेगा, न बुद्धि। इस प्रकार के भारी धनुष से लक्ष्य-संधान सीखना तो एक विदेशी भाषा में ज्ञान प्राप्त करना है—सारी बुद्धि भाषा को सीखने में ही लग जाएगी, विषय तक पहुँचने का तो अवकाश ही नहीं होगा।

एक अपेक्षाकृत हल्का धनुष सीता ने अपने लिए पसंद किया और एक हल्का-सा खड्ग। राम के लिए उन्होंने एक भारी खड्ग उठाया, किंतु दूसरे ही क्षण उसे वापस रख दिया। प्रशिक्षण बराबर भार के शस्त्रों से हो, तो अच्छा है।

बाहर आकर उन्होंने अपने मन में गूँजते प्रश्न राम के सम्मुख रख दिए।

राम मुसकराए, "शस्त्रों का चुनाव प्रशिक्षण के लिए अत्यंत

महत्त्वपूर्ण है सीते ! मैंने उनका चुनाव तुम पर छोड़कर देखना चाहा था कि कहीं तुम गलत शस्त्र का चुनाव तो नहीं करतीं। शस्त्र अपने-आप में वस्तुतः महत्त्वपूर्ण होता है किंतु उससे भी महत्त्वपूर्ण शस्त्र का चुनाव होता है। शस्त्र का चुनाव दो दृष्टियों से होना चाहिए—प्रथम शस्त्र-परिचालन की दक्षता तथा द्वितीय शत्रु के शस्त्र का आकार प्रकार। वैदेही ! ऐसे शस्त्रों से युद्ध करने का कोई लाभ नहीं जो अपने आप में श्रेष्ठ तो हों, किंतु हम उनका परिचालन दक्षता एवं सुविधा से न कर सकें। इसका बहुत अच्छा उदाहरण जनकपुर में रखा हुआ शिव धनुष था। अपने आप में वह शस्त्र अत्यन्त श्रेष्ठ तथा सक्षम था किंतु यदि सम्राट सीरध्वज उससे युद्ध करने जाते तो कोई लाभ न होता। उतना बड़ा धनुष होते हुए भी वे निःशस्त्र सरीखे ही रहते। ठीक है ?

सीता ने सहमति में सिर हिला दिया।

दूसरी बात शत्रु की प्रहारक शक्ति की है। राम ने अपनी बात आगे बढ़ाई, 'यदि शत्रु के पास धनुष है तो हमारा खड्ग बहुत काम नहीं आएगा। हमें अपने शस्त्र के चुनाव में सावधान रहना चाहिए कि हम उसके प्रहार को रोक भी सकें और अपनी प्रहारक शक्ति उससे अधिक भी सिद्ध कर सकें। अब तुम अभ्यास आरंभ करो।'

सीता बाण चलातीं और राम उसमें हुई त्रुटियां समझाकर दूसरा बाण चलाने को कहते। कभी-कभी धनुष वे अपने हाथ में ले लेते और स्वयं बाण चलाकर बताते।

धनुष-बाण के पश्चात खड्ग की बारी आयी। सीता ने खड्ग पकड़ना, उसे सभालना, बाहु संचालन तथा प्रहार की विभिन्न मुद्राओं का अभ्यास किया।

दोपहर का शस्त्र शिक्षा का कार्य स्थगित हुआ तो लक्ष्मण ने भी अपना हाथ रोक लिया। उनकी अतिथिशाला का निर्माण पूरा हो चुका था।

भोजन के पश्चात राम अपना आश्रम छोड़, टीले से नीचे उतर आए। वे मन्दाकिनी के तट के साथ-साथ आगे बढ़ते गये। उनका लक्ष्य यहां के भूगोल को समझना तथा आस-पास के लोगों का परिचय प्राप्त करना था।

कुलपति की सावधानी और सचेतता से राम प्रभावित हुए। बोले आर्य कुलपति ! निरापद नहीं है इसीलिए शस्त्र साथ लेकर चलता हूं। और शस्त्रधारी क्षत्रिय किसी भी स्थान को अपने लिए निरापद नहीं मानता। वैसे आपकी इस धारणा का कारण जान सकता हूं?'

'यह प्रदेश राक्षसों के आधिपत्य में है ऐसा तो नहीं कहूंगा। कालकाचार्य बोले किंतु राक्षस प्रभावित अवश्य है। ऋषि-आश्रमों के अतिरिक्त भीलों के असंख्य ग्राम भी हैं किंतु इच्छा राक्षसों की ही चलती है। यहां दिन प्रतिदिन राक्षस-तंत्र प्रबल होता जा रहा है। तुम्हारे शस्त्र देखकर राक्षस भड़केंगे राम। क्योंकि वे प्रत्येक शस्त्रधारी को अपना शत्रु मानते हैं। तुमसे मिलने जुलने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर उनकी वक्र दृष्टि पड़ेगी वत्स ! तुम्हारी युवती पत्नी किसी भी प्रकार सुरक्षित नहीं है।

राम अपनी आंखों से कालकाचार्य को तोलते रहे—एक भीरु बुद्धिजीवी उनके सामने बैठा था।

'आर्य शस्त्र को विपत्ति का कारण समझते हैं?'

'हां पुत्र ! शस्त्र तुम्हारी रक्षा कम करेगा जोखिमों को आमंत्रित अधिक करेगा। इसीलिए मैं अपने आश्रम में शस्त्र प्रशिक्षण की अनुमति नहीं देता।'

एक व्यक्तिगत प्रश्न पूछना चाहता हूं। राम ने कालकाचार्य की आंखों में देखा अन्यथा तो न मानेंगे?

कालकाचार्य की आंखों में क्षण भर के लिए परेशानी झलकी, उन्होंने स्वयं को नियंत्रित किया पूछो।

यह स्थान निरापद नहीं है तो आर्य कहीं अन्यत्र क्यों नहीं चले जाते? तपस्वी का जीवन छोड़ नागरिक क्यों नहीं बन जाते?

कालकाचार्य की आंखें उदास हो गयीं 'पुत्र ! अनेक कार्य ऐसे होते हैं जिनका दो टूक कारण नहीं बताया जा सकता। अब तुमसे क्या कहूं—स्वभाव से तपस्वी हूं कुछ और हो ही नहीं सकता। तपस्वी नगरों में नहीं बसते और राम ! जन्मभूमि छोड़ अन्यत्र किसी अपरिचित स्थान में बसने का उद्यम भी जुटा नहीं पाता।" वे सायास मुसकराए कायर नहीं हूं। भीरु हूं और अतिरिक्त रूप में सावधान भी।

राम के जाने के पश्चात लक्ष्मण फिर से अपने निर्माण-काय म जुट गय। गहस्थी का कोइ छोटा मोटा काय भी सीता के पास नही था। सोच ही रही थी कि व प्रात प्राप्त की गयी शस्त्र विद्या का अभ्यास करें या लक्ष्मण के न चाहन पर भी उनके निमाण काय म सहायता करें।

तभी सुमेधा आश्रम की आर आता दिखायी पडी। सीता को सहज सुमधा का अकस्मात ही "याकुल होकर भाग जाना याद आ गया

'सवरे तुम इतनी जल्दी भाग क्यो गयी सुमेधे?' पास आन पर सीता ने पूछा मुझे लगा कि तुम कुछ भयभीत भी थी।'

आह दीदी!" सुमेधा बोली मुझे स्वामी के लिए जल ले जाना था न। दर हो जाती तो वह मार मारकर मेरी हड्डिया तोड देता।"

तुम्हारा पति?

नही दीदी! सुमेधा कुछ सकुचित हुई स्वामी! मरा स्वामी मरे पिता का स्वामी इस वन का स्वामी '

सीता चकित थी 'क्या कह रही हो सुमेधे? एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का स्वामी कसे हो सकता है! कुछ स्थानों पर स्त्रिया अपन पति को गह स्वामी के स्थान पर स्वामी कहती है किंतु वह सबोधन मात्र है। स्नेह और प्रेम जताने की विधि है। प्रत्येक मनुष्य स्वतत्र "यक्ति के रूप मे जन्म लता है और स्वतत्र रूप स जीवन-यापन करता है। उसका कोई स्वामी कैसे हो सकता है! क्या तुम्हारे यहा अभी तक दास प्रथा प्रचलित है?'

हा! हा!! सुमेधा अत्यत सरल भाव से बोली 'एसी ही बातें ऋषि वाल्मीकि ने भी हमारे गाव के कुछ लडको का सिखायी थी। लडकों ने उन बातो का सच मान लिया था और स्वामी से झगड पडे थे। स्वामी न उन सब को बाधकर कोठरी म डाल दिया था और यातना दे-देकर एक एक को मार डाला। बाद मे उसने ऋषि के आश्रम के कुछ लोगो के भी हाथ-पर तोड दिए थे। अब हमारे ग्राम म इन बातो पर कोई विश्वास नही करता। भला सब लाग समान कैसे हो सकत हैं—राक्षस राक्षस हैं, और भील भील।

'तो तुम्हारा स्वामी राक्षस है?' सीता ने कुछ कांपते हुए पूछा।

हा, नीदी ! पहल निरात था, पर जब से धनवान हुआ है राक्षस हो गया है। और अब नि प्रतिदि उसका धन भी बढ़ रहा है और बल भी।'

पर वह इस वन का स्वामी कैसे हो गया ? क्या वन उसने उगाया है या यह धरती उसने बनाई है ? धरती उस पर रहने वालो की सामूहिक सपत्ति है। वन नदिया पवत तथा खानें—सपूण समाज की सपत्ति होती हैं। शासक जनता की ओर से ही उनका प्रबध करता है।

सुमेधा जोर से हस पडी, तुम्हारी बात कोई नहीं मानेगा दीदी ! कोई भी नही। किसको अपनी जान प्यारी नही है। किसे अपनी हड्डिया तुडवानी हैं।

अच्छा ! तुम लोग इसके दास क्यों हो ? सीता ने बातो की दिशा मोडी।

"मेरे पिता को किसी अपराध क लिए स्वामी ने आर्थिक दड दिया था। पिता के पास धन नही था। स्वामी ने ही पिता को ऋण दिया। पिता वह ऋण चुका नही पाए हैं। इसलिए व स्वामी के दास हुए उनकी पत्नी होने के कारण मेरी मा और पुत्री होने क कारण मैं उनकी दासी हुई। दासो की सतान भी तो दास ही होनी है।'

सुमेधा अपना ज्ञान प्रदर्शित कर प्रसन्न थी।

'तुम और तुम्हारे माता पिता—तीनो क्या काम करत हो ?'

जो स्वामी कहें।' सुमेधा ने बताया पानी लाना। जमीन खोदना। पेड काटना। खाना पकाना। बतन माजना। स्वामी और उसके परिवार की सेवा करना। जो भी स्वामी कह।'

तुम्हारा विवाह होगा ?"

सुमेधा फिर सकुचित हो गयी यह तो स्वामी की इच्छा पर है। वे चाहें मेरा विवाह कर दें। वे चाहें मुझे किसी को दे दें। वे चाहें मेरा भोग करें। वे चाहें मुझे खा जाए "

सीता हतप्रभ-सी बैठी सुमेधा को देखती रही। यह लडकी कितनी सहजता से यह सब कह रही है। न केवल कह रही है सब-कुछ स्वीकार भी कर रही है। और उसे कही यह बोध नही है कि यह गलत है, यह अन्याय

है। इसका विरोध होना चाहिए और यह लडकी यहा के जन-सामान्य की प्रतीक है। सीता समझ नही पा रहे थी कि सुमेधा को कैसे समझाए। उससे तर्क करें उसे बल दें उपदेश दें धिक्कारें

अच्छा ! मैं चलू दीदी। सुमेधा उठ खडी हुई।

सुनो सुमधा !'' उसके उठ खडे होने से सीता चौंक उठी मेरा एक काम करना बहन। मेरे पास कोई घडा नही है। पत्तो के दोना म पानी लाने म काफी असुविधा रहती है। मुझे एक घडा कही स ला दोगी ? तुम्हारे ग्राम म कोई कुम्भकार है क्या ?"

हा दीदी ! मैं कुम्भकार को ही तुम्हारे पास भेज दूगी। अपनी इच्छा के अनुसार घडा बनवा लेना। अच्छा दीदी।'

सुमेधा बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए चपलतापूर्वक भाग गयी।

सध्या स पूर्व राम लौट आए। लक्ष्मण न तब तक अग्निशाला भी बना कर पूरी कर दी थी।

भारी परिश्रम किया है, सौमित्र, तुमने !'' राम बोले 'तनिक भी विश्राम नही किया क्या ?

काम करना अच्छा लग रहा है।' लक्ष्मण बोले, 'विश्राम तो थकान के बाद होता है। थकान तो मुझे अभी हुई ही नही।

'तुमने क्या किया प्रिये ?'

सीता क्षण भर कुछ सोचती मौन बैठी रही, फिर धीरे स बोली, 'मैंने कुछ किया या नही कह नहीं सकती, पर वह लडकी अनायास ही मेरा ज्ञान बहुत बढा गयी है '

सुमेधा के साथ हुई अपनी बातचीत सीता न पूरे विस्तार से दुहरा दी।

राम गभीर हो गए। लक्ष्मण के चेहरे पर आक्रोश था।

"इस प्रदेश की स्थिति का कुछ कुछ आभास मुझे था," राम चिंतनमय स्वर म बोले 'किंतु स्थिति इतनी दुखद तथा अत्याचारपूर्ण है, ऐसा मैंने नही सोचा था। आज मैं भी कुछ आश्रमो के निवासियो से मिलकर आया हू। मार्ग म मिले अनेक पथिको से भी बातचीत की है, अब सुमेधा की

बाग भी सुनी है। यह प्रदेश सभ्यता के आदिम युग म जो रहा है। समस्त प्रदेश वना स भरा पड़ा है। *व्यवस्थित राज्य की स्थापना नहीं हुई है*, किंतु स्थान-स्थान पर क्षीण जनसंख्या वाले अनेक आश्रम ग्राम पुरव टोल बस गए हैं। जो कुछ मुझे ज्ञात हुआ है उसके अनुसार प्राय प्रत्येक जाति क लोग यहाँ बस हुए हैं और बसत जा रहे हैं। आर्यों की अनेक उपजातिया के लोग शबर किरात नाग निषाद कोल भील *यक्ष, किन्नर वानर तथा ऋक्ष जातियों के लोग हैं।* किंतु इन्हीं सब के बीच एक नयी जाति पनप रही है—यह जाति रक्त तथा आकार प्रकार की भिन्नता के अनुसार नहीं है, वह एक चिंतन प्रवृत्ति है। यह प्रवृत्ति-जाति राक्षसों की है। प्रत्येक जाति क अनेक लोग जसे-जसे अन्य लोगो की संपत्ति हड़पकर धनाढ्य बनत जात हैं—राक्षस प्रवृत्ति म दीक्षित होत जाते हैं। उन्हें राक्षस-सम्राट रावण का अभय प्राप्त है। आवश्यकता *होने पर उन्हें उससे धन बल सेना, सहायक—सब कुछ मिल जाता है।* किंतु सामान्यत रावण ने इधर सैनिक उत्पात नहीं किए हैं। इसी धरती म उसकी सहायता के लिए इतने राक्षस उपजते जा रहे हैं कि उसे लका से राक्षस लाने की आवश्यकता नहीं है।

"य राक्षस इस सपूर्ण वन प्रदेश पर अपना आधिपत्य जमाना चाहत हैं। व अन्य लोगो के यहाँ आकर बसने के विरोधी नहीं हैं क्योंकि यदि ऐसा होता तो रावण की राक्षस-सेना इस समस्त प्रदेश को घेर लेती और अन्य लोगो का प्रवेश निषिद्ध कर देती। ऐसी स्थिति म य वन उपवन नदियाँ पवत उनके किसी काम न आत। उन्हें वनो को काटने भूमि जोतने खानो स धातुए निकालने नदियों स मछलियाँ पकड़ने नौकाए चलाने अपने घरेलू कामो तथा व्यक्तिगत सेवाओ के लिए दास चाहिए। भोग क लिए स्त्रियाँ चाहिए नर माँस क लिए पुरुष चाहिए। इन्हीं सब कारणों स वे चाहत हैं कि इस प्रदेश म पहले से बसे हुए लोगो की जनसंख्या बढे तथा बाहर से आकर भी विभिन्न जातियों के लोग बसें। किंतु वे नहीं चाहते कि यहाँ की प्रजा बुद्धिवाली स्वतंत्र चिंतक आत्मनिर्भर अधिकारों के प्रति सजग सचेत तथा आत्म रक्षा म समर्थ एव शक्तिशाली हो। वे चाहते हैं यहाँ की प्रजा बाड़े म पला उनका पशुधन हो जिसका

कोई अधिकार न हो जिसकी कोई अपेक्षा और चिंतन न हो। जिसे वे जिस काम म चाहें जोत दें और जब चाहें उसे मारकर खा जाए। अपनी रक्षा म समय शरीर तथा स्वतत्र रूप म सोचने वाला मस्तिष्क उन्हें अपने लिए खतरा लगता है अत उसे वे अपना शत्रु मानते है। बुद्धिवादी ऋषि उनके सबसे बडे शत्रु हैं क्योंकि व लोग न केवल स्वय शक्तिशाली हैं वरन चिंतनशीलता का राग सक्रामक रूप से फैलाते हैं। उनके सपर्क म आने वाले अन्य लोग भी सोचने लगते हैं जानने लगते हैं सगठन म विश्वास करने लगते हैं, जाति सम्प्रदाय तथा व्यवसाय के नाम पर, परस्पर लडने मरने को स्वीकार न कर समता के आधार पर मानवीय अधिकारों के लिए सघर्ष करने लगते हैं

राम ! क्या राक्षस सचमुच नर मास खाते हैं ?' सीता किंकर्तव्य विमूढ सी लग रही थी या यह प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति मात्र है ?'

'प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति तो यह है ही। राम बोले जिन परिस्थितियों म ये सामान्य जन को जीने के लिए बाध्य करते हैं उसे उनका रक्त पीना और हड्डिया चबाना ही कहा जा सकता है किंतु यह मात्र प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति ही नहीं है। हेतिकुल जिस आदिम अवस्था से उठा था वहा नर मास खाने की परपरा थी। किंतु राक्षसी चिंतन जिस स्वार्थ-बुद्धि पर चलता है वह अतिम रूप से अपने व्यक्तिगत सुख की ही चिंता करता है। सुख की अति सदा ही बीभत्सता की ओर बढती है। ये नव राक्षस भी क्रमश उसी ओर बढ रहे हैं। इन्होंने नर मास खाने की परपरा को आभिजात्य के धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। मदिरा तथा काम सबधों की नग्नता को भी य गौरवान्वित करते जा रहे हैं— ताकि क्रमश मानवीय सबध समाप्त हो जाए और मनुष्य पूर्ण पशु हो जाए ।'

सहसा राम ने देखा—लक्ष्मण का ध्यान उनकी बातो से हटकर आश्रम की ओर आने वाले मार्ग की चढाई पर चढती एक मानव आकृति पर लगा हुआ था। लक्ष्मण की बायी हथेली धनुष पर कस गयी थी और उनका दाया हाथ तूणीर को टटोल रहा था।

धैर्य रखो सौमित्र !' राम ने धीरे से कहा 'अभी इतना अधकार

। हुआ कि हम प्रत्येक आगतुक को आशका की दृष्टि स देखें।"

उन तीना की दृष्टि क्रमश निकट आती हुई उस आकृति पर लगी हुई । पहचान की सीमा म आत ही तीना न उमे प्राय साथ-साथ पहचाना वह वाल्मीकि आश्रम का मुखर था।

मुखर ! इस समय यहा !" सीता चकित थी।

कदाचित ऋषि ने काइ सदेश भेजा है। लक्ष्मण बोल।

मुखर के निकट आन पर राम ने सहज भाव से हसकर कहा, स्वागत मुखर। आओ बठो। तुम अच्छे समय पर आए। भोजन तो हमारे ही करोगे न ? अब आश्रम लौटन का तो समय नही रहा।'

हाथ जोडकर मुखर न सबका अभिवादन किया और अत्यन्त थकी मुद्रा म उनक निकट बठ गया।

उसने बारी-बारी तीनो क भावा को दखा और सकुचित मद्धम स्वर बाला आय ! यदि आपको असुविधा न हो तो मैं आज रात आपके श्रम म ही रुकना चाहूगा। मेरी धृष्टता क्षमा करे—किंतु मुझे विस्तार कुछ निवेदन करना है।

नि सकोच रुको, मित्र ! लक्ष्मण उल्लास के साथ बाल आखिर जो दिन भर के परिश्रम से अतिथिशाला बनाई है, उसका कुछ उपयाग तो हो।

राम ने मुसकराकर लक्ष्मण का अनुमोदन कर दिया।

सीता उठ खडी हुइ मैं भाजन की कुछ व्यवस्था करू। मुखर बहुत से चलकर आया है। थका हुआ है और भूखा भी अवश्य हागा।'

आपका अनुमान एकदम सत्य है दीदी।' मुखर पहली बार कराया।

जन के पश्चात् वे चारा फिर एक जगह आ बठ।

भद्र राम !" मुखर बोला, मैं नही जानता कि अपनी बात कहा से रभ करू इसलिए सारी बात कहूगा।'

निश्चित होकर कहो।' राम बोले तनिक भी सकोच मत करो।'

' चित्रकूट प्रदेश म जनसख्या विरल है।" मुखर ने कहना आरभ

किया, 'किंतु इससे दक्षिण जन स्थान म जहा एक ओर घन वन हैं वहाँ अनेक स्थानो पर घनी जनसख्या पायी जाती है। उससे और आग बढने पर किष्किंधा म वानरा का प्रसिद्ध राज्य है जिसका सम्राट महाबली वाली है। मैं उसी वानर-जाति का एक सदस्य हू। मैं ठीक-ठीक नही जानता कि हम अपने आपको वानर क्यो कहते हैं। कुछ तो हमारे शरीर का वर्ण अपेक्षा कृत पीला है और कुछ उस पर पतले लबे रोम हैं। फिर हमारा जातीय प्रतीक भी वानर' ही है। हमारी अनक पडोसी जातिया स्वय को इसी प्रकार अन्य पशुओं के नामो स सबोधित करती है।

'तो उसी वानर जाति का मैं एक सदस्य हू। वाली महाबली है, किंतु न तो उसके राज्य की निश्चित सीमा है न नियमित सेना है। वह अपन व्यक्तिगत शौर्य पर जीने वाला प्राचीन काल के यूथ पति जसा राजा है। एक प्रकार स अपनी बात का धनी भी है। यदि उसन रावण को अपना मित्र कह दिया तो कह दिया—रावण उसका मित्र है, चाह रावण के अनेक सहयोगी राक्षस वानरो का जहा-तहा पीडित करते रह। उन साधारण राक्षसो से वाली नहीं लडेगा। असाधारण है रावण किंतु वह उसका मित्र है—अत युद्ध का प्रश्न ही नही है। परिणामस्वरूप अपने ही घर म वानर जहा-तहा पीडित हात रहते है और उनका मास लका के हाट-बाजारा म खुल आम बिकता है।

सुदूर दक्षिण-पश्चिम म समुद्र-तट पर हमारा गाव है। उस गाव म हमारा घर था। घर म मेरे माता पिता थे बहन भाई थे भाभिया थी भतीजिया भतीजे थ। पड़ोस के गाव म बहन का विवाह हुआ था। बहनोई खान-पीन व्यक्ति थे। भाजिया भाजे प्रसन्न थे। कितना सम्मान था मेरे पिता का। वे कवि और सगीतकार थे पर साथ ही कृषक भी थ। उन्होंन कला को अपनी आजीविका का साधन नहीं बनाया था। खेती म इतना अन्न मिल जाता था कि सारे कुटुब का पालन सुविधा से हो सक। कला की साधना क कारण सारा समय खेती किसानी को नही दिया जा सकता था। ऐसा हाता तो कदाचित और अधिक अन्न उत्पन्न होता। उस बेचकर व्यापार के नाम पर अन्नहीनों की बाध्यता का शोषण कर अधिक लाभ कमाया जाता। धन सचित किया जाता और फिर सचित धन की

दु शक्ति से कुछ अ य लोगो का श्रम और श्रम के माध्यम स स्वय उन लोगो को खरीदा जाता। किंतु, मरे पिता ने इस ओर कभी ध्यान ही नही दिया। अपनी आवश्यकता भर मिल जान स वे सतुष्ट थ और शेष समय म अपनी कला की साधना करत थे। कला क माध्यम स अपन गाव और आस पास क ग्राम क लोगो का मनोरजन करते थ किंतु उनकी कला मनोरजन के साथ लोगो को यह भी बताती थी कि उनक परिवश म क्या ठीक है क्या गलत क्या न्याय है क्या अ याय क्या अधिकार है क्या अत्याचार। उनकी कला का यह पक्ष गाव के धनकुबर राक्षसा को अच्छा नही लगा। उ होन अपने अनक सगठना की सहायता स हमार घर पर आक्रमण किया। मैं वहा नही था। कह नही सकता कि हमार कुटुबियो म स किसका मास वही भूनकर खाया गया किसका ग्राम म बिका और किसका लका क हाट म। अब ससार म मेरा कोई नहा है।

मैं वहा से भागा तो सगीत और का य के आकपण म ऋषि वाल्मीकि क आश्रम म आया। किंतु जसा आपने उस दिन देखा मुझ शस्त्रो का आकपण भी खीचता है। अब मैं अपन कुलपति की अनुमति स आपके पास आया हू। यदि आप मुझे शस्त्र शिक्षा दना स्वीकार करें तो उतनी अवधि तक मैं आपके आश्रम मे, आपके शिष्य क रूप म रहने का इच्छुक हू ।

मुखर ने अपनी बात समाप्त कर राम की ओर देखा।

राम गभीर थे मित्र! ऋषि ने तुम्हार जीवन की घटनाओ का सकेत भर दिया था। विस्तार से सुनकर, तुम्हारे प्रति मरा स्नेह और भी बढा है। मुझे लगता है कि तुम्ह शस्त्र शिक्षा प्राप्त करन का पूण अधिकार है। यदि तुम दो वचन मुझे दो तो मैं तुम्ह सहप शस्त्र शिक्षा दूगा।

कसे वचन आय ?

तुम्हारा शस्त्र-कौशल प्रत्येक दलित का सहज-सुलभ होगा और तुम्हारा शस्त्र केवल याय के पक्ष म उठेगा।

मैं वचन देता हू राम!' मुखर ने अपने दोनो हाथ जोड दिये।

तो मैं तुम्ह कनिष्ठ मित्र क रूप म स्वीकार करता हू।'

"आज अतिथिशाला म ही ठहर जाओ मित्र! कल तुम्हार लिए अलग कुटीर का निर्माण करग।'

लक्ष्मण की प्रसन्नता उनके चेहरे से फूटी पड रही थी।

सवेरे राम और सीता नहाकर मदाकिनी से लौट रहे थे। माग मे सुमेधा मिली। वह रुकी नही। चलते चलते ही कह गयी "दीदी! कुभकार को कह दिया है। वह आज आएगा।'

राम ने कल सीता से सुमेधा के विषय म सुना था। उन्होंने ध्यान से उसे देखा—उसके मुख मडल पर कोई विषाद दुख परिताप अथवा चिंता नही थी जो कि इस भयकर दमन के कारण स्थायी रूप से होनी चाहिए थी। कदाचित् उस दमन को उसने अपनी जीवन विधि के रूप मे अगीकार कर लिया था उसे अपनी नियति मान लिया था। नियति राम को लगा इस शब्द का साक्षात्कार होते ही, उनके मन मे एक भयकर झझावात उठ खडा होता है। किसने फलाया है यह विष सारे समाज म ? जिस व्यक्ति ने पहली बार इस अवधारणा की कल्पना की थी, उसने भी कभी इसकी घातकता की तीव्रता का ठीक-ठीक अनुमान न लगाया होगा। जिस व्यक्ति जाति या समाज मे यह विष एक बार घर कर लेता है उसका सपूर्ण उद्यम समाप्त हो जाता है उसका विद्रोह उसका तेज, उसकी प्रतिक्रिया शक्ति पूणत नष्ट हो जाती है। यह मत्यु है—जीवतता का अत। शोषण का कितना बडा माध्यम है भाग्य की यह अवधारणा! इसके रहते किसी के मन म व्यवस्था के विरुद्ध असतोष जन्म नही लेगा उसके विरुद्ध आक्रोश नही उठेगा व्यक्ति व्यवस्था के विरोध और उसके परिवतन तथा सुधार की बात सोच ही नही सकता भौतिक विष तो घातक होता ही है किंतु मानसिक विष चितन का विष, उससे कहीं अधिक घातक होता है

लक्ष्मण और मुखर को वन से लौटने म अधिक देर लगी। लौटते हुए, वे अपने साथ कुछ फल और लकडिया भी लाए थे। लक्ष्मण वन म जाते थे तो उनका ध्यान लकडियो की ओर अधिक रहता था। आज उन्हे मुखर के लिए कुटिया भी बनानी थी। उसके पश्चात आश्रम के चारो ओर बाडा भी बनाना था। एक फाटक बनाना था। इधन के लिए भी लकडिया चाहिए

थीं। लकड़िया की आवश्यकता तो आन वाल अनेक दिनों तक बनी रहेगी।

लक्ष्मण कुटीर निर्माण के काय म लग गए, तब राम ने सीता और मुखर को शस्त्राभ्यास कराना आरभ किया। मुखर का शस्त्रा के विषय म कुछ भी ज्ञात नहीं था अत उस आरभिक ज्ञान भी दिया जाना था। सीता को बाण-सधान सबधी कुछ बातें बताकर, उनका अभ्यास करने के लिए वह राम न मुखर को शस्त्रों के विषय म सूचनाए देनी आरभ की—उसे सैद्धातिक पक्ष बताकर ही व्यावहारिक ज्ञान कराया जा सकता था।

सौमित्र सहसा अपना काम छोडकर एक अन्य स्थान पर चल गय, जहा स टीले की चढाई अच्छी तरह दिखायी देती थी।

राम ने लक्ष्मण को देखा—निश्चित रूप स कोई व्यक्ति टील की चढाई चढकर उनके आश्रम की ओर आ रहा था। पर अभी शस्त्राभ्यास रोकने का कोई कारण नहीं था। उन्होने सीता और मुखर को उनके अभ्यास म लगाए रखा ताकि न उनका ध्यान लक्ष्मण की ओर जाए और न व लक्ष्मण के समान अपना काम छोडकर उस पगडडी को ताकने लग।

थोडी देर म एक व्यक्ति ऊपर आया। वह वय स नवयुवक था। उसकी कमर मे मृगछाल नहीं थी उसने एक लगोटी बाध रखा था। निश्चित रूप से वह वनवासी न होकर ग्रामवासी था। उसका सवलाया-सा गेरुआ रग था। पहल तो वह लक्ष्मण से बातें करता रहा फिर उसका ध्यान शस्त्राभ्यास करत हुए मुखर तथा सीता और निर्देश देते हुए राम की ओर चला गया। वह आश्चय विस्फारित नयनो स उनको देखता क्षण भर भौंचक खडा रहकर लक्ष्मण के साथ उनकी ओर चला।

शस्त्राभ्यास थम गया।

'भाभी ! यह कुभकार है। इसे सुमेधा ने भेजा है।' लक्ष्मण न उसका परिचय दिया।

राम ने देखा—कुभकार की आखो म जीवन की चमक थी। मुख की रेखाए उसके कुछ समझदार होने की ओर सकेत करती थी। यह व्यक्ति सुमेधा के गाव का था किंतु सुमेधा के समान अपने जीवन से सतुष्ट नहीं था। उसके मुख मडल पर कुछ सम्मान कुछ भय, कुछ जिज्ञासा के मिश्रित भाव थे।

'आप लोग कौन हैं ?' वह पहला वाक्य बोला।

मुखर ने केवल अपनी बात कही थी—सीता सोच रही थी—उन लोगों के विषय में उसने कुछ भी नहीं पूछा था। उसकी आंखें अपने परिवेश की ओर से बंद थीं, मस्तिष्क सोया हुआ था। यह व्यक्ति वैसा नहीं था। वह जागरूक था। उसने अपने विषय में कुछ बताने से पूर्व उनके विषय में जिज्ञासा की थी।

'मैं राम हूं। ये मेरे छोटे भाई हैं—लक्ष्मण। ये मेरी पत्नी हैं—सीता। और यह है मेरा मित्र मुखर, हमारे आश्रम में शस्त्राभ्यास कर रहा है।'

'आप लोग यहां क्या कर रहे हैं?' कुंभकार कुछ हकलाता-सा बोला।

लक्ष्मण के चेहरे पर आवेश भड़का, किंतु राम ने उन्हें संकेत से शांत करते हुए कहा, "हम लोग अपने पिता के आदेश से वन में आए हैं। यहां वैसे ही वास कर रहे हैं, जैसे साधारण वनवासी निवास करते हैं, जैसे तुम निवास कर रहे हो।"

इस बार कुंभकार के चेहरे पर भावावेश आया, "नहीं मैं निवास कर रहा हूं। एक दिन कुंभ निर्माण छोड़कर एक मूर्ति का निर्माण करने लगा था तो तुंभरण ने मार-मारकर मेरी खाल उधेड़ दी थी। उस दिन उसे कुछ बतलाने की आवश्यकता नहीं होती तो वह अवश्य ही मुझे मारकर खा जाता। और आप लोग तो शस्त्रों का अभ्यास कर रहे हैं—यहां तक कि यह महिला भी।'

'शस्त्राभ्यास में तुम्हें क्या आपत्ति है?' राम ने पूछा।

'मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आपत्ति है तुंभरण को।' कुंभकार जल्दी-जल्दी बोला, "उसका कहना है कि मेरा दादा कुंभकार था, बाप कुंभकार था, इसलिए मुझे भी कुंभकार ही बनना पड़ेगा। मैंने कुछ और बनने का तनिक भी प्रयत्न किया तो वह मुझे आवे में पकाकर मार डालेगा। यहां तक कि वह मुझे बरतन छोड़ मिट्टी के खिलौने भी नहीं बनाने देगा। और जहां तक शस्त्रों की बात है, उन्हें रखने का अधिकार केवल राक्षसों का है।'

'क्या? राक्षसों को ऐसा विशिष्ट अधिकार क्यों है जो अन्य लोगों

मेरा कुभ, नवयुवक ! सीता ने उसे टोक दिया।

'आपके लिए मैं अपनी इच्छा से कुभ बनाऊगा देवि ! यही इसी आश्रम म। निश्चिन्त रह।

वह तेज़ी स ढलान की ओर चल पडा।

बेचारा उस दखने र । वह पेडो की ओट म छिप गया ता राम मुड़े 'देखा ! एक कालकाचाय है कि शस्त्र देखकर सहम गए, और एक यह कुभकार है कि अपने बधन तोडने के लिए मचल उठा।

'यह क्या मात्र वत्ति का भेद है ?' सीता ने पूछा।

कुछ वय का कुछ वृत्ति का। राम बोल 'कुछ सहे गए अत्याचारो की तीव्रता कुछ मुक्त हाने की इच्छा—अनेक बातें हैं सीते !'

'किंतु सिद्धाश्रम म तो हमारे शस्त्र देखकर कोई भयभीत नही हुआ था लक्ष्मण जस वाचिक चिंतन कर रहे थे वहा का तो बच्चा-बच्चा उठ खडा हुआ था। ग्रामीण तथा आश्रमवासी एक साथ सघष करने क लिए जुट आए थे।

'वहा की स्थिति भि न थी ' राम बोले ऋषि विश्वामित्र के कारण वहा तजस्विता का इतना दमन नही हुआ था। फिर ताडका के वध ने जन सामाय का आत्मविश्वास जाग्रत कर दिया था।

राम के आश्रम के व्यावहारिक दष्टि स दो दल बन गए। प्रात राम और सीता मदाकिनी म नहान चले गए। उनके लौटन पर लक्ष्मण और मुखर गए। बाद के समय में लक्ष्मण आश्रम के निर्माण काय म लग रहे और राम सीता तथा मुखर को शस्त्राभ्यास करात रहे। दोपहर के पश्चात सौमित्र और मुखर निर्माण तथा आश्रम की रक्षा के लिए पीछे रुक गए और राम तथा सीता पडोस के आश्रम निवासियो स परिचित होने क लिए चल गए।

पिछले कुछ दिनो से राम का अपना कायक्षेत्र विस्तत करने की आवश्यकता का अनुभव हो रहा था। उ ह लग रहा था आश्रम म बैठकर शस्त्र शिक्षा दने से ही उनका दायित्व पूरा नही हो सकगा। सिद्धाश्रम क्षेत्र

के ग्रामवासियो के ही समान इस क्षेत्र के ग्रामवासी तो राक्षसो से आतंकित थे ही साधारण आश्रमवासियो म भी तेज नही था। कालकाचाय, राम के शस्त्रागार क इस प्रदेश म आ जाने से भयभीत थे। उन्ह राक्षसो की अप्रसन्नता की आशका थी। कुछ अन्य कुलपतियो की भी यही स्थिति थी। ऐसी स्थिति मे राम की शस्त्र शिक्षा क्या करती ! कोई उनके पास आए ही नही तो वे क्या करेंगे। शस्त्र शिक्षा तो भौतिक स्वतत्रता की रक्षा के लिए है किंतु उसक पूव लोगो क मन को मुक्त करना होगा। उसक लिए उनके आश्रमो म, ग्रामो म यहा तक कि उनके घरो म भी जाना होगा। उन्ह बताना होगा कि उनका जीवन कैसा हो जीवन म उनके क्या-क्या अधिकार हो जन साधारण को समझाने के लिए लक्ष्मण उपयुक्त पात्र नही है—उनम तेज के साथ आक्रोश तथा अधैर्य है। व तक कम करत हैं व्यग्य और प्रहार अधिक करत हैं। नहीं ! जन-साधारण तक तो राम को ही जाना होगा। उनके हृदय तथा मस्तिष्क को मुक्त करने के पश्चात वे उन्ह लक्ष्मण को सौंप सकत हैं। लक्ष्मण उन्हें शस्त्र शिक्षा देंगे शस्त्र निर्माण का काय सिखाएगे सगठन और युद्ध का व्यावहारिक ज्ञान देंगे

वृद्ध कुलपति कालकाचाय न पहली भेंट म इगित मात्र किया था दूसरी भट म स्पष्ट कहा था 'राम ! तुम कितने ही वीर क्या न हो, तुम्हारे पास कितने ही शस्त्र क्यो न हो, तुम्हारा आचरण कितना ही शुद्ध और न्यायपूण क्यों न हो तुम एक भयकर जोखिम म घिर गये हो, तुम अपनी युवती पत्नी के साथ एक ऐसे स्थान पर आ गए हो जहा किसी क प्राण सुरक्षित नही हैं, किसी का सम्मान अक्षत नही है। मेरी बात मानो राम ! तुम लौट जाओ, और जब तक यहा रहो, अत्यत सावधान रहो, प्राणपण से अपनी और अपनी पत्नी की रक्षा करो '

कालकाचाय ने जो ठीक समझा, कहा। किंतु वनवास की बात अनेक ऋषियो से हुई थी—विश्वामित्र, भरद्वाज वाल्मीकि किसी न भी तो उन्ह लौट जाने क लिए नही कहा। ये वृद्ध कुलपति ही क्या ऐसा कह रहे हैं ? क्या उन समथ ऋषियों को इस जोखिम का ज्ञान नही था, या य कुलपति उन्हें व्यथ ही डरा रहे हैं ? बात कदाचित् ऐसी नही

थी। यह कदाचित् अपने-अपने सामर्थ्य और दृष्टि की बात थी। विश्वामित्र भरद्वाज तथा वाल्मीकि समय ऋषि हैं। व जोखिम उठाने, शत्रु स भिड़ने और सत्य का मूल्य चुकान का अथ जानत हैं, और यह वृद्ध कुलपति *कालकाचाय मध्यम कोटि के बुद्धिजीवी मात्र हैं। उनम इतनी सामथ्य* नहीं कि झूठ और अयाय से टकराए इस क्षेत्र म तज को जगाना होगा जन-सामाय को समझना होगा यह काम राम को ही करना हागा। कालकाचाय जसे लोगो को बताना होगा कि घबराकर अथवा भयभीत होकर भाग जाने स काम नही चलगा आप अत्याचार के सम्मुख स पलायन कर अपनी जान नही बचा सकत। वह आपको ढूँढेगा घेरेगा और *अत म कुचल डालगा। अत्याचार स छिपा नही जा सकता उसका ता* सामना ही किया जा सकता है

अधकार होन स पहले, राम और सीता आश्रम म लौट आए। आश्रम मे फल और अन्न पर्याप्त था। भोजन की व्यवस्था म कोई परेशानी नही थी। भोजन पकाने का काम कोई भी कर लता था अथवा सब मिलकर कुछ-न कुछ कर देते थे *किंतु नियत्रण तथा निर्देशन का सर्वाधिकार सीता* का था।

बीच म आग जलाकर वे लोग उसके चारो आर भोजन के लिए बठ। किन्तु भोजन आरभ करन की स्थिति ही नही आयी। उससे पूव ही आश्रम के बाड़े के फाटक पर किसी के हाथो की थाप सुनाई दी। कोई ऊचे स्वर म आश्रमवासियो को पुकारकर फाटक खालने के लिए कह रहा था।

कोई अतिथि होगा। सीता बोली।

'फिर भी सावधानी आवश्यक है। मुखर ने कहा।

तुम दोनो की बात ठीक है।' राम धीर से बोले अतिथि ही होगा नही तो इस प्रकार पुकारकर फाटक खालने के लिए नही कहता, पर देश काल को दखते हुए सावधानी भी आवश्यक है। सौमित्र और मुखर तुम लोग उल्काए ले आओ और देखो। मैं और सीता शस्त्रागार के पास है।'

मुखर और सौमित्र ने वसा ही किया। उल्काओ के साथ वे अपने

दास्त्र ल जाना न भूले।

किंतु उन्हें लौटने म अधिक देर नही लगी। वे लौटे तो उनके साथ सुमेधा कुभकार तथा एक और अपरिचित वद्ध थे। राम और सीता न उठकर उनका स्वागत किया। कुभकार अपनी बात का पक्का निकला था।

भद्र राम ! मैं आ गया हू अपनी जान पर खेलकर, ' कुभकार बोला अपने साथ सुमेधा तथा उसके पिता भिगुर को भी ल आया हू। इन्हे साथ लाने क लिए पर्याप्त परिश्रम करना पडा है। य दोनो ही ऐसा साहस करने के पक्ष म नही थे। इनका विचार था कि तुभरण के अधीन रहकर फिर भी कुछ दिन जीवित रहने की सभावना थी, किंतु वहा स भागकर, हमने अपन जीवन के समस्त द्वार बद कर दिए हैं। ये अपने को मतप्राय ही मान रह हैं। अब आप चाहें तो हमारी रक्षा कर, हम जीवन-दान दें, अथवा हम तुभरण को लौटा कर मृत्यु क हाथों सौंप दें।

राम ने लपलपाती अग्नि के प्रकाश म उनके चेहरो का देखा—कुभकार ठीक कह रहा था। कुभकार के मुख मडल पर जोखिम तथा दुस्साहस की उत्तेजना थी किंतु भिगुर और सुमेधा के चेहरे मृत्यु की ठण्डी राख के समान बुझे हुए थ।

राम ने भिगुर के कधे पर हाथ रखा 'तुम्हे मुझ पर विश्वास नही है, बाबा?'

भिगुर न उनकी ओर देखा पर उसकी दष्टि अधिक देर टिकी न रह सकी। उसने अपना मुख फेर लिया था। वह अधकार म देख रहा था मैं आपके प्रति अविश्वास की बात कसे कहू पर मुझे तुभरण की शक्ति और दुष्टता दोनो पर पूरा विश्वास है। उसके हाथो मे कोई भी नही बचा '

'तो फिर तुम आ क्या गए ?"

'सुमेधा आ रही थी—मैं क्या करता। मुझे उसम अधिक प्रिय और कुछ नहीं है। तुभरण के हाथो मेरी अन्य कोई सतान नही बची। एक यही शेष है, इसे नहीं छोड सकता।"

और तुम क्यों चली आयी सुमेधा ?" राम ने पूछा।

सुमधा कुभकार की ओर देख रही थी 'म कुभकार से प्रेम करती हू।

यह आ रहा था, इसलिए मैं भी आ गयी।'

'तुम्हारी मा नहा आयी सुमेधा ?" सीता न पूछा।

'वह किसी भी प्रकार तयार नही हुई इसलिए उस छोडकर आना पडा।

'अच्छा सुना, बधुओ! राम का स्वर कुछ ऊचा हा गया निम्सदेह तुम लोगो न जोखिम का काम किया है किंतु इस आश्रम क भीतर प्रवेश करन के पश्चात तुम्हारा जोखिम समाप्त हो चुका है। तुम्हारी रक्षा का दायित्व मुझ पर है सौमित्र पर है—सक्षम होन पर सीता और मुखर पर भी हागा। रात भर विश्राम करो। कल से तुम्हारी शस्त्र शिक्षा आरभ होगी ताकि आश्रम के बाहर भी हमारे निकट न रहन पर भी तुम अपनी तथा अपने साथियो की रक्षा कर सको।

'तुम्हारा नाम क्या है मित्र ? लक्ष्मण न पूछा नाम न जानने के कारण, तुम्ह सम्बोधित करने म काफी परेशानी हो रही है।"

कुभकार।'

यह क्या नाम हुआ ?"

अन्य किसी शब्द से आज तक मुझे किसी न सबोधित नही किया।'

तो आज स तुम्हारा नाम उदघोष होगा मित्र। राम बोल तुमने इस सपूर्ण क्षेत्र म आज से स्वतत्रता का उदघोष किया है।

कुभकार मुसकरा पडा।

आओ अब भोजन करें।'सीता ने सुमेधा का हाथ पकड अपने पास बठाया 'तुम यहा बठो सखि।'

सुमधा और उदघोष बठ गए किंतु झिगुर नही बठा।

सब की प्रश्नवाचक दष्टि उसकी ओर उठ गयी।

झिंगुर के चेहरे पर कुछ इतने मिश्रित भाव थे कि समझना कठिन था कि वह क्या सोच रहा था—वह प्रम न भी था और पीडित भी उसके चेहरे पर श्रद्धा भी थी और अविश्वास भी, माग उसके सामने था और उस पर पग भी नही उठ रहे थे।

प्रभु!'

मैं प्रभु नही हू।" राम मुसकराए 'मैं एक साधारण आदमी हू।

तुम मुझे राम कहो, बाबा।"

"भद्र राम !" झिंगुर और भी सकुचित हो गया "इन बच्चों का अपराध क्षमा करना ये लोग भोजन की इच्छा से आपके साथ बैठ गए हैं। कड़ी भूख ने इनकी बुद्धि असतुलित कर दी है।"

कोई नही समझा कि झिंगुर क्या कहना चाह रहा है। क्षण भर सब-कुछ अनबूझा ही रहा। पर तब झिंगुर फिर बोला, हम जाति के भील हैं, भद्र ! और स्थिति से तुभरण के दास। हम आपके साथ बैठकर "

राम खिलखिलाकर हस पड़े भोजन परोसो सीते !'

वे झिंगुर से सबोधित हुए 'बाबा ! इसे भूल जाओ कि तुम्हे क्या बताया गया है कि तुम क्या हो। याद केवल यह रखो कि तुम एक मनुष्य हो बस ही जस अन्य मनुष्य है। बड़े छोटे, ऊच-नीच दास स्वामी, जाति पाति के सबध मनुष्य निर्मित है, और उनका निर्माण उन्होंने किया है जिन्हें उनसे कोई लाभ है। मैं मनुष्यों म मानवीय सबध के अतिरिक्त दूसरा कोई सबध नही मानता। और इस समय तो तुम राम के आश्रम के सदस्य हो। तुम्हारी जाति वर्ण गोत्र स्थिति—सब कुछ वही है, जो राम की है। बैठो और शात मन से भोजन करो।"

राम ने झिंगुर का हाथ पकडकर उसे अपने पास बैठा लिया।

झिंगुर बैठ गया, किंतु सब ने ही लक्ष्य किया कि वह सहज भाव से खा नही पा रहा है। जो कुछ उसने खाया भी वह उसकी भूख की दृष्टि से बहुत कम था।

भोजन के पश्चात उदघोष ने अपनी बात कही, "राम ! कल सवेरे ही तुभरण को मालूम हो जाएगा कि हम लोग गाव से भाग गए हैं। उसे यह पता लगाते देर नहीं लगेगी कि हम यहा आए हैं। और यह पता लगते ही वह अपने बधु बाधुवों को लेकर सशस्त्र आक्रमण करेगा। हम गाव से भागने और आपको हमे आश्रय देने का दड देना चाहेगा "

तुम आश्वस्त रहो, मित्र !" लक्ष्मण ने उसकी बात पूरी नही होने दी यह तो समय आने पर देखा जाएगा कि कौन किसको दड देता है। जब तक तुम्हे तुभरण के आक्रमण का भय हो, अथवा जब तक तुम द्वद्व-युद्ध की दृष्टि से पूर्णत समर्थ न हो जाओ तब तक मेरी कुटिया म रहो,

उसके पश्चात ही तुम्हारे लिए अलग कुटीर बनाएंगे।'

मैं भयभीत नहीं हूं सौमित्र ! किंतु अपनी असमर्थता को जानता अवश्य हूं '

जब तक तुम असमर्थ हो उद्घोष ! तब तक हमारी सामर्थ्य पर भरोसा रखो। राम मुसकराए सौमित्र ! सुमेधा और भिंगुर के लिए अतिथिशाला म प्रबंध कर दो। उद्घोष तुम्हारे अथवा मुखर के कुटीर म टिक जाएगा। कल इन सबके लिए कुटीर निर्माण तथा शस्त्र शिक्षा।'

प्रात राम और सीता उठकर अपनी कुटिया से बाहर आए तो उदघोष उनके सामने खड़ा था। वह सहज नहीं था उसका सवनाया हुआ गेहुआ रंग इस समय एकदम पीला पड़ गया था।

राम विस्मित हुए तुम यहा कब से खड़े हो, उद्घोष ? जल्दी उठ गए या तुम्हे रात को नींद ही नहीं आयी '

उद्घोष ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह केवल फटी फटी आखो स उन्हे देखता रहा।

क्या बात है ? राम मुसकराए रात कहीं तुभरण स भेंट तो नहीं हो गया ?'

नहीं, आर्य ! वह खोये-स स्वर म बोला तुभरण स भेट तो नहीं हुई, किंतु लगता है कि यहा रात को तुभरण या उसके साथी आए अवश्य थे। सुमेधा तथा भिंगुर अतिथिशाला म नहीं हैं।'

'क्या ?'' सीता के मुख म विस्मय भरा चीत्कार निकला।

उदघोष ! तुम सौमित्र को बुलाओ।

राम सीता को साथ लिये हुए अतिथिशाला की ओर बढ़ गए।

लक्ष्मण मुखर तथा उद्घोष के भी आने म अधिक देर नहीं लगी, किंतु तब तक राम कुटिया का अच्छी प्रकार निरीक्षण कर चुके थे। अतिथिशाला पर आक्रमण, उसे तोड़न उस पर किसी प्रकार के बल प्रयोग का वहा चिह्न नहीं था। रात म किसी ने भी किसी प्रकार का कोलाहल नहीं सुना था। मुखर की कुटिया अतिथिशाला स बहुत दूर भी नहीं थी। वह यह मानन के लिए रत्ती भर भी तैयार नहीं था कि बाहर म कोई

आया हो, समेधा और भिगुर को बलात ले गया हो, और मुखर ने एक भी शब्द न सुना हो।

'यह संभव ही नहीं है।" वह अत्यंत रोष से बोला 'मुखर के कान ऐसे नहीं हैं। रात को आश्रम का एक पत्ता भी खड़कता, तो मुखर के कान झनझना उठेंगे।

तो इसका एक ही अर्थ है कि सुमेधा और भिगुर अपनी इच्छा से रात को आश्रम से निकल भागे हैं। उदघोष का स्वर पहले से भी अधिक दीन हो गया।

पर क्यों ?" सीता जैसे अपने-आप से पूछ रही थीं।

'क्योंकि सुमेधा मुझसे प्रेम नहीं करती। उसे अपनी माँ अधिक प्यारी है वह कायर बाप भिगुर प्यारा है। मैं उसे प्यारा नहीं

लक्ष्मण आगे बढ़कर उसे सँभाल न लेते तो उदघोष अवश्य ही चक्कर खाकर गिर पड़ता। वह लक्ष्मण का सहारा लेकर पेड़ की छाया में बैठ गया। शेष लोग भी उसके आस-पास बैठ गए।

राम सोच रहे थे—यदि सुमेधा और भिगुर को बलात ले जाया गया होता तो उसकी चिंता तुरंत की जानी चाहिए थी, किंतु परीक्षण से जिस निष्कर्ष पर वे लोग पहुंच रहे थे कदाचित वही ठीक था। वे पिता पुत्री अपनी इच्छा से आश्रम छोड़कर रात के अंधकार में अपने गांव लौट गए थे। उनकी चिंता का कोई लाभ नहीं। इस समय तो उदघोष की चिंता की जानी चाहिए थी। कदाचित उसने अपने जीवन का दांव सुमेधा पर लगाया था, और सुमेधा उसे छोड़ गयी थी। उसकी मानसिक स्थिति ठीक नहीं थी। यदि इस समय उसे न सँभाला गया तो कुछ अघटनीय भी घट सकता है।

राम ने स्नेहपूर्वक उदघोष के कंधे पर हाथ रखा और अत्यंत कोमल वाणी में बोले, 'तुम ऐसा क्यों मानते हो मित्र ! कि सुमेधा तुमसे प्रेम नहीं करती। उसका अपने माता पिता से प्रेम तुम्हारे प्रेम के मार्ग में तो नहीं आता। संभव है कि वह पीछे छूट गयी अपनी माता के प्रेम में लौट गयी हो।

उदघोष का वह शरीर जो क्षणभर पहले तक सर्वथा प्राणहीन लग

रहा था भयकर आक्रोश म तप उठा, 'नहीं यह बात नही है। अब तक मैं समझता नही था पर आज इस सुमेधा को अच्छी तरह समझ गया हू। मेरे प्रेम से उस क्या मिलता ? गाव छोडना पडता। इस या उस आश्रम म रहना पडता। प्राणो का जोखिम बना रहता। सभव है पीछे गाव म राक्षस उसकी मा की हत्या कर देते। मैं हू क्या ? एक कुम्भकार। मैं उसे क्या दे सकता था। एक निधन व्यक्ति का प्रेम दे ही क्या सकता है

उदघोष ! सीता ने टोका।

कहने दो सीते।' राम न कहा।

उदघोष बोलता गया 'सुमेधा ने ठीक किया, वह लौट गयी। अब उसकी मा और भिगुर का कोई कुछ नही कहेगा। उसे भी कोई कुछ नहीं कहेगा। राक्षसो की सार्वजनिक भोग्या होकर रहेगी और उनकी जूठन खाएगी। मेरा पता बताकर मेरी हत्या करवाने म उनकी सहायता करेगी तो सभव है जब वे लोग मेरा वध कर मुझे खाने लगें तो मेरे शरीर की एक आध जूठी हड्डी उसकी तरफ भी फक द वह थकावट से हाफता हुआ भाव शून्य आखो से बारी-बारी सब की ओर देखता रहा और फिर अपने भीतर डूब गया और मैं क्या-क्या स्वप्न देखता था। मैं सोचता था मैं तुभरण राक्षस का दास नही रहूगा। मैं किसी सुदर स्थान म एक छोटी सी कुटिया बनाकर रहूगा। सुमेधा मेरी पत्नी होगी। हमारे छोटे छोटे सुन्दर बच्चे होंगे। हम दोनो मिलकर परिश्रम करेंगे और अपनी गृहस्थी चलाएगे। अवकाश के समय मैं अपने घर के लिए बतन बनाऊगा उस पर सुदर-सुदर स्त्री-पुरुष पशु-पक्षी अकित करूगा। अपने बच्चों के लिए छोटे छोटे खिलौने बनाऊगा। कुछ अन्य मूर्तिया बनाऊगा। मैं मूर्तिकार बनूगा ' उसने फिर बारी-बारी एक एक व्यक्ति के चहरे को देखा और अत मे उसकी आखें राम के मुख मडल पर टिक गयी। वह बोला तो उसका स्वर अत्यत हताश था 'मैंने जीवन से बहुत अधिक तो कुछ नहीं चाहा। क्या ईश्वर की इस सृष्टि मे मेरा इतना छोटा-सा स्वप्न भी पूरा नही हो सकता, राम ?'

राम ने उसे स्नेहभरी आखो से देखा, और फिर उनकी आखो और अधरो से मोहक मुसकान झरने लगी सुनो, उदघोष ! इस सृष्टि म मनुष्य

का बड़े-से-बड़ा स्वप्न पूरा होता है, किंतु मनुष्य की बनाई हुई इस व्यवस्था म नदी के किनारे पड़ी हुई मछली के लिए एक बूद पानी भी नहीं है। तुम रण तथा उसके जैसे सत्ताशाली राक्षसों की बनाई हुई इस दुष्ट व्यवस्था म तुम एक दास कुभकार पैदा हुए हो और दास कुभकार ही मरोगे। इसम सुमेधा ही नही सुमेधा जसी सारी किशोरिया धन और सत्ता सपन्न राक्षसों की भोग्याए ही बन सकेंगी। पर स्वप्न देखना प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है। स्वप्न देखने वाला मनुष्य ही जीवित मनुष्य होता है। यदि तुम्हारे गाव म स्वप्न देखन वाला उदघोष जन्म न लेता तो प्रत्येक कलाकार कुभकार का जीवन बिताने को बाध्य होता। किंतु अब ऐसा नहीं होगा। तुमने स्वप्न देखा है तुम उसे पूर्ण करने के लिए सघर्ष करो और अपने साथ सपूर्ण ग्राम को मुक्त करो। प्रत्येक उदघोष और सुमेधा को मुक्त करो प्रत्येक भिंगुर और उसकी पत्नी को मुक्त करो

पर भिंगुर तो मुक्त होना नहा चाहता। उदघोष बोला।

ऐसा मत कहो। राम फिर बोले भिंगुर हो या सुमेधा अथवा सुमेधा की मा मुक्त सब होना चाहते हैं किंतु पहले उनको बताया तो जाए कि वे स्वतत्र हो सकते हैं। उनका तन ही नहीं मन भी बदी है। पहले उनके मन को मुक्त करो। उनको साहस दो उनको आश्वासन दो। उनका मन मुक्त होगा तो वह स्वप्न देखेगा, मन स्वप्न देखेगा तो तन मुक्त होगा '

"और सुमेधा के विषय मे भी वह सब मत सोचो जो तुमने अभी कहा है' सहसा बीच म सीता बोली वह तुम्ही से प्रेम करती है तभी तो तुम्हारे साथ चली आयी। यदि उसका पिता अभी साहस नहीं जुटा पा रहा उसकी मा का मन जोखिम नहीं उठा पा रहा और वह उन दोनों मे प्रेम करती है तो उसके लिए उसे अपराधिनी नही ठहराया जा सकता।

'आप सच कहती हैं देवि! उदघोष के चेहरे का रग लौट रहा था, क्या सचमुच सुमेधा मुझसे प्रेम करती है ? क्या आप शपथपूवक यह बात कह सकती हैं ?

'यद्यपि सुमेधा ने मुझसे इस बात की कभी चर्चा नहीं की" सीता

बोली किंतु उसके हाव भाव देखकर मैं शपथपूर्वक कह सकती हूं कि वह तुमसे ही प्रेम करती है उदघोष ! उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करो।'

उद्यम करो उदघोष ! लक्ष्मण बोले, तुम्हारी प्रिया उस राक्षस के पास बंदिनी है। यह मत समझो कि वह अपनी इच्छा से लौट गयी है। लौटाया है उसे तुंभरण के आतंक ने। तुम उस आनव को नष्ट करके ही, उसे पा सकोगे। पराक्रम करो। थक हारकर मत बैठो। संसार उद्यमी और पराक्रमी मनुष्य का है।

उदघोष उठकर खडा हो गया कदाचित आप लोग ही ठीक कहते हैं। मैं ही भ्रमित था। मैं सुमेधा को ही नहीं संपूर्ण ग्राम को तुंभरण के आतंक से मुक्त करूंगा।

साधु उदघोष ! साधु ! राम बोले, आज से तुम्हारी भी शस्त्र शिक्षा आरंभ होगी।'

सीता और मुखर कुछ-कुछ शस्त्राभ्यास कर चुके थे। वे धनुष संभाल लेते थे बाण चला लेते थे, और बाण लक्ष्य से बहुत अधिक भटकता भी नहीं था। वे खडग को हाथ में संभाल लेते थे शत्रु पर प्रहार कर लेते थे और एक आध वार झेल लेते थे। अब उदघोष उनकी टोली में सम्मिलित हुआ था वह शस्त्र संसार में एकदम अपरिचित था। उसने धनुष बाण और खडग को कभी हाथ में लेकर देखा तक नहीं था। पहले पहल तो वह खडग को हाथ में लेकर उसकी धार तथा धनुष की लचक को ही देखता रहा। उसकी पकड में दबाव तथा भुजाओं में धनुष की प्रत्यंचा खींचने की वह शक्ति भी नहीं थी जो सीता और मुखर ने अभ्यास से अर्जित कर ली थी। वैसे भी उदघोष सामान्यत अधिक कोमल और भावुक ही था किंतु उसमें सीखने की उत्कट इच्छा थी और वह परिश्रम के लिए तैयार था।

एक सप्ताह तक उदघोष निरंतर शस्त्राभ्यास में जुटा रहा। राम से निर्देश पाकर वह विधि सीखता और उसके पश्चात अभ्यास में जुट जाता। कभी कभी आवश्यकता होने पर वह सीता अथवा मुखर से भी सहायता लेता। आश्रम में लक्ष्मण के लिए कोई निर्माण-कार्य न होता, और वे कहीं बाहर न गए होते तो वह उनकी भी सहायता लेता। आश्रम के शेष

लोग कोई भी अन्य काय कर रहे हान तो भी उन्घाप केवल शस्त्राभ्यास ही करता ।

सप्ताह भर के अभ्यास मे उसकी पशियो म कुछ कठोरता आ गयी । उमक बाण लक्ष्य तक पहुचने लग और उस लक्ष्य भेद की आशा बधन लगी।

सन्ध्या समय वाल्मीकि आश्रम से चेतन आया। वह बहुधा मुखर स मिलन आया करता था। सदा के समान वह राम क समीप आ अभिवादन कर खडा हो गया। किंतु उसके पश्चात न उसन आश्रम का समाचार पूछा न मुखर स मिलने की उत्सुकता दिखाई।

राम न ध्यान से देखा—चेतन गभीर ही नही उदास भी था। उसका चेहरा बता रहा था कि वह अपना दुख छिपाने का नही, उसे विज्ञापित करन का प्रयत्न कर रहा था।

क्या बात है चेतन?" राम मुसकराए, "ठीक तो हो ? यह चेहरा क्स लटका रखा है ?'

चेतन ने सिर उठाकर एक बार राम को देखा और फिर से सिर झुका लिया।

'क्या बात है मित्र ? लक्ष्मण का स्वर आशकित उत्कठा से पूण था।

ऋषि ने बार-बार मुखर से मिलने आने की अनुमति देने म कोइ आपत्ति की है ? सीता न वातावरण हल्का करना चाहा।

नही देवि।' चेतन बुदबुदाते-से स्वर म बोला ऋषि ने मुझे एक दुखद सूचना देने के लिए भजा है।

क्या हुआ ?" राम का स्वर गभीर किंतु स्थिर था, क्या किसी सनिक अभियान की सूचना है ?'

'नही, आय। ऋषि भरद्वाज के आश्रम स सदेश आया है कि अयोध्या म सम्राट दशरथ का देहात हो गया है "

सब की दृष्टि चेतन पर टिक गयी। बोला कोई नहीं।

वह किसी राक्षस की आखो म चढ गयी, तो उसके हाथ पडने स नहीं बचेगी। किसी भी दिन वह उनस छिन सकती है, किसी भी दिन

क्या एसा नही हो सकता कि राम उनके गाव पर आक्रमण करें? आश्रम म व केवल पाच व्यक्ति थ सीता समत। क्या व तुभरण तथा उसके राक्षस साथियो को जीत सकत हैं? सख्या को देखत हुए तो एसा नही लगता किंतु राम और लक्ष्मण का अजेय आत्मविश्वास इसका प्रमाण है। यदि एसा न होता तो तुभरण कब का आश्रम पर आक्रमण कर, सबक टुकडे-टुकडे कर चुका होता। जो तुभरण उसका दभ को चिन्तित करना सहन नही कर सकता था वह उसका ग्राम छोड, आश्रम म स्वतत्र रूप स रहना कस सहन कर रहा है? क्या उस अभी तक कुभकार का गाव मे चल जाना मालूम ही नही हुआ? कसे मालूम नही हुआ होगा? क्या इतने दिनो तक किसी भी राक्षस को बतन बनवाने की आवश्यकता ही नही पडी? नही ऐसा सभव नही है। तुभरण को उसके विषय मे अवश्य ही बात होगी किंतु या तो वह आक्रमण क लिए अवसर की प्रतीक्षा कर रहा है या फिर वह राम और लक्ष्मण से डरकर चुप बठ गया है।

क्या उसे सुमधा तथा भिगुर के गाव स जाने और फिर लौट आन क विषय मे भी कुछ बात नही हुआ। कदाचित नही ही हुआ होगा नहीं तो गाव म रहते हुए भी उनका वध न होता यह असभव था। जब स सुमधा और भिगुर आश्रम स भागकर गय थे उनस भेट नही हुई थी, किंतु राम और सीता ने मदाकिनी आते-जाते दो एक बार सुमधा को देखा था। वह उसी समय जल लेने आती है। किंतु अब वह पहले से बहुत अधिक सावधान हो गयी है। बात करन के लिए रुकती नहीं है। आते जाते कोई बात हो जाए तो हो जाए। तब स कभी आश्रम म भी नही आयी। उद्घोष स तो नही हो मिली—अच्छा ही है। वह भी इस स्थिति म उसस मिलना नही चाहता। भेट होने पर पता नही वह क्या कर बठे

सध्या ढलने पर मुखर न समाचार दिया कि उसन आश्रम के चारो ओर कुछ राक्षस घूमत तथा परस्पर कुछ सकेत इत्यादि करत देखे है। वे राक्षस ही थ, वनवासी नही। ग्रामवासी भी वे नहीं हो सकत थ, क्योकि इधर किसी

साधारण ग्रामवासी के पास न तो वैसे भड़कील राजसी वस्त्र थ, न कोई ग्रामवासी सोन के गहन पहनता था और न किसी के पास शस्त्र ही थे। उतना मोटा और उतना भड़कीला निश्चित रूप मे राक्षस ही हो सकता था।

सूचना सबके सामन थी। इस बात म अधिक मतभेद नहीं था कि वे लोग आश्रम पर आक्रमण की तयारी कर रह हैं। किंतु किस समय? यदि खुला आक्रमण करना होता तो दिन के समय करत किंतु उनके हाव भाव बता रहे थ कि वे आक्रमण रात म ही करेंगे।

आधी विजय हमारी हो चुकी। राम प्रसन्न मुद्रा म बोल हम संख्या म केवल पाच हैं। उनकी संख्या बहुत अधिक है फिर भी व छिपकर आक्रमण करना चाहत ह इसका अथ स्पष्ट है कि वे हमसे भयभीत हैं। भयभीत व्यक्ति आधा तो पहल ही हार चुका होता है।'

फिर भी, भद्र राम! हम सावधान रहना चाहिए।' उदघोष बोला आप तुभरण को नही जानत। वह बहुत नीच और दुष्ट है।"

लक्ष्मण विनोद रूप स प्रसन्न मुद्रा म थ, 'जितना भी नीच और दुष्ट है उस आने दो। मुझसे तो उदघोष का कष्ट देखा नही जाता। आज तुभरण आ जाए तो तुम्हारा विरह तो समाप्त होगा। क्यो बंधु! यदि तुभरण का वध हो जाए तो सुमेधा स तुम्हारा विवाह होन म कोई बाधा तो नहीं रह जाएगी न?'

सीता हस पड़ीं लक्ष्मण तो समझत हैं कि तुभरण का वध सुमेधा के स्वयंवर की शत है। ऐसा नही है देवर! और यदि एसा हो तो तुम्हें और अधिक सावधान रहना चाहिए। कहीं तुमने तुभरण का वध कर दिया, तो सुमेधा का विवाह उद्घोष के साथ कसे होगा?

उद्घोष लजाकर मौन हो गया। सुमेधा की बात बीच म आ जान से, युद्ध की बात कहीं पीछे रह गयी थी।

किंतु राम संभावित आक्रमण के विषय म गभीरता से सोच रह थे। उन्होंने सिर उठाकर सबको देखा वैसे तुभरण का आक्रमण बहुत गभीर आक्रमण नही होगा। उसके पक्ष क किसी योद्धा के युद्ध-कौशल की ख्याति इस सारे क्षेत्र मे मैंने नही सुनी। होगा वह खिलवाड़ ही। फिर भी थोड़ी-

थे, धनुर्धारी तीन चार ही थे। लक्ष्मण मन ही मन उनकी युद्ध-बुद्धि पर मुसकराए।

जब अंतिम राक्षस भी लक्ष्मण के वृक्ष से होकर आगे बढ़ गया तो पीछे से लक्ष्मण ने साधकर बाण मारा बाण अंतिम राक्षस की पीठ में लगा—वह चीखकर भूमि पर गिरा।

चीख सुनकर सारे राक्षस पलटे। उन्होंने उल्काएं उठा उठाकर प्रहार करने वाले की खोजना आरंभ किया। वे समझ गए थे कि आश्रम में कोई जाग रहा था और उन लोगों का आना अब गुप्त नहीं था। उन्होंने भी स्वयं को छिपाने का प्रयत्न छोड दिया था। उनका चीत्कार सुनकर आश्रम के वृक्षों पर सोए पक्षी तक उड गये थे।

राक्षस धनुर्धारी आगे आए। उन्होंने धनुष को उठाकर शत्रु को देखना आरंभ किया, किंतु उसी क्षण बहुत कम अंतराल में उदघोष मुखर तथा सीता के धनुषों ने बाण छोड दिये।

लक्ष्मण की ओर पलट जाने के कारण इस बार फिर बाण राक्षसों की पीठों पर पडे थे। वे दोनों ओर की मार से एकदम अव्यवस्थित हो उठे और क्षण भर में ही अपने शस्त्र उठाए चीखते हुए आश्रम के फाटक की ओर भाग गये।

बहुत थोडे से समय में ही वे लोग आश्रम की सीमा से बाहर हो गये उनके पीछे एक राक्षस चिल्ला चिल्लाकर उन्हें पुकारता खडा रहा। शायद उसका विचार था कि वे लोग उसके पुकारने से लौट आएंगे, किंतु जब उसके साथी पूरी तरह आश्रम की सीमा के बाहर हो गये और उनके लौटने की कोई संभावना शेष नहीं रह गयी, तो वह भी चौकन्ना होकर आगे बढा।

तभी सौमित्र वृक्ष से उतरकर धनुष साधे हुए उसके सम्मुख आ खडे हुए।

'शस्त्र फेंको।' उन्होंने आदेश दिया।

राक्षस का चेहरा भय से पीला पड गया। खडग उसके हाथ से छूटकर भूमि पर गिर पडा 'मेरी तुमसे कोई शत्रुता नहीं है।' वह घिघिया रहा था।

'रात के अंधकार में तुम इतने सशस्त्र साथियों के साथ आश्रम में आग

लगान और मार काट करने आए। अभी तुम्हारी मुझसे शत्रुता ही नहीं है।" लक्ष्मण कडककर बोल लौटो।

राक्षस प्राणहीन ढग से मुडा।

उदघोष भी अपने वक्ष से नीचे उतर आया और सौमित्र के साथ साथ चलने लगा किंतु राक्षस उसे पहचानने की स्थिति म नही था। भय के कारण उसकी आखो के सम्मुख पूरी तरह अधकार छा चुका था। वह किसी को भी नही देख रहा था

'यही तुभरण है।' उदघोष ने धीरे स लक्ष्मण को बताया।

लक्ष्मण ने देखा—उदघोष की मुट्ठिया भिची हुई थी। उसके चेहर पर घणा और प्रतिहिंसा थी।

आह !" लक्ष्मण मुसकराए, बस इतना ही था इसका साहस और बल। उदघोष ! अपने को सयत करो भाई। हम युद्ध बन्दी पर प्रहार नही कर सकते।

तुभरण राम के कुटीर के सम्मुख पहुचा। सीता और मुखर अपने कुटीरो से निकल आए। राम भी दूसरी ओर से आ गए। उन्होने देखा उनके सम्मुख भडकीले वस्त्र पहने बहुत सारे मूल्यवान आभूषण धारण किए असाधारण रूप से स्थूलकाय गौर वण का एक व्यक्ति मुह लटकाए खडा था। वह भय से काप रहा था।

तुभरण ने एक बार भी दृष्टि उठाकर नही देखा कि उसके सम्मुख कितने व्यक्ति थ, और उनम कौन-कौन था।

राम न लक्ष्मण स उसका परिचय पाकर उस नाम स ही सबोधित किया तुभरण ! रात क इस समय इतन सशस्त्र साथियो के साथ हमारे आश्रम का फाटक जलाकर, भीतर घुसन का क्या अथ है ?'

मेरी तुमसे कोई शत्रुता नही है " तुभरण फिर पहले क ही समान घिघियाया 'मैं तो मैं तो मुझे क्षमा कर दो।

'तुम यहा क्या करन आए थ ? राम का स्वर कठोर हो गया।

'मैं तुम लोगो को तुमस मेरी तुभरण बुरी तरह हकला रहा था 'मैं तो अपने दास कुभकार को खोजन आया था। वह मेर घर से भाग आया है।

राम ने उद्घोष को संकेत किया। उद्घोष जाकर तुभरण के सम्मुख खड़ा हो गया।

इसे पहचानते हो ?"

तुभरण ने अपनी डरी हुई आँखें उद्घोष पर टिकाईं। अस्वीकार में सिर हिलाते हुए सहसा उनकी आँखों में पहचान उतर आयी, 'यही है।'

'यह मेरे आश्रम का विद्यार्थी है, उद्घोष।' राम बोले 'यह तुम्हारा दास कैसे है ?'

तुभरण ने विकल आशा से राम को देखा "इसके पिता को मैंने अपने बल से जीता था इसलिए वह मेरा दास हुआ। यह उसका पुत्र है इसलिए मेरा दास है।

'तुम्हें आज इसने युद्ध में जीता है।' राम बोले 'आज से तुम उद्घोष के दास हो जाओगे ?'

'नहीं ! तुभरण भय से चीखा 'नहीं ! नहीं !!

'तुभरण !' राम का स्वर दृढ़ था 'दास प्रथा अमानवीय है—चाहे वह व्यक्ति की हो, समाज की हो या राष्ट्र की। हम उसे स्वीकार नहीं करते। तुम बलात किसी को अपने अधीन नहीं रख सकते। उद्घोष स्वतंत्र मनुष्य है। बस तुम्हें अपने बल का गुमान हो तो तुम उद्घोष से द्वंद्व युद्ध कर सकते हो। हो तैयार ?

उद्घोष अपना खड्ग संभाले आगे बढ़ा। उसके जीवन में इतने उत्साह और उल्लास का क्षण पहले कभी नहीं आया था। किंतु तुभरण का चेहरा और भी रक्तहीन हो उठा 'नहीं।'

राम हँस पड़े 'तुम तभी तक शूर हो जब तक दूसरा पक्ष तुमसे दुर्बल है। दूसरे पक्ष के समर्थ होते ही, तुम कायर के समान भाग जाओगे। बंदी के प्राण लेना हमारी नैतिकता के विरुद्ध है। इसलिए मैं तुम्हें एक छोटा-सा दंड देकर मुक्त करता हूँ। किंतु फिर कभी तुम आश्रम के आस पास दिखे गये, तो तुम्हें मृत्यु-दंड दिया जाएगा।'

राम लक्ष्मण की ओर मुड़े 'इसके हाथ पीठ पीछे बाँध दो। इसकी पीठ और छाती पर, लिखकर लगा दो कि यह कायर अंधकार में अचेत, दुर्बल लोगों की हत्याएँ करता है और समर्थ प्रतिपक्षी को देखकर भय से

काप उठता है। यह भी लिख दो कि इस उद्घोष की द्वंद्व युद्ध की चुनौती स्वीकार करने का साहस नहीं हुआ है। और उद्घोष ! तुम इसे पशु के समान हांककर आश्रम की सीमा से बाहर खदेड़ आओ।'

तुभरण को पकड़कर उद्घोष वापस लौटा तो अकेला नहीं था। उसके साथ वाल्मीकि आश्रम के चार ब्रह्मचारी थे जिनका नेता चेतन था।

चेतन तुम !'' मुखर सबसे पहले बोला आधी रात को।

'आवश्यक समाचार है।'' चेतन बोला किंतु यहां क्या हो रहा है? आप लोग जाग ही नहीं रहे पर्याप्त सक्रिय और स्फूर्त लग रहे हैं। पाश्र्व भी जला पड़ा है।

यहां एक मजेदार घटना घटी है। राम बोले वह कहानी तुम्हें सबेरे सुनाएंगे। तुम समाचार कहो। ऐसा क्या है कि ऋषि ने तुम्हें आधी रात को भेज दिया?

'भद्र ! अयोध्या का समाचार है।

क्या?

भरत लौट आए हैं। उन्होंने अपने अभिषेक का विरोध किया है और आपको मनाकर वापस अयोध्या ले जाने के संकल्प की घोषणा की है। किंतु

किंतु क्या ?'' लक्ष्मण बोले।

उन्होंने सेना को प्रस्तुत होने का आदेश दिया है। वे चतुरंगिणी सेना के साथ आपको मनाने आएंगे। चेतन के मुख पर एक वक्र मुसकान थी।

धोखा ! 'लक्ष्मण बोले मनाने के नाम पर सैनिक अभियान।''

अभी चलकर सब लोग सो रहो।' राम बोले 'शेष बातें कल होंगी।

राम अपनी कुटिया में चले आए। पीछे-पीछे सीता आयीं।

'क्या सोच रहे हैं आप ? ' सीता उत्कंठित हो राम की ओर देख रही थीं।

'निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकता।' राम स्थिर वाणी में बोले सौमित्र की आशंका भी ठीक हो सकती है और भरत की भावना भी

सत्य हो सकती है ।" सहसा वे मुसकराए, 'तुम परेशान मत हो, सात ! आशका की कोई बात नही है ! जो आशका सौमित्र के मन म है वह सुयन चित्ररथ त्रिजट तथा गुह के मन म भी होगी । भरत की सना आएगी तो मेरे मित्र भी अपन सैनिक-असैनिक योद्धा साथ लेकर आएग । फिर यदि भरत यह समझता है कि वह चित्रकूट म युद्ध करेगा तो मानना पडेगा कि वह सनिक अभियानो म कच्चा है । यहा का भूगोल सनिक अभियानो के उपयुक्त नहीं है । वह हार जायगा वैसे ऐसी आशका होने पर हम उसके पहुचने स पूव ही उसकी मन स्थिति की सूचना मिल जाएगी ।"

आप पूणत आश्वस्त हैं ?'

पूणत ।'

प्रात एक असामान्य से कोलाहल स राम की नीद टूटी । उषा की सुनहली आभा अभी नही फूटी थी । अभी तो आकाश पर स अधकार की घनी परत म कोई दरक भी नही पडी थी पक्षियो का सगीतमय कोलाहल भी आरभ नहीं हुआ था ।

पर राम की नीद टूट गयी थी । दूर कही हल्का सा कोलाहल सुनाई पड रहा था जो क्रमश आश्रम की ओर बढ रहा था ।

राम उठकर बठ गए । सीता को जगाया और कुटिया स बाहर निकल आए ।

अगले ही क्षण वे पाचो कवच धारण कर कमर म खडग बाधे हाथो म धनुष बाण लिये अपने शस्त्रागार और कुटीरो को घेरे सन्नद्ध खडे थे । चेतन तथा उसके साथी अतिथिशाला क भीतर ही रहे ।

आश्रम के जल हुए फाटक म से पहले कोलाहल भीतर आया और उसके बाद एक भीड ।

राम ने अपना धनुष वाला हाथ झुका दिया । यह सकेत सबके लिए था—युद्ध नही होगा । सबके हाथ शिथिल पड गए । आन वाली भीड थी सना नही । वे लोग व्यूह बद्ध नही थे । उस सारी भीड म शस्त्र भी दो-चार लोगों के पास ही थ, धनुष बाण तो किसी एक के पास भी नही था । यह भीड लडने नही आ रही थी । उसम आक्रमण की उग्रता नहीं थी ।

उनकी भगिमा पर्याप्त भिन्न थी।

भीड के निकट आने पर सब ने आश्चय स देखा—भीड की अग्रिम पक्ति म, माग निर्देशन करत से झिगुर और सुमेधा थ।

"सुमेधा!" उदघोप जैसे अपने आपसे बोला।

भीड थम गयी। कोलाहल रुक गया।

सुमेधा आकर उद्घोप के साथ खडी हो गयी। वह उसके कवच पर हाथ फिराकर स्पश से जान लेना चाहती थी कि वह क्या है

झिगुर! तुम कैसे आए? राम मुसकराए तुम तो रात के अधकार स छिपकर भाग गए थे।'

इसीलिए ता रात के अधकार म छिपकर वापस भी लौटे हैं। लक्ष्मण बोले 'सुबह तो हो लने देत आय झिगुर! या अपने नाम का प्रभाव छोड नही पाओग?"

झिगुर हसा। आज वह सारे सकोचो-ग्रथियो स मुक्त लग रहा था। आज वह सिमटा हुआ न होकर, उमुक्त था भद्र राम! मुझे क्षमा करें। तब मैं तुभरण का आतक अपन मन से निकाल नही पाया था। तब मैं आपका सामथ्य भी नही जानता था अत आप पर विश्वास नहीं कर सका। किंतु "

किंतु क्या भाद्र?' सीता ने पूछा।

'किंतु कल प्रात से ही राक्षस आपके आश्रम पर आक्रमण करने की तयारी कर रह थे—ग्राम का प्रत्येक निवासी इस बात का जानता था। प्रत्येक दास ग्रामवासी की सहानुभूति आपके साथ थी किंतु हम म से कोई आप तक सूचना पहुचाने का साहस नही कर सका।" झिगुर क्षण भर के लिए रुका, रात को जब आश्रम पर आक्रमण हुआ तो कुछ ग्राम-वासी छिपकर राक्षसो के पीछे-पीछे आए। उन्होने यहा हुई राक्षसो की दुर्गति देखी। उन्होने देखा कि जो राक्षस ग्रामवासियो के सम्मुख सवशक्ति मान थ जिनके सम्मुख कोई सिर नही उठा सकता था वे मात्र पाच शस्त्रधारियों के सम्मुख नहीं टिके। बिना युद्ध किए भाग गए। और फिर तुभरण का भी उन्होन देखा, जो हम म से ही एक ऐसा कोमल युवक कुमार से द्वन्द्व-युद्ध का साहस नहीं कर सका। गाव म य सारी

सूचनाए पहची और हम म से अनेक के मन म गधिन तुभरण और राक्षसों का आतक नष्ट हो गया और

और तुम लोगो को प्रात भ्रमण की सूझी!' लक्ष्मण मुसकराए।

यह तो सूझी ही। झिंगुर हस रहा था। उसने अपने साथ खडे युवक को उसकी भुजा स पकडकर आगे किया यह है धातुकर्मी। इसने अपनी लोहे की एक छड से तुभरण पर प्रहार किया। उसके खडग को अपनी छड पर सहा और तुभरण को यम के घर पहुचा दिया। फिर क्या था सारे गाव म विप्लव हो गया।

साधु! मित्र! राम बोले क्यो सौमित्र! यह तो तजस्वी पुरुष है।

अवश्य! लक्ष्मण की आखो म प्रशसा का भाव था, इसे अब धातुकर्मी से शस्त्रकार बन जाना चाहिए।

तुम ठीक कह रहे हो।'

किंतु अन्य राक्षस कहा गए?' सीता न पूछा।

वे लोग भी तो कुत्त के समान दुम दबाए हुए गाव म आए थ।' धातुकर्मी बोला गाव का विप्लव देखकर उसी प्रकार दुम दबाए हुए वन की ओर भाग गए।

वे लोग अपने मित्र राक्षसो के पास सहायता के लिए गए होगे उदघोष बोला वे अवश्य लौटकर गाव म आएगे और फिर पहले स भी अधिक अत्याचार करेंगे।

इसीलिए तो हम सब आपके पास आए है। झिंगुर उत्साह के साथ बोला अब हमारे मन म से राक्षसो का भय समाप्त हो गया है। वे लौटेंगे तो हम प्रतिरोध करेंगे। उसके लिए आवश्यक है कि आप हमे शस्त्र और शस्त्र शिक्षा द। हम उनसे युद्ध कर उन्हे भगा दगे अथवा मार डालेंगे।'

'आपका प्रस्ताव श्लाघ्य है आर्य झिंगुर!' राम बोले और यही राक्षस समस्या का समाधान भी है। आप लोगो को सशस्त्र होना भी चाहिए। इस नयी नयी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए आप लोगो को सनिक शिक्षा अवश्य प्राप्त करनी चाहिए। इन सारे कामो के लिए हम पूरी तरह

स आपकी महायता करेग। किंतु उसके साथ एक अन्य मोर्चे पर भी आप लोगों को लडना होगा। आपको अपने गाव म मानव ममता पर आधन समान अधिकारा वाला समाज बनाना होगा जिसम उत्पादन के साधनो पर सबका समान अधिकार हो। नये समाज की नयी नतिकता स्थापित करनी होगी, अ यथा आपके अपने ग्रामवासिया म से ही गलत व्यवस्था के कारण अनेक राक्षस ज म लेंग जो आज आपके मित्र है वे कल आपके स्वामी बन जाएग। अत आपका प्रशिक्षण लबा है '

ता ?"

भीड के चेहरा पर अनक आशकाए थी।

'तो आप सबका इस आश्रम म रहना व्यावहारिक नही है। अब, जब आप अपने गाव क स्वामी स्वय ह इस आश्रम म नया ग्राम बनाने की आवश्यकता नही है। हमारे पास जितने शस्त्र हैं व आप सबके लिए पर्याप्त भी नही हैं। अत आपको अपन शस्त्रो का निर्माण भी स्वय ही करना होगा। आप लोग अपने गाव म लौट जाए। उद्घोष आपके साथ जाएग और शस्त्र निर्माण की व्यवस्था करेंगे। लक्ष्मण के कह अनुसार आपके मित्र धातुकर्मी अब शस्त्रकार बनें। वे तथा उनके सहयोगी आपकी धातुओ को शस्त्रो म ढाल देंगे। प्रशिक्षण सहायता निरीक्षण तथा निर्देशन के लिए सौमित्र प्रतिदिन आपके गाव जाएगे। स्त्रियो के प्रशिक्षण के लिए आवश्यकतानुसार सीता भी जाएगी। मुखर भी आवश्यकता पडने पर जाएग और इसके पश्चात भी आवश्यकता हो तो यह आश्रम आपका है—मैं आपकी सहायता के लिए प्रस्तुत हू।'

राम मौन हो गए। कुछ क्षणो के लिए भीड पर,चमगादड के समान अनिश्चय छा गया, किंतु धीरे धीरे वायुमडल की धूल के समान वह भूमि पर बैठा गया।

ठीक है। उद्घोष न कहा मैं जाऊगा।'

कोई असुविधा तो नही बधुआ ?" राम न पूछा।

'नही। आप ठीक कह रहे ह।" झिगुर बोला हमारा अपने घरो म अपन परिवारो क साथ रहना अधिक सुविधाजनक है। अब देखिए न ! सुमेधा की मा एक बार फिर मेरे साथ नहीं आयी।"

चलो मित्रो !" घातुकर्मी बोला चलो गाव की ओर।
उन लोगो ने हाथ जोडकर, नमस्कार किया और लौट चल।
'जा रही हो सुमधा ?" सीता बोली।
हा दीदी ! ' सुमेधा मुसकराई 'अब तो उदघोप भी गाव लौट रहा है। तुम कब आओगी हमारे गाव दीदी ?'
तेरे विवाह पर।'
धत ! सुमेधा ठिठककर खडी हो गयी पर फिर गतिमान हो उठी, अब तो मैं प्रतिदिन आऊगी दीदी ! प्रतिदिन !'
वह भी भीड क पीछे भाग गयी।

सध्या समय भोजन करने बठे, तो सब न ध्यान दिया कि मुखर अतिरिक्त रूप स चुप था। वह जैसे अपने भीतर किसी उधेड बुन म लगा हुआ था।
क्या बात है मुखर ?' सीता ने उसे टोका आज भोजन म ध्यान नहीं है। सुमधा और उदघोप के विवाह से तुम्हे अपनी कोई सुमेधा तो याद नही आ गयी ?'
नही, दादी ! छलनी म छने प्रकाश के समान गभीरता म से मुखर की मसकान उभरी, मेरी कोई सुमधा नही है। हा मुझे अपना कुटुम्ब याद आ गया।
राम मुखर के चेहरे की रेखाओ का पढ़ने का प्रयत्न कर रहे थ कुटब याद आ जाए ता कोई बुराई नही, मुखर ! किंतु तुम्हारी याद *पीडायुक्त है। इसलिए उसक कारण की चिंता हम भी हाती है।'*
मुखर तनिक खुलकर मुसकराया चिंता की कोई बात नही आय ! तुभरण की मत्यु और उदघोप क ग्राम-वधुओ की मुक्ति से मुझम कुछ अतिरिक्त उत्साह जागा है। मुझे लगता है कि मैं भी अपन गाव लौटकर उसे मुक्त कराऊ और अपने कुटुब का प्रतिशोध लू ।
लक्ष्मण खुलकर हसे बहुत अच्छे मुखर ! उदघोप का ग्राम ही मुक्त नही हुआ तुम्हारा मन भी मुक्त हो गया।'
राम गभीर ही रह यह तो प्रसन्नता का विषय है मुखर ! किंतु *तुम्हे जान की अनुमति देने से पूव हम अनेक बाता पर सोच विचार कर*

लना चाहिए।'

'किन बातो पर राम ?"

धातुकर्मी के प्रहार स तुभरण की मृत्यु हो गयी तो ग्रामवासी उत्साहित हो उठे और राक्षस भयभीत होकर भाग गए। किंतु यदि उस प्रहार से तुभरण बच जाता और उसके खडग के प्रहार से धातुकर्मी मारा जाता तो क्या स्थिति होती ?"

राक्षस और अधिक क्रूर हो उठत।" मुखर सिहर उठा ग्राम-वासियो का तज पूणत नष्ट हो जाता। इस क्षेत्र म फिर कोई राक्षसों के विरोध का साहस न करता।

इन परिणामो की कभी उपक्षा मत करना मुखर! राम सहज हो गए, 'तुम एकाकी जाकर खर और दूषण के सैनिकों से टकरा जाओगे ता तुम्हारी निश्चित मत्यु है, और उसका प्रभाव राक्षसो के आत्मबल को बढाने म सहायक होगा। ऐसा कोई काम मत करना मेर मित्र! एसा बलिदान पाप है जिसस अत्याचारिया का आत्मबल बढे। उससे तो कही अच्छा है कि तुम ऋषियो के समान राक्षसो के प्रतिरोध मे, जन सामान्य म आक्रोश जगाने के लिए सावजनिक ढग से आत्मदाह कर लो।"

नहीं, राम! मैं केवल बलिदान नही चाहता, मैं तो प्रतिशोध चाहता हू।' मुखर बाला मेरे मरने का क्या लाभ यदि राक्षसो की तनिक-सी हानि भी न हो।'

तो मित्र! अपने आपको तैयार करो। सारे पीडितो को तैयार करो।' राम ने सहास कहा अकेला बलिदान कुछ नही करेगा। शुभ कर्मों के लिए जागरण सगठन और बलिदान—तीनों की आवश्यकता होती है। नहीं तो, मैं भी कब से जा रावण से टकराया होता और छोटे मोटे तुभरणा का स्वत समाप्ति हो जाती। किन्तु अभी सगठन नही है अत रावण से टकराना मूखता होगी। यह मत समभना कि मैं इक्के-दुक्के बलिदाना का महत्व नहीं मानता। उनका महत्त्व अपने स्थान पर है। उद्घोष के ग्राम की घटना के समान विस्फोट का भी अपना महत्त्व है। ऐसे विस्फोट असफल भी हो जाए तो खाद का काम तो करते ही हैं। किंतु उन विस्फोटा के पीछे पूव-योजना नही होती—वह तो प्राकृतिक प्रक्रिया है। तुम्हारा

प्रयास उससे भिन्न होगा।"

मुखर की आकृति पर सहमति का भाव था टीक कहते हैं आर्य!"

भोजन के पश्चात सब लोग अपने-अपने कार्यों में लग गए। किंतु राम के मन में मुखर से हुई बातचीत अनेक नये प्रश्न जगा गयी थी।

पहले भी उनके मन ने सिद्धाश्रम और कालकाचार्य के आश्रम की तुलना की थी। आज फिर कालकाचार्य का बिंब बार बार उनके मन में उभर रहा था। वे मुखर और उद्घोष से अजाने ही उनकी तुलना कर रहे थे। राम को अपने आश्रम में आया देखकर हर बार कालकाचार्य के द्वंद्व ग्रस्त हो जाते थे। उनमें उत्साह कम और संकोच अधिक होता था। जैसे वे राम को उस आग के समान मानते थे जो दूर रहकर प्रकाश तो देती है किंतु निकट जाने पर ताप भी देती है। उनकी सावधानी ध्यान देने योग्य थी। न्युत्कर न तो कभी उन्होंने राम का स्वागत किया था न उन्हें अपने आश्रम पर निमंत्रित किया था। राम को सदा लगा कि वे ऐसे भीरु सज्जन हैं जो यह तो जानते हैं कि शोषक कौन है वे यह चाहते भी हैं कि कोई उस शोषक का अंत कर दे, किंतु यह नहीं चाहते कि उनका अपना नाम कहीं बीच में आए। वे उस वर्ग के प्रतिनिधि थे जो अपनी समस्त सद्भावनाओं और न्याय बुद्धि के बावजूद दुष्ट का ताडन करने के लिए साहस नहीं जुटा पाता है जो संघर्ष में से स्वयं को बचाए रखना चाहता है जो अपना दामन बचाकर शांति की आकांक्षा करता है। पर वह शत्रु नहीं है। उस वर्ग से भी निरंतर संपर्क बनाए रखना होगा उसके आत्मबल को जगाने का प्रयत्न करते रहना होगा। शायद उनका आत्मबल जाग न भी जाग

और फिर मुखर के समान राम को भी अपने कुटुंब का ध्यान हो आया। अभी तक अयोध्या से भरत के प्रस्थान का समाचार नहीं था। वहां क्या घटित हो रहा था—या कुछ भी घटित नहीं हो रहा था? संभवत वहां ऐसा कुछ भी नहीं हुआ था जिसकी सूचना उस दिन तक तुरंत पहुंचाई जाती। नहीं तो कोई-न कोई उन तक अवश्य पहुंचता। किंतु जब तक निश्चित समाचार मिल नहीं जाता तब तक राम आगे नहीं बढ़ सकते। उन्हें यहीं रुकना होगा।

रात गए बड़ी देर तक राम भविष्य के विषय में सोचते रहे।

६

कुटिया के द्वार पर एक पेड़ की छाया में सीता छोटा मोटा घरेलू काम लिए बैठी थी। उनके पास ही बैठी सुमेधा तकली पर सूत कात रही थी। बीच बीच में बात भी हो जाती थी और फिर दोनों का ध्यान अपने-अपने काम की ओर चला जाता था।

दोपहर तक का अपना काम समाप्त कर सुमेधा हाथों को उलझाए रखने का कोई काम लेकर प्रायः सीता के पास आ बैठती और वन-ग्राम के अनेक समाचार दे जाती। उसका आप बहुत व्यस्त था—कभी शस्त्र-निर्माण कभी प्रशिक्षण कभी अभ्यास कभी खेतों में काम कभी गांव के कार्यालय में कभी मूर्ति निर्माण कभी कुछ सुमेधा भी अपने ढंग से व्यस्त था किंतु अपनी सारी व्यस्तता में भी सीता के पास जाने का समय वह निकाल ही लेता, सिवाय उन दिनों के जिन दिनों सीता का उनके ग्राम जाना होता था।

इधर लक्ष्मण भी काफी व्यस्त हो उठे थे। वन में इंधन कंद मूल फल अथवा औहर का लाना तो नित्य-क्रम था ही, कुटीरों को दृढ करने वाड़े की मरम्मत तथा अन्य कामों के लिए लकड़ी की अतिरिक्त आवश्यकता भी रहती थी। अनेक कार्यों से वन के विभिन्न आश्रमों तथा अनेक ग्रामों में भी जाना पड़ता था। सम-वयस्क युवकों से उनका संपर्क स्थापित हो गया था। उनके प्रभाव-क्षेत्र में आश्रमों के ब्रह्मचारी भी थे और ग्रामवासी

युवक भी। लक्ष्मण उनके नेता बन उन्हें शस्त्रों का अभ्यास कराया करते थे। दोपहर के भोजन के पश्चात् प्राय लक्ष्मण इसी शिक्षण के लिए चले जाया करते थे।

राम ने सीता का शस्त्राभ्यास करा दिया था—मुखर को सक्षम बना दिया था और अब सुमेधा भी दोपहर को सीता के पास आ जाती थी। उसने उदघोष से थोड़ा-बहुत शस्त्र-परिचालन भी सीख लिया था। राम भी अपने परिवेश पर दृष्टिपात करने के लिए चल जाया करते थे।

किंतु अपने आश्रम से अधिक दूर वे नहीं जाते थे। सीता एक सीमा तक ही अपनी सहायता कर सकती थी आवश्यकता होने पर सहायता के लिए मुखर भी वहा था, किंतु शस्त्रागार अपनी रक्षा मे स्वय सक्षम नहीं था। राम अथवा लक्ष्मण म से एक का आश्रम के समीप ही कहीं बने रहना आवश्यक था।

आज भी सुमेधा को, सीता के पास आया देख, वे थोड़ी देर के लिए कालकाचार्य से मिलने चल गए थे।

सहसा सीता ने आश्रम के बाड़े के फाटक के खुलने का शब्द सुना। उन्होंने विस्मय से गर्दन घुमाकर उस ओर देखा—इतनी जल्दी तो न राम के आने की आशा थी न लक्ष्मण की।

आगतुक कोई अन्य ही था—सीता के लिए पूर्णत अपरिचित। आरभिक दिनो म इस प्रकार किसी अपरिचित को समीप आते देखकर सीता बुरी तरह चौंक उठती थी। किंतु अब कुछ कुछ अभ्यास हो गया था। इस वन म भी खोज खोज कर दूर और पास के लोग, राम की मित्रता के लिए आते थे। राम थे ही ऐसे—किसी भी व्यक्ति के लिए सहज सुलभ खुले तथा ईमानदार। कोई भी व्यक्ति आकर उनसे अपनी समस्याएं कह परामर्श और यदि आवश्यक हो तो सहायता प्राप्त कर सकता था।

कदाचित आगतुक भी कोई ऐसा ही व्यक्ति रहा होगा।

आगतुक स्थिर पगों से अब सीता और सुमेधा की ओर बढ़ रहा था। सीता ने देखा—वह कोई स्थानीय व्यक्ति नहीं लगता था। वह ऊचा लबा और स्वस्थ युवक था। वय चालीस-बयालीस के आस पास रहा होगा।

रग उसका गोरा था, सिर पर लब-लब पीत केश थ। आखें कुछ नीली थी और उसन राजसी वेशभूषा धारण कर रखी थी। सीता के ज्ञान के अनुसार इस पुरुष को उत्तर कुरु के उस पार का वासी होना चाहिए था। इतनी दूर से यह राजपुरुष यहा क्या करने आया है ?

वह सीता तथा सुमेधा से उचित दूरी बनाए शिष्ट भाव से खडा हो गया 'क्या आय राम का आश्रम यही है ?'

उसका स्वर सुनकर सीता चौंक उठी। कसा ककश स्वर था इस पुरुष का—एकदम वनैल कौव का-सा। और आखें भी तो वसी ही थी—छोटी-छोटी तीखी और गोल। कौआ एकदम कौआ—सीता न सोचा—मनुष्य के शरीर म कौवे की आत्मा। उसके शब्द पर्याप्त शिष्ट थे, किंतु उसके चेहरे का भाव वैसा नही था

सुमेधा उसे देखकर अपन आप म सिमट गयी।

सीता न अपन आत्मबल का आह्वान कर निर्भीक स्वर म कहा, आय ठीक स्थान पर आए हैं किंतु राम इस समय आश्रम म उपस्थित नहीं हैं।'

आय लक्ष्मण ?

वे भी कही गए हुए हैं।' सीता बोली आप अतिथिशाला म ठहरें वे लोग शीघ्र ही आ जाएगे।

आगतुक के चेहरे की रही-सही शिष्टता भी धुल गयी। उसके मन के भाव निरावृत्त होकर उसके चेहर पर प्रकट हुए।

'राम से मुझे कोई काम नहा है। मैं तो तुम्हार लिए ही आया हू सुदरी!

सुमेधा आशका म पीली पड गयी।

सीता न साहस नहीं छोडा, कौन है तू अभद्र ? तू नहीं जानता राम और सौमित्र को तनिक-सी भी सूचना मिल गयी तो तेरा मुह धड स पृथक हो धरती पर लोट जाएगा।'

पर आगतुक जस कुछ भी नहीं सुन रहा था।

सुमेधा! सीता धीर स बोलीं घबरा मत। मैं इस दुष्ट को देखती हू।

सुमेधा शस्त्रागार के भीतर घुस गयी।

आगंतुक ने उसे देखा। कुछ सोचकर मुसकराया 'तुम्हारी सखी समझदार है सीते! वह जानती है वह कब और कहां अवांछित है।

वह सधे पगों से आगे बढ़ रहा था।

'तुम्हारी बुद्धि की बलिहारी। किंतु तुम रुक जाओ।' सीता ने आदेश दिया "नहीं तो तुम्हारी समझ में अच्छी तरह आ जाएगा कि तुम कब और कहां अवांछित हो।

'शुभ लक्षण!' आगंतुक के चेहरे पर वीभत्स मुसकान उभरी 'अपने विषय में मैं अच्छी तरह जानता हूं, तुम्हीं अपना मूल्य नहीं जानती। तुम्हें क्या मालूम मैंने संसार में कहां कहां तुम्हारे रूप की चर्चा सुनी है, और मैं कितनी दूर से तुम्हें पाने के लिए आया हूं।'

मौन हो दुष्ट!' सीता के भरपूर हाथ का चांटा आगंतुक के मुख पर पड़ा।

क्षण भर के लिए आगंतुक हतप्रभ रह गया वह इस प्रकार के प्रहार के लिए तैयार नहीं था। किंतु दूसरे ही क्षण वह सीता पर झपट पड़ा। उसने सीता को अपनी भुजाओं में बांध लिया था। उसकी जकड़ में निरुपाय सीता छूटने के लिए तड़प रही थी

तभी सुमेधा ने पीछे से आगंतुक की पीठ में खड्ग घोंप दिया।

सीता उसकी पकड़ में से निकल गयी। वह पीछे की ओर पलटा।

तब तक सीता सुमेधा से दूसरा खड्ग ले चुकी थी और वे प्रहार के लिए सन्नद्ध थीं।

आगंतुक ने भी अपना लंबा खड्ग कोष से निकाल लिया।

'सीता! समर्पण कर दो अन्यथा प्राणों से जाओगी।' वह अत्यंत क्रूर दिखाई पड़ रहा था।

'दुष्ट! तू भी देख किसके प्राण पृथ्वी को भारी हो रहे हैं।' सीता बोली 'सुमेधा! मुखर को बुला ला।'

तभी लौटकर राम बाड़े के फाटक पर पहुंचे। वे कालकाचार्य से हुई बातचीत पर विचार करते हुए आत्मलीन-से चले आ रहे थे। अभ्यस्त हाथ बाड़े का फाटक खोलने के लिए आगे बढ़े तो ध्यान आया कि फाटक तो

खुना है। दृष्टि उठाकर देखा तो चौंक उठे—सुमुखी भागी हुई, कदाचित मुखर की कुटिया की ओर जा रही थी। सीता खडग लिये हुए द्वन्द्व-युद्ध के लिए तत्पर थी और एक राजसी पुरुष नंगा खडग लिये सीता पर प्रहार करने जा रहा था।

राम की शिराओ का रक्त एकदम उफन पडा—कौन है यह दुस्साहसी राज पुरुष! वह उनकी पत्नी पर प्रहार करने जा रहा था। सीता कितनी ही साहसी और सक्षम क्यो न हो, कदाचित एक दक्ष और अभ्यस्त योद्धा का सामना अभी नही कर सकती। राम को तनिक भी विलब हो गया होता तो यहा कोई दुघटना घट गयी होती तुभरण के वध के बाद म राम जैसे आशका रहित हो गये थे किंतु यह स्थान उतना सुरक्षित नही था।

राम अपना खडग नग्न कर झपटे और कूदकर सीता और उस पुरुष के मध्य आ खडे हुए। सीता और आगतुक दोनो ही चौंक पडे।

सीता का सारा भय और समस्त आशकाए क्षणाश म विलुप्त हो गयीं। उनके राम आ गये थे और राम ससार के किसी भी योद्धा को द्वद्व की चुनौती दे सकते थे।

वे सहज और शात हो गयी।

सीता ने देखा राम का क्षोभ भी समाप्त हो चुका था। आत्म-विश्वासी राम निश्चित मुद्रा म खडग लिये खडे थे जैसे उनके सामने खड्गधारी योद्धा न हो, कोई नुच्चा खडा हो चूहा नही कौआ! साधारण कौआ, जिसे हुश्काकर डराकर भगा दिया जाए।

आगतुक राम को देखकर भी सकुचित नही हुआ था। अपने दुष्कृत्य के लिए वह रचमात्र भी लज्जित नहा था। उसने अपनी ओर से राम पर जोरदार आक्रमण किया। पर राम उससे जैसे खडग युद्ध नही कर रहे थे, खेल कर रहे थे। उन्होने खडग को लाठी के समान जोर से चलाया। आगतुक का खड्ग उसके हाथ से निकल हवा म उडता हुआ दूर जा गिरा।

यह तो एकदम ही कौआ निकला। किसी को असावधान पाकर झपट पडने म ही उसका बल था। सीता मुसकरा पडी।

आगतुक राम का सामर्थ्य पहचान भय म पीला पड गया। वह उलट-

कर भागा

राम ने खड्ग से प्रहार नही किया। लपककर उसके माग म टाग अड़ा दी। आगतुक धड़ाम से पथ्वी पर आ गिरा।

राम न आग बढकर उसक कठ पर अपना पर जमा दिया।

सीते! आओ इसकी वीरता देखो।' उ होने पुकारा।

तब तक मुखर भी हाथ म धनुष वाण लिय सुमेधा के साथ भागता हुआ आ पहुचा। राम को आगतुक के कठ पर पग धरे देख वे दोना ही सहज हो गये और तजी से चलत हुए पास आकर ठहर गय।

सीता राम के पास पहुच गयी थी।

राम अपना पग क्रमश दबा रहे थ।

आगतुक के चहरे पर भय क स्थान पर अब क्षोभ था। उसकी आखें पीडा और अपमान स लाल हो रही थी तुम मुझे जानत नही हो राम! तभी यह दुस्साहस कर रहे हो। मैं तुम्हे दड दिलवाऊगा।'

'अच्छा! इस क्षेत्र म चोर भी दड दिलवाने की धमकी देत हैं।' राम मुसकराए तुम्ह लज्जा तो तनिक भी नही आयी दुष्ट! कोई विशेष चीज लगते हो। किससे दड दिलवाओग?

ब्रह्मा से।' आगतुक के चेहरे पर दुश्चरित्र समृद्धि खुल खेली थी।

राम मुसकराए ब्रह्मा का भय दिखा रहे हो भद्र पुरुष! क्या ब्रह्मा तुम जसे दुष्टो की रक्षा करने फिरते हैं? फिर तो मुझे लगता है कि किसी दिन मुझे स्वय ब्रह्मा से भी निबटना पडेगा।'

उ होने अपना पर कुछ और दबाया।

जानत हो।' आगतुक पीडा और क्रोध के मिश्रित स्वर म बोला 'तुम जो मेरा अपमान कर रहे हो उसके लिए तुम्हे कभी क्षमा नही किया जाएगा। तुम्ह कदाचित मालूम नही कि मैं इद्र का पुत्र जयत हू।

इद्र का पुत्र!' राम को स्मृति के सारे ततु एक साथ ही झनझना उठे तुम बाप-बेटा एक ही काम करत फिरते हो दुष्टो! मेरे मन से अहल्या पर हुए अत्याचार की छाया अभी मिटी नहीं और तुम आ गये। दुष्ट सत्ताधारी के सप न विलासी पुत्र! मैंने इद्र को सम्मुख पाकर उसकी हत्या का प्रण किया था—वह तो मेरे सामने नही आया। आज तुम जाय

हो। बोलो, तुम्हें क्या दंड दिया जाए ?'

राम का खड्ग जयंत के वक्ष पर जा लगा।

जयंत को पसीना आ गया। उसका स्वर कांप गया, पर वह अपना संपूर्ण साहस बटोरकर निर्भयता का अभिनय करता हुआ बोला, तुम ब्रह्मा से नहीं डरते ? तुम इंद्र से नहीं डरते ?"

'मैं किसी दुष्ट अथवा दुष्टता के संरक्षक से नहीं डरता।' राम बोले, 'मैं ऐसे लोगों से घृणा करता हूं। बड़े बड़े नाम लेकर मुझे मत डराओ। सत्ताधारियों और उनके पुत्रों के अत्याचारों की कथा सुनकर मेरे मन में घृणा की आग धधकने लगती है। मैं दुष्टता का समूल नाश करने को वचनबद्ध हूं—चाहे वे दुष्ट कितने ही सबल सत्तामय न अथवा धनवान हों।'

राम के पांव का दबाव बढ़ता जा रहा था और खड्ग की नोक जयंत को बुरी तरह चुभने लगी थी। उसका निर्भयता का अभिनय चल नहीं पाया। उसके चेहरे का साहस, राम की अडिगता का ताप पाकर हिम के समान गल गया।

उसके चेहरे पर दीनता आ गयी। स्वर घिघियाने लगा मुझे क्षमा करो, राम! मैं तुम्हारे चरण छूकर तुमसे जीवन की भीख मांगता हूं।

उसने दोनों हाथों से राम का पांव पकड़ लिया। आंखों से अश्रु बहने लगे और होंठ रोने के लिए फैल गये।

राम ने अपना पग उसके कंठ से हटा लिया, 'इतने ही वीर थे तुम इंद्र-पुत्र जयंत! सीता पर प्रहार करते हुए कदाचित् तुम्हें अपना कोमल कंठ याद नहीं रहा।'

'मुझे क्षमा करो, राम!" जयंत ने भूमि से उठकर राम के चरणों पर अपना मस्तक रख दिया मैं तुम्हारी शरण में आया हूं। मुझे प्राणों की भीख दो। मुझे अभय दान दो।

"थोड़ी देर पहले तो तू देवी सीता की शरण में आया था दुष्ट!' सुमेधा ने घृणा से पृथ्वी पर थूक दिया।

राम मुसकराए, 'मुझे मेरे आदर्शों में बांधने की कुटिलता मत करो, पापी पिता के पापी पुत्र! क्षत्रिय शरण में आये व्यक्ति की रक्षा अवश्य

करता है किंतु मैं तुम जस नीच का नरण याचना को एक षडयन्त्र मानता हू। अभय नही दूगा चाह प्राणन्तान द द। दड तुम्ह अवश्य मिलेगा। मैं तुम्हारे प्राण नहा लूगा पर अग भग अवश्य करूगा।'

अग भग !' जयत की घिग्घी बध गयी।

हा ! अग भग !' राम बाल सीता पर दुष्ट दृष्टि डालने के कारण तुम्हारी एक आख फोड दू अथवा प्रहार करने के कारण एक हाथ काट डालू ?'

मुझे क्षमा करा राम !' जयत रोता हुआ राम के चरणों से लिपट गया मैं पिताजी स कहकर तुम जो चाहोग दिलवा दूगा—राज धन '

विलब मत करो। राम बाल, मेरी बात का उत्तर दा। विलब तुम्हारे लिए हितकर नही हागा। लक्ष्मण आ गय ना मर निषेध पर भी व तुम्हारी हत्या कर डालेंग।

लक्ष्मण ! जयत क्षण भर के लिए जड हा गया पर फिर जम जाग कर रोता हुआ बाला मरा हाथ मत काटा। मरा हाथ मत

ता ल।' राम न अपन तूणीर म से तीखे फलक का एक बाण निकाला।

जयत न मुख ऊपर उठाकर राम की ओर दखा ही था कि चीख मार कर पथ्वी पर उलट गया। वह जान ही नही पाया कि राम ने किस कौशल स बाण के फलक से उसकी बायी आख बीध दी थी।

चले जाआ !' राम न आदेश दिया।

जयत सरपट भागता हुआ आश्रम की सीमा से निकल गया।

राम न मुडकर सीता को दखा। सीता के कधे स बहता हुआ रक्त उनके वक्ष पर आ गया था।

सीत ! यह क्या है प्रिय ?

सीता ने लापरवाही स कधा झटक दिया कौआ चाच मार गया।'

राम के मन म जयन का ककश स्वर तथा छाटी गोल तीखी आखें कौंध गयी। वे हस पडे ठीक कहती हा प्रिय !' व मुडे सुमधा ! सीता क घाव का उपचार कर दो देवि ! और मुखर ! तुम जाओ मित्र ! अब कोई आनका नही।

पात्र का वद करने की ध्वनि सुनकर राम मुड़े। लक्ष्मण कधे पर धनुप टागे मस्त से कुछ गुनगुनात चले आ रह थे। उनके साथ चेतन तथा वाल्मीकि आश्रम के दो ब्रह्मचारी और थे।

यहा कुछ हुआ है, भया ?' उन्होंने सब लोगा पर जिज्ञासापूर्ण दृष्टि डाली।

'कुछ विशेष नही। एक धृष्ट कौआ आया था। हुश्काकर भगा दिया।' राम मुसकराए और तुम सुनाओ, चेतन! क्या समाचार लाए ?'

चेतन मुसकराया 'आय! यह न मान लें कि मैं केवल समाचार ही लाता हू कभी कभी वैसे भी आपसे मिलने की इच्छा होती है।"

किंतु आज मैं समाचार लेकर ही आया हू।' लक्ष्मण बोले।

'जो!'

क्या समाचार है!' राम ने पूछा।

'भरत अयोध्या से चल चुके हैं। सदेशवाहक के चलन तक व शृगवेरपुर तक पहुच चुके थ और निषादराज गुह के अतिथि थे। उनके साथ अयोध्या की सेना के साथ साथ मत्री-मडल राजगुरु तथा आपकी दोनों माताए भी आ रही है। अगले दिन उनके साथ गुह भी अपनी सेना समेत प्रस्थान करन वाले थ।'

समाचार तो बुरा नहा। राम बोले, 'यदि माताए मत्री मडल, राजगुरु तथा गुह भी साथ हैं ता भरत का प्रयोजन सैनिक अभियान नहा हो सकता।'

पर भैया यह न भूलें कि भरत कैकयी का पुत्र है।' लक्ष्मण का स्वर तीखा था।

राम मुसकराए यह बात भी मेरे ध्यान म है।

किंतु राम! चेतन बोला 'ऋषि भरद्वाज और कुलपति वाल्मीकि दूसरी आशका म पीडित हैं।

वह क्या ?' सीता न पूछा।

यदि भरत सचमुच मनाने आ रहे हों और राम भाई की बात मानकर लौट गय '

राम हस पडे ऋषि से यह दना आपका मुक्त हो जाए।'

सीता अपनी कुटिया स निकलकर टीले की ढाल की ओर आयी।'

पूरी ढाल हरी भरी हो गयी थी। पिछन कई महीनो क कठिन परिश्रम स यह भूमि खेतो म बदली जा रही थी। मत भी कसे जस समतल भूमि को उठाकर खडा कर दिया गया हो। सीता न अपन हाथा स इस ढाल को खोदा-गोडा था मन्दाकिनी स पानी ला-लाकर उस सींचा था। पहल तो पानी कही ठहरता ही नही था मदाकिनी की धारा म पुन मिलन के लिए किसी विरही क समान भागता चला जाता था। सीता ने बडे धय और परिश्रम स क्यारियाँ बनायी थी और पानी का रोकने का प्रबध किया था। समय मिलन पर राम और लक्ष्मण भी उनकी सहायता कर दिया करत थ। मुखर तथा सुमेधा भी यथासभव सहयोग किया करत थे किंतु मूल रूप स यह सीता का ही दायित्व था।

सीता ने अपन परिश्रम के फल फल को बडी तृप्ति स देखा, किंतु एक आश्चय भी था उनक मन म। जाने चित्रकूट की मिट्टी मे कोई ऐसी बात थी या मदाकिनी के जल म ही कोई ऐसी विशेषता थी—फलने को तो सब कुछ फलता था किंतु जिस वभव के साथ बगन फलता था न कोई अ य सब्जी फलती थी न फल न फूल।

क्या बात है, सीत ? राम आकर उनक साथ खडे हो गय अपना बगन-पारावार देख रही हो।

सीता मुसकराइ यहा तो स्थिति यह है कि आम क वक्ष पर भी बगन ही फलेंगे।'

फिर खेती पर अधिक परिश्रम क्या करना।" राम मुसकराए 'आओ तनिक नाव खेने का अभ्यास हो जाए।'

राम नीचे उतरते चले गये जाकर मदाकिनी के तट पर रुके। घट म बधी नाव उन्होने खोल ली और सीता की प्रतीक्षा करन लगे।

सीता का शस्त्राभ्यास काफी आग बढ गया था। राम नये-नये शस्त्रा के साथ अ य प्रकार क शारीरिक व्यायाम भी जोडत जा रहे थे। तरन और नाव चलाने का साधारण ज्ञान सीता को पहल से ही था किंतु राम

अब उन्हें अकन बडी नौका मेन उसकी गति वढान किसी भागती हुई नाव का पीछा करन इत्यादि का अभ्यास करा रहे थे।

मीता नाव म वठी तो राम ने चप्पू उन्ह थमा दिए चलाओ।

सीता ने चप्पू थाम लिये। नाव चल पडी।

'आप नौका प्रशिक्षण पर इतना बल दत है।' सीता वोली पवतारोहण इत्यादि का भी तो अभ्यास करना चाहिए। पिछल सप्ताह जब वषा म भीगत चट्टानो पर फिसलत हम चित्रकूट की विभिन्न चोटियो पर घूमन फिरे थे ता कितना आन द आया था।'

नौका प्रशिक्षण आनन्द के लिए नही है दवि।' राम मुसकराए शत्रु स वचन के लिए किसी अत्यत बीहड स्थिति म निकल भागन क लिए तुम्हारे पास एक ही माग है—मदाकिनी। तुम्ह इसस पूरी तरह परिचित होना चाहिए।

आपको लगता है कि हम अब भी यहा सुरक्षित नहीं है?' सीता ने राम को आश्चय मे देखा हम यहा आए दस मास हो चुके हैं। मुझे तो आस-पास शाति लगती है। कभी-कभार जयत जैसा कोई दुष्ट आ जाए '

भली कही जयत की' राम मुसकराए उसके परिवार की तो पीढियो से यही परपरा है। पर मैं दख रहा हू कि यहा नित नये रावण, इद्र और जयत पदा हो रहे हैं। मैंने सुना है कि जयत कई दिना से इस क्षेत्र म घूम रहा था और विभिन्न आश्रमो और ग्रामो म दुष्टता दिखान का प्रयत्न कर चुका था।'

हा! आज सुमधा भी कुछ ऐसे ही समाचार लायी थी।

'पर मैं कुछ और ही सोच रहा हू सीते!' राम गभीर हो गये भरत मर्म म आ रहा है। वह नही सकता ऊट किस करवट बैठेगा। सभावना कम दीखती है पर यदि भरत के मन म खोट हुआ तो हम उसका तो सामना करना ही होगा यहा के दमित राक्षस भी हमारे विरुद्ध उठ खड़े होंगे। इस समय मेरा समस्त ध्यान उस ओर लगा हुआ है। जाने क्या हो। भरत क्या कर और उनकी प्रतिक्रिया यहा क्या हो

आप ठीक कहते हैं राम!' सीता दूर क्षितिज को देख रही थी 'हम प्रत्यक स्थिति के लिए तैयार रहना चाहिए।'

७

सध्या का झुटपुटा क्रमश गहराता जा रहा था। सारा वन प्रात शात होता जा रहा था। आश्रमो से बाहर गये हुए लोग आश्रमों म लौटत आ रहे थे। थोडी दर म पूण अधकार होते ही वन म पूण शाति भी हो जाएगी। आश्रमो के बाडो के फाटक बद हो जाएगे और लोग अपनी कुटियो म दीपक के निकट अथवा कुटियो के द्वार पर अग्नि के पास बैठ होंगे।

ब्रह्मचारी अश्विन तजी से पग बढाता हुआ अपने आश्रम की ओर चला जा रहा था। आज वन मे विलब हो गया था। कही ऐसा न हो कि वह वन प्रातर मे ही हो और पहल ही बाड का फाटक बद हो जाए। एक बार फाटक बद हो जाए तो उसे खुलवाने म पर्याप्त कठिनाई हो जाती है। भीतर वाले लोग जब तक कोई ऐसा प्रमाण प्राप्त नही कर लेते कि आगतुक आश्रमवासी ही है अथवा उसके बहाने कोइ और तो भीतर नही घुस आएगा, अथवा आस पास कोई राक्षस या हिंस्र पशु तो नहो है—तब तक फाटक नही खोलत। और इस सारी प्रक्रिया म इतना विलब और कोलाहल होता है कि प्रत्येक आश्रमवासी को यह मालूम हो जाता है कि अमुक व्यक्ति विलब से आया है तथा उसके कारण सबको असुविधा हुइ है।

जल्दी-जल्दी चलने के कारण अश्विन की सास फूल गयी थी और शरीर पसीने से भीग गया था। सतोप यही था कि अधिक देर नहीं हुई।

वह समय से आश्रम में आ पहुंचा था अभी फाटक बंद नहीं हुआ था।

आश्रम की सीमा में प्रवेश करते ही उसकी गति धीमी पड गयी। तब उसे अनुभव हुआ कि वह बहुत दूर से असाधारण तेजी से चलता हुआ आया है और उसने अपने शरीर को बहुत अधिक थका डाला है। आसन्न मकट के कारण उसका ध्यान अब तक इस ओर नहीं था उसके मानसिक तनाव ने उसे शारीरिक कष्ट के प्रति सजग होने ही नहीं दिया था। किंतु अब उसके शरीर में अधिक काय क्षमता नहीं थी। न तो वह तेजी से चल सकता था और न सिर पर रखा लकडियो का बोझ ही अधिक ढो सकता था। पर अब वह आश्रम में प्रवेश कर चुका था किसी-न किसी प्रकार कुटिया तक भी पहुच ही जाएगा।

वह घिसटता हुआ अपनी कुटिया तक आया। भिडा हुआ द्वार खोला और सिर का बोझ धरती पर पटककर सुस्ताने बैठ गया।

कुटिया के भीतर पूरी तरह अधेरा था किंतु थकावट के कारण दीपक जलाने का उद्यम वह कर नहीं पा रहा था। तेज तेज सास लेता वह चुपचाप बैठा रहा। थोडा सुस्ता लेगा तो फिर उठकर दीपक जलाएगा

क्रमश सास स्थिर हुई, आखें भी अधकार में देखने की अभ्यस्त होती गयी। उसने उठकर कुटिया के कोने में रखा दीपक जलाया और घूमा

दीपक के प्रकाश में दूसरे कोने में खडे एक विराट शरीर पर उसकी आखें जड होकर जम गयी। सारे शरीर का रक्त उसके मस्तिष्क की ओर दौड रहा था और हाथ-पाव ठडे पडते जा रहे थे। उसे लगा वह चक्कर खाकर गिर पडेगा। दीवार का सहारा लेकर वह भूमि पर बैठ गया।

उस विराट आकार के राक्षस के हाथ में एक भयकर परशु था और वह हस रहा था।

राक्षस धीरे से पास चला आया "यदि तुमने चिल्लाने का प्रयत्न किया तो याद रखना यह परशु बहुत धारदार है। मैंने बहुत दिनों से नर-मास भी नहीं खाया।"

अश्विन फटी फटी आखो से चुपचाप उस राक्षस को देखता रहा।

'यह धनुष यहां कैसे आया ?' राक्षस ने कुटिया की छत से टगा

हुआ धनुष उतार लिया।

अश्विन न कोई उत्तर नही दिया।

बोलता क्यो नही ? राक्षस न तीखी आवाज म डाटा और दाए पर की एक भरपूर ठोकर बठे हुए अश्विन के बगल म मारी।

अश्विन कराहता हुआ, पथ्वी पर उलट गया।

बोल !

अश्विन ने अपने होठो का जीभ स गीला किया और बोला मैंने बनाया है।

किसने सिखाया ?"

लक्ष्मण ने।'

क्यो बनाया ?

आत्म रक्षा के लिए।

आत्म रक्षा ! राक्षस की आखें लाल हो गयी किसस करगा अपनी रक्षा ? हमसे ? हमारा विरोध करगा ? हमस युद्ध करगा ?

अश्विन कुछ नहीं बोला।

राक्षस ने एक करारा चाटा उसके गाल पर लगाया बोल ! किसस करेगा आत्म रक्षा ?

अश्विन क मुख स रक्त बहने लगा। उस बोलना पडा व य पशुओ से !

राक्षस हसा तरे पास लौह फल वाल बाण भी हैं ?

नही।

लक्ष्मण ने दिए नही ?

'अभी मैं लक्ष्य भेद मे सक्षम नही हू। मरा प्रशिक्षण पूरा नही हुआ।'

कितने लोग सीख रह है ?" राक्षस ने पूछा।

बीस।

किस हाथ स बाण पकडते हो ?' राक्षस हस रहा था।

'दाए हाथ से।

राक्षस आगे बढा। उसने अपना परशु उठाया और जोरदार प्रहार

किया। परशु सचमुच धारदार था। अश्विन की दाहिनी भुजा शरीर से कटकर पृथक जा गिरी।

अश्विन एक कराह के साथ पृथ्वी पर लोट गया। उसके कंधे से निरंतर रक्त बहता जा रहा था।

राक्षस ने छल से धनुष उतारा और अश्विन की कटी हुई बाहु उठायी, तुम्हारा धनुष ले जा रहा हूं आत्म रक्षा के लिए और बाहु ले जा रहा हूं अपने भोजन के लिए।"

अश्विन कुछ नहीं बोला। वह संज्ञाशून्य हो चुका था।

संकल्प मुनि प्रात स्नान के लिए कुटिया से बाहर निकले। किवाड भिडाए और मुडे।

उषा होने में अभी थोडा विलंब था, किंतु मंदाकिनी तक जाने में उन्हें कुछ समय लगता। फिर हवन के समय तक उन्हें लौटना भी था। उन्होंने तेजी से पग बढ़ाए।

उनका तेजी से उठा हुआ पग किसी चीज में अटका और अपने ही जोर में आगे बढ़ता हुआ उनका शरीर पृथ्वी पर आ रहा। असावधानी में इस प्रकार गिर पडने से माथा एक पत्थर से जा टकराया और रक्त बहने लगा। हथेलियों में ककडियां और कांटे एक साथ चुभे थे। घुटने भी छिल गये थे। नाक की नोक पर भी पर्याप्त जलन थी।

किसी प्रकार अपने शरीर को संभालकर उठे और गिरने का कारण खोजने के लिए दृष्टि घुमाई—सामने दो राक्षस एक मोटी सी रस्सी को लपेट रहे थे।

पहले भी कई बार मुनि के साथ ऐसी दुर्घटनाएं हो चुकी थीं। यह राक्षसों का खेल था उनकी इच्छा थी उनकी आवश्यकता थी अथवा उनका रोग था। धन, शारीरिक बल एवं संगठन, और प्राय सैनिक संरक्षण उन्हें इतना उच्छृंखल और मदांध बना दिया था कि उनसे किसी प्रकार के शिष्ट अथवा संस्कृत व्यवहार की अपेक्षा ही नहीं की जा सकती थी। वे निरीह लोगों को अकारण भी परेशान कर सकते थे और सकारण भी। उनसे कुछ पूछना व्यर्थ था। अपनी पीडा और अपमान को पी जाना

ही मुनि के लिए एकमात्र उपाय था।

'क्यो, आज हवन शवन नही करोगे ?" एक राक्षस ने पूछा।

मुनि ने उस क्रोध से देखा, और फिर स्वय को सहज बनाते हुए बोले नहाने जा रहा हू। आकर करूगा।"

'नही! पहले हवन करो।' दूसरा राक्षस बोला नहाना तो बाद मे भी हो सकता है।

'नही! ऐसा सभव नही है।' मुनि ने उत्तर दिया।

'सभव तो हम बना देंगे।"

दूसरा राक्षस आगे बढ आया। उसने मुनि को जोर का धक्का दिया। मुनि पृथ्वी पर लोट गये। उसने मुनि की दाहिनी टाग पकडी और घसीटता हुआ कुटिया मे ले आया। हवन-कुड के पास मुनि को पटककर बोला चल आग जला।

मुनि की नगी पीठ भूमि पर रगड खाती ककड पत्थरो पर घिसटती आयी थी। वह लहूलुहान हो गयी थी और बुरी तरह जल रही थी।

रक्त स्नात् मुनि हवन नही करता। मुनि बोले।

'करता है वे! राक्षस ने मुनि की गर्दन म पजा फसाकर ठेला करता है या मैं करू तेरा हवन!'

मुनि समझ गए कि निस्तार नही है। अपनी शारीरिक और मानसिक पीडा से तडपते वे उठे और उन्होने अग्नि प्रज्वलित की।

एक राक्षस ने सुक्र और स्रुवा उठाकर अग्नि म भोक दिया।

क्या कर रहे हो ?' मुनि ने क्रोध से उनकी ओर देखा।

हवन!' वे दोनो हस पडे।

मुनि आखो से अग्नि-वर्षा करते हवन कुड के पास बैठे रहे।

'अब बता। एक राक्षस मुनि के पास आ, अपने जूते से उनके शरीर को कोचता हुआ बोला तू किसी आश्रम मे क्यो नही रहता! यहा कुटिया क्यो बनाई ?'

यह कुटिया मेरे दादा ने बनाई थी मैं तब से यही रहता हू।' मुनि पीडित स्वर मे बोले।

तू गधा है मुनि नही।' दूसरा राक्षस हसा, 'तुमसे पूछा जा रहा

है यहा क्यों रहता है किसी आश्रम म क्या नहीं जा सकता ?

पर आज क्यों पूछा जा रहा है ? मुनि हठ पर उतर आए थ ।

'बकवास मत कर !' राक्षस ने मुनि के पेट पर ठोकर मारी जो पूछत हैं बता । तुझे यहा राम न भेजा है ?"

राम तो यहा अब आए हैं ।" गवल्य मुनि न उत्तर दिया, मर तो बाप-दादा भी यही जन्म थे ।

'राम स तेरा कोई सबध नहीं है ?"

है क्या नहा ?"

'क्या सबध है ?'

वे हमारे मित्र हैं । व सज्जन है न्यायी हैं वीर है

तू राम को इस क्षेत्र की सूचनाए नही देता ? हमारे विरुद्ध भडकाता नहा है ? हमम हमारे अधिकार नहीं छीनना चाहता ?

मुनि की पीडा उनकी आत्मा का दमन नही कर सकी व तेजोमय स्वर म बाल "यह वन प्रात है । यहा किसी का राज्य नही है । तुम्हारा कौन-सा अधिकार है यहा—निरीह प्राणियो के दमन का, उनके शोषण का उनक रक्तपान का पराई स्त्रियो म बलात्कार का ? '

बकवास मत कर ! एक राक्षस ने खडग उठाया बोटी बोटी काट थाली म सजाकर ल जाऊगा । तुम जस प्राणी है किसलिए ? आज हमारा आहार उठकर हमसे विवाद करता है । और तेरी स्त्री तो हम इसलिए उठाकर न गय थे कि तू वही से कोई और कोमलागी झोडपी मुनि-कन्या ब्याह कर लाए और हम उसे भी उठा ल जाए । पर तू ऐसा गया निकला कि झोडपी छोड कोई खूसट भी नही लाया ।

नीच ! कुछ तो लज्जा कर ।' मुनि मौन नही रह हम भी मनुष्य हैं चेतन्य प्राणी । हम भी जीने का सम्मानपूवक जीने का पूरा अधिकार है । ससार म सब मनुष्य समान है

व्यथ है । एक राक्षस हसा यह अब हम प्राणियो की समता का सिद्धात पढाएगा । इससे विवाद करने से अच्छा है कि इसकी वे दोनो टागें काट दी जाए जो इसने हमारी इच्छा के विरुद्ध चढाई हैं ।'

मुनि भय म मूक हो गए । यहा तक का कोई काम नहीं था, और

शारीरिक शक्ति उनम थी नही

एक राक्षस न उनके कधे पकड उन्हे भूमि पर लेटा दिया। दूसरे ने उनकी टाग सीधी की और उन पर बठ गया। उसन अपना परशु उठाकर सध हाथ का वार किया जस कोई वक्ष की शाखा पर बैठ उस काटता है।

मुनि ने एक भयकर चीत्कार किया और बहोश हो गए।

'मर गया?' एक राक्षस ने पूछा।

नही। सनाशून्य हुआ होगा। दूसरा बोला।

य मत्र इतनी जल्दी मर जात है कि दूसरी बार इनक शरीर का मास हम नही मिलता।" पहला बोला।

चिंता मत करा। दूसरा बोला अभी बहुत है।'

कालकाचाय के आश्रम के ब्रह्मचारी दनिक आवश्यकताओ के लिए वन म लकडिया काट रह थ।

'इन दिनो वन का रूप कुछ बदल गया है। जय ने कुल्हाडी का प्रहार करत हुए कहा पहले तो वन ऐसा नही था।

हा! आनन्द ने उत्तर दिया अयोध्या की सना के आ जाने से भीड भाड इतनी हो गयी है कि क्या कहू। फिर राम के आश्रम के पास तो रोक टोक बहुत अधिक है। इधर न जाओ उधर न जाओ। यह सनिको के लिए आरक्षित है यह सेनापतियो के लिए। इधर राज माताए गयी है उधर राज गुरु गए है। इन लोगा न तो वन को भी, राजकीय सनिक अनुशासन मे बाध दिया है।

'भइ मैं ता और बात सोचता हू।' त्रिलोचन बोला, यह इतनी बडी सना कुछ दिन और यदि यही वन म पडी रही तो हमारे लिए फल प्राप्त करना भी कठिन हो जाएगा।'

कुल्हाडी चलाओ, भैया!" आनन्द बोला सेना अधिक दिन यहा नही रहगी। मैंन सुना है कि भरत आज लौट रह है। वस पहले ही विलब हो चुका है। माग म कही लौटती हुई सेना म घिर गए या किसी

ठीक कहते हो मित्र! जल्दी जल्दी काम कर लेना चाहिए।'

जय ने कुल्हाडी उठाई, तो वह उठी-की-उठी रह गयी। उसे नीचे लाना, जय को याद ही नही रहा। उसके मित्रो ने उसकी विचित्र अवस्था को देखा तो उनकी दृष्टि भी उसी ओर घूम गयी जिधर वह देख रहा था।

वे सब के-सब स्तब्ध खडे रह गए। वृक्षो के बीच जहा कही भी थोडा सा स्थान था वही न जाने कब कोई न-कोई राक्षस आकर खडा हो गया था। राक्षसो ने उन्हे वृत्ताकार घेर लिया था और उन लोगो का अवरोध पर्याप्त दृढ लग रहा था। राक्षसों के हाथ मे शस्त्र थे और वे सब-के सब प्रहार-मुद्रा मे दिखाई पड रहे थे।

सहसा ब्रह्मचारियो मे से किसी ने चीख मारी और वह भागा। कोई नही समझ पाया कि कौन चीखा और कौन भागा। सब जैसे एक साथ ही भागे। पता नही चला कि पहले झटके मे ब्रह्मचारी राक्षसो के घेरे को तोडकर भागे या राक्षसो ने उन्हे घेरा तोडने दिया। दूसरी बार भी कुछ बचे हुए ब्रह्मचारी घेरे मे से निकल गए किंतु तीसरी बार राक्षसो ने वह अवसर नही आने दिया। उन्होंने अपने खडग सीधे कर लिये थे अब भागने का प्रयत्न सीधे-सीधे उनके खडग की धार पर दौडने की बात थी।

कुल्हाड़ियां फेंक दो! एक राक्षस ने आदेश दिया।

जय ने कुल्हाडी भूमि पर फेंक दी और दृष्टि उठाकर देखा—उसके साथ-साथ उसके अपने ही मित्र आनन्द त्रिलोचन कुवलय और शशाक ही राक्षसो के घेरे मे बदी हो गए थे। उनमे से अकेले भागने का प्रयत्न किसी ने नही किया था और साथ मिलकर भागने की योजना वे बना नहीं पाए थे। अपनी कुल्हाडिया वे फेंक चुके थे और भयभीत दृष्टि से राक्षसो को देख रहे थे।

राक्षसो से भिडत की बात जय ने कई बार सुनी थी किंतु अधिकांशत व अकेले-दुकेले व्यक्ति को पकडते थे वह भी अंधेरे-सवेरे। इस प्रकार दिन-दहाडे इतने अधिक आश्रमवासियो पर आक्रमण की बात उसने पहले नही सुनी थी। हा सैनिक अभियानो की बात और थी, किंतु चित्रकूट-क्षेत्र म सैनिक अभियानो की बात भी कम ही ... या विशेष

प्रत्येक आश्रम का दूसरे आश्रम से संबंध है। तुम लोगों ने राम को राक्षसों का विरोध करने के लिए यहां बुलाया है। और जब राम असमर्थ दीखा तो भरत को उनकी सेना सहित बुला लिया है। यह देखो मेरे पास अधिक समय नहीं है। मुझे यह सूचना मिलनी चाहिए कि भरत को बुलाने के लिए कौन उत्तरदायी है और भरत की योजना क्या है?'

हम मालूम नहीं

राक्षस प्रमुख ने उसे वाक्य पूरा करने नहीं दिया— मैंने सुन लिया। पर मुझे अपने प्रश्न का उत्तर चाहिए।'

हम कुछ भी ज्ञात नहीं।' नम ढीली आवाज में बोला।

नहीं?'

नहीं।"

तुम ब्रह्मचारी?' राक्षस प्रमुख आनन्द से संबोधित हुआ।

मुझे भी ज्ञात नहीं। आनन्द हीन होकर बोला हममें से किसी को भी ज्ञात नहीं।

राक्षस प्रमुख ने अविश्वास में मुख फेर लिया तुम?

नहीं।

तुम?

नहीं।

तुम?'

नहीं।'

इन्हें गिन गिनकर सौ कोड़े लगाओ।' राक्षस प्रमुख ने अपने कशाधारियों को आदेश दिया, 'तब तक लौह शलाकाएं भी तप आएंगी। यदि ये लोग संतोषजनक उत्तर न दें तो उन्हें तप्त शलाकाओं से दागो। ध्यान रहे ये मरने न पाएं। ये धरोहर हैं। इनके शरीरों को अच्छी तरह चिह्नित कर इन्हें इनके आश्रम के निकट फेंक आओ। ये स्वयं अपने कुलपति को बताएंगे कि यदि उन्होंने बाहर से कोई सैनिक सहायता मंगवाकर हमारा विरोध करने का प्रयत्न किया तो हमारी ओर से लड़ने के लिए लंकाधिपति रावण की सेना आएगी और इनमें से एक एक की यही अवस्था कर दी जाएगी।'

कालकाचाय चिंतित मुद्रा म सिर भुकाए बैठे थ । आश्रम के सारे तपस्वी तथा आचाय उनके सामन बैठे उनके बोलने की प्रतीक्षा कर रहे थे । प्रत्यक चेहर पर चिंता थी । क्वल जय, आनन्द, त्रिलोचन कुवलय और शशाक—आप ब्रह्मचारिया के हटकर कुलपति से कुछ निकट प्रमुखता से बैठे हुए थ । उनकी भगिमा चिंता की नही यातना और अपमानित क्रोध की थी उत्तरीया के नीचे, उनके शरीर विभिन्न प्रकार की औषधिया और पट्टियो म लिपटे हुए थ । इस प्रकार बठन म भी व कम कष्ट का अनुभव नही कर रहे थ गुरु का दीघ मौन उन्हें और भी पीडित कर रहा था ।

अत म कालकाचाय न सिर उठाया तपस्विगण ! यह न समझें कि इस घटना मे मेरा मन दु खी नही है । मेरे शरीर पर राजमा न कशाघात नही किया मरी त्वचा को उनकी तप्त शलाकाआ ने दग्ध नही किया किंतु इस कुलपति के मन के घावो की कल्पना करें जिसके एक नही पाच पाच ब्रह्मचारियो ने इतनी पीडा पायी हो । उनके शरीर पर पडा प्रत्येक कोडा मरे हृदय पर पडा है । प्रत्यक शलाका ने मेरी आत्मा को दग्ध किया है । किंतु आक्रोश के असतुलित क्षणो म कोइ उग्र कम करन क बदल हम थोडा आत्मविश्लेषण करना चाहिए

आय कुलपति ! कैसा विश्लषण ?

जय को अपना ही स्वर काफी उच्छखल लगा । आज तक उसन कुलपति के सम्मुख कभी ऊचे स्वर मे भी बात नही की थी और आज वह प्रतिवाद करना चाह रहा था । उसके मन म कुलपति की सारी श्रद्धा समाप्त हो गयी थी । उसे लग रहा था यदि कुलपति इसी ढग मे सोचत और बोलत रहे तो वह अमर्यादित हो उठेगा—उस कुलपति का विरोध करना पडेगा—सभवत उनका आश्रम छोडना पडे । वह कालकाचाय को अब अपना गुरु नहीं मान सकता

'आत्म विश्लेषण आवश्यक है तपस्विगण । कालकाचाय ने तुरत-त स्वर म कहा वतमान परिस्थितियों और उसक कारणों का जानन और समभने की भी आवश्यकता है और अत म उसका समाधान ढूढन की भी ।'

आपका क्या समाधान है ?" इस बार शशाक बोला। उसका भी स्वर जय क स्वर से कम उच्छ खल नही था।

ठहरो, वत्स ! मेरी बात सुनो। कालकाचाय अपने उसी दुबल स्वर म बोले 'राम के इस प्रदेश म आने से पहल भी हम यहा रहते थे और ये राक्षस बस्तिया और शिविर भी यही थे। ऐसा नही था कि तब राक्षस हम परेशान नहा करते थे। किंतु जब से राम यहा आए हैं स्थिति काफी बदल गयी है। राम और लक्ष्मण क्षत्रिय योद्धा हैं। उनके पास भयकर अस्त्र शस्त्र है। उन शस्त्रो को उन्होने स्वय तक ही सीमित नही रखा है। उनका प्रयत्न यही रहा है कि जहा तक सभव हो लोग स्थान स्थान पर राक्षसी अत्याचारो का विरोध करें। उस विरोध का माध्यम शस्त्र है। उन्होने प्रत्येक इच्छुक व्यक्ति को शस्त्रो के निर्माण और परिचालन की शिक्षा दी है। उससे अनेक स्थानो पर राक्षसों का सफल विरोध हुआ है और अनेक ग्रामो म से राक्षसो का आधिपत्य समाप्त हो गया है। इससे राक्षस राम से ही नही समस्त आश्रमो से नाराज हो उठे हैं। राम के आश्रम का वे कुछ बिगाड नही सकते—अपना क्रोध शेष आश्रमो पर उतारते हैं।

कालकाचाय ने रुककर तपस्वियो पर दृष्टि डाली। उन्हे लगा कि जय तथा उसके घायल साथियो की आखो म उत्सुकता का भाव नही था। निश्चित रूप से वे अपने कुलपति के दृष्टिकोण से सहमत नही थे।

कुलपति ने अपनी बात आगे बढाई 'राम ने पहले दिन से हम से सपर्क स्थापित कर रखा है। राम ने सदा चाहा है कि मैं भी अपने आश्रम म शस्त्राभ्यास कराऊ। हमारा आश्रम उनके आश्रम से निकटतम है। वे हमारी पूरी सहायता के लिए प्रस्तुत थे। किंतु मैं पहले दिन से यह जानता था कि शस्त्र रखने का अर्थ है राक्षसो से वैर पालना। राम हमारी सहायता तो कर सकते हैं पर हमारी रक्षा नही कर सकते '

आपने कब चाहा कि वे आपकी रक्षा करें आर्य कुलपति ?' त्रिलोचन बीच म ही चिल्लाकर बोला।

धैर्य न छोडो वत्स त्रिलोचन ! ' कालकाचाय का स्वर और भी दुबल हो गया मुझे अपनी बात कहने दो, फिर मैं तुम्हारी बात भी

सुनूगा।' और व अपनी बात आगे बढा ले गए ' मैंन कभी नही चाहा कि राम हमारी रक्षा करें। मैंने यहा विद्याभ्यास के लिए आश्रम स्थापित किया था युद्ध शिविर नही बनाया था। राम क्षत्रिय हैं। मेरी प्रवृत्ति क्षत्रिय-प्रवृत्ति नही है। मैं नहीं चाहता था कि शस्त्र निर्माण और शस्त्राभ्यास से मैं राक्षसों के क्रोध और विरोध को आमंत्रित करू। और मैं देख रहा हू कि मैं भूल नही कर रहा था। जिस जिस आश्रम म राम के शस्त्र-दशन का प्रवेश हुआ वहीं-वही राक्षसों के क्रोध की उल्का गिरी। और अब भरत की सेना आयी है। उसक लिए भी राक्षस हमे ही दोषी मानत हैं। यदि हम राम क इतने निकट न होत तो राक्षस हमारे ही आश्रम के ब्रह्मचारियो को पकडकर न ले जात। मुझे लगता है, राम एक प्रचड अग्नि है—अग्नि पवित्र हो सही—किंतु उसका नैकटय ताप भी देता है। अभी तो भरत की सना और राक्षसों म कही भिडत नही हुई। यदि हो गयी तो राक्षस अयोध्या की प्रशिक्षित सेना का तो विरोध कर नहीं पाएग उनका कुठित क्रोध फिर हम पर ही प्रहार करेगा। इसलिए मरा विचार है कि यह स्थान अब सुरक्षित नही रहा। हम यहा स हटकर राम से दूर चले जाना चाहिए "

आय कुलपति! जय उठकर खडा हो गया। उसका चेहरा तमतमाया हुआ था और स्वर क्रोध से काप रहा था, आपने दूसरों का मत सुना ही नही और अपना निणय दे दिया। यह आश्रम की रीति के अनुकूल नहीं है।'

कालकाचाय म आश्रम के कुलपति का तेज नही जागा। वे सहम गए। ...ह जय का तमतमाया चेहरा जसे डरा गया था।

'यह निणय नही है मरा प्रस्ताव है वत्स! मेरी निजी राय! तुम लोग अपने विचार व्यक्त करने म पूणत स्वतन्त्र हो।

तो फिर मेरा प्रस्ताव सुनें आय कुलपति!' जय ने आज एक बार भी कालकाचाय को गुरुवर कहकर सबोधित नहीं किया था, जसे वह उनके गुरुत्व को भूलकर केवल उनके आधिकारिक पद को ही देख पा रहा था, शान्त चिरायन आनन्द कुवलय तथा मेरा—हम पाचों का मत है कि हम लडें या न लडें राक्षस हमसे लडेंगे। हम नि शस्त्र हो तो भी मरेंग

सशस्त्र हो तो भी मरगे। विकल्प हमारे हाथ म नही है। इसलिए यदि मरना ही है तो सशस्त्र होकर मरें—कदाचित तब मरना अनिवाय न रह। इसलिए हम तत्काल राम क आश्रम पर चल। उनस मिलकर सारी स्थिति स्पष्ट करें। उनसे शस्त्र तथा युद्ध विद्या की सहायता तथा सहयोग मागें और आत्म रक्षा म समथ होकर न कवल गौरव और स्वाभिमान क साथ जीवित रह वरन् राक्षसो स अपने अपमान का बदला भी लें। इसके लिए यदि आवश्यक हो तो राम लक्ष्मण सीता तथा उनके अय आश्रमवासियो को अपन साथ रहने के लिए आमत्रित कर या हम अपना आश्रम उनके आश्रम म विलीन कर दें और यदि किही कारणो स यह सभव न हो तो दोनो आश्रमो की भौतिक दूरी तो समाप्त कर ही दें।

"हम इस प्रस्ताव का पूण समथन करते है। जय के घायल मित्र पूरे जोर स चिल्लाए।

"नही।" कालकाचाय का स्वर भय तथा आवेश से कपित होन क कारण चीत्कार बन गया "मतभद तथा व्यक्तिगत विचार-स्वातत्र्य का समथक होने पर भी मैं इस प्रकार क आत्मघाती प्रस्तावो पर विचार करने की अनुमति नही दे सकता। मेर मस्तिष्क म यह बात पूणत स्पष्ट है कि हम युद्ध व्यवसायी नही हैं और राम की मूल वत्ति क्षात्र वत्ति है। व जहा रहग वहा आस पास शस्त्र-व्यापार चलता ही रहेगा। कल की जिस घटना से तुम लोग इतने उत्तेजित और क्षुब्ध हो उठे हो, मुझे लगता है वह तो भविष्य का आभास मात्र है। तुम लोग स्वय सोचो कल जब अयोध्या की इतनी बडी और शक्तिशाली सेना की छावनी यहा से उखड ही रही थी अर्थात सेना अभी यही विद्यमान थी तब भी राक्षस इतना दुस्साहस कर गये। भविष्य म, जब कोई सेना आस-पास नही होगी तब राक्षसो का साहस और कितना बढ जाएगा। भविष्य की उन भयकर दुघटनाओ से अपना बचाव करने के लिए ही मैंने यह निश्चय किया है तपस्विगण! कि हम यहा से हटकर अश्व मुनि के आश्रम के निकट जा बसेंगे। राम राक्षसो की निरतर उत्तेजना का कारण है। हम उसके निकट रहकर सदा-सदा के लिए राक्षसो क क्रोध न पात्र नही बनना चाहते। "

और सहसा कुलपति का स्वर ऊचा हो गया इस विषय मे वाद विवाद

की अनुमति मैं नही दूगा। यह मेरा अतिम निश्चय है और आश्रमवासियो के लिए आज्ञा है। इस आज्ञा की अवहलना का दड आश्रम से स्थायी निष्कासन होगा।"

तो हम स्वय को इसी क्षण से आश्रम स निष्कासित समझते हैं। आनन्द इस सारे वार्तालाप म पहली बार बोला था। उसका चेहरा दृढ और सहज था। स्पष्ट था कि उसने यह बात आवेश म नही कही थी— यह उसका सुचिंतित मत था।

जय कुवलय शशाक और त्रिलोचन भी उसके निर्णय के समर्थन म उठकर, उसके पीछे खडे हो गये थे।

कालकाचार्य का आवेश लुप्त हो गया। उन्हें जसे अपने आवेश का यह परिणाम ज्ञात नही था, अथवा वे घटनाओ को यह मोड नही देना चाहते थे। वे आश्चर्यजनक ढग से बदते हुए कोमल और स्नेहयुक्त स्वर म बोले 'मैं यह कभी नही चाहूगा वत्स! कि मेरा कोई शिष्य किसी मतभेद के कारण मेरा आश्रम छोडकर चला जाए। यह वैसा ही है जसे कोई पुत्र पिता का घर छोड दे। और तुम पाचो ही मुझे बहुत प्रिय हो। मैं किसी भी रूप म तुमसे विलग होना नही चाहूगा। मेरी बात समझने का प्रयत्न करो वत्स! मैं अग्नि को स्वय से दूर रखने का प्रयत्न कर रहा हू ताकि उसका प्रकाश तो हम मिले किंतु उसका ताप हमे दग्ध न करे। और तुम चाहते हो कि मैं अग्नि को अपनी कुटिया मे ले आऊ ताकि मेरा आश्रम जलकर भस्म हो जाए।"

कालकाचार्य की कोमलता ने आवेश पर ठडे छींटे डाल दिए थे। किसी ओर स कोई प्रत्युत्तर नही आया जसे सब कुछ शात हो चुका हो।

पर तभी कुवलय उठकर अपने ठहरे हुए मद स्वर म बोला आर्य कुलपति! आपका और हमारा दृष्टिकोण पर्याप्त भिन्न है यह स्पष्ट हो चुका है। किंतु मतभेद का अर्थ अनिवार्यत विरोध नही होता। आप हम आश्रम से निष्कासित नही करना चाहते और न ही यह हमारी इच्छा है कि हम आपस दडित होकर अथवा आपस झगडकर आश्रम से पृथक हो। इसलिए गुरुवर! एक निवेदन है। आप चाहे तो आश्रम को अश्व मुनि के आश्रम की ओर ले जाने की तैयारी करें किंतु साथ ही हमें यह अनुमति दें—

कि हम राम भद्र से मिलकर इस विषय म उनका मत जानने का प्रयत्न करें। यदि वे सहमत हो गय तो हम पाचा आपकी अनुमति से उनके आश्रम की सदस्यता स्वीकार करना चाहेंगे। और यदि हम ग्रहण करने को वे तैयार नही हुए तो हम पूर्ववत आपके शिष्य हैं—अत आश्रम के अनुशासन म बधे आपके साथ जाएगे।

कालकाचार्य का स्नायविक तनाव ढीला पडा। कुवलय ठीक कह रहा था—वे राम के पास जाना चाहते तो जाए इसमें क्या संकट है। व न राक्षसो का विरोध चाहते हैं न राम का और न अपने शिष्यों का।

ठीक है वत्स! तुमने बिलकुल ठीक कहा। तुम लोग आज ही राम से मिलने चले जाओ। भरत की सेना लौट चुकी है अत राम से मिलने म कोई बाधा भी नही है। कल प्रात मुझे अपने और राम के निश्चय की सूचना दो। हमारा प्रस्थान कल मध्याह्न तक रुका रहेगा।'

अपनी कुटिया के बाहर अपराह्न की धूप म राम और सीता कुछ अलसाए से बठे थे। दोनो ही पिछले दो-तीन दिनो म घटी घटनाओ म ऊब डूब रहे थे। बात प्राय कोई भी नही कर रहा था।

"भया! कुलपति कालकाचार्य के आश्रम के ब्रह्मचारी आए है।'

राम ने सिर उठाकर देखा। आगे आगे जय था। इस राम न कई वार कालकाचार्य के आश्रम मे देखा था। आते-जाते कभी-कभार कुछ बातें भी हुई थी। जय ने कई वार धनुष बाण तथा अन्य शस्त्रो म रुचि भी दिखाई थी। अन्य ब्रह्मचारियों के चेहरे भी कुछ परिचित से थ किंतु राम उन्हें ठीक-ठीक पहचानते नही थ।

आओ! बैठो, मित्र! राम ने मुखर द्वारा लाए गय आसनो की ओर सकेत किया।

आर्य! ये भील-कला के आसन आपके यहा कसे?' कुवलय ने कुछ आश्चर्य स पूछा।

ये आसन मैंने और सुमेधा ने मिलकर बनाए ह।' सीता बोली 'सुमेधा भील-कन्या ही है। मैंने उसी से यह विद्या पायी है। तुम्हे भील कला वाले आसन पर बठने मे कोई आपत्ति तो नही ब्रह्मचारी!' वदेही

मुसकराइ 'इधर जाति विभाजन पर वल कुछ अधिक ही है।'

"नहीं देवि!' कुवलय झेंप गया मैंने तो केवल जिज्ञासावश पूछ लिया। आश्रमो म इस प्रकार के आसन सामान्य वात नही है।'

'बठो, मित्र!' राम पुन बोल मेरी भी जिज्ञासा है—तुम पावो ही घायल प्रतीत होत हो। औषध और पट्टिया अभी गीली ही हैं। यह क्या है मित्र! मगया अथवा राक्षसो से मुठभेड?

हम इसी सदभ म आपसे मिलने आए हैं राम!' जय बोला आने म कुछ विलब अवश्य हुआ। कल अयोध्या की सेना लौट रही थी अत आप तक पहुचने के लिए माग मिलना कठिन था और आज अपने कुलपति से विचार विमश मे विलब हो गया।"

ठीक कहते हो, ब्रह्मचारी।" राम गभीर हो गय "कदाचित इसी कारण पिछले तीन दिनो से मैं सारे चित्रकूट से कटकर अपने आश्रम म सीमित हो गया था। इस बीच इस आश्रम मे वहुत कुछ घटित हुआ है मित्र!"

यहा ही नही, आय! इस सारे प्रदेश म वहुत कुछ घटित हुआ है। शशाक का स्वर कुछ तीखा था 'कही किसी का सिर कटा कही किसी का पाव। कही आग लगा और कही हम जसो को घेरकर बदी किया गया और राक्षस वस्तियो म ले जाकर कशा के आघातो से आहत और तप्त शलाकाओ से दग्ध किया गया "

क्या लाभ अयोध्या की इतनी बडी सेना का!' राम जैसे अपने-आपस कह रह थ 'जिसन जन सामान्य को सुरक्षा देने के स्थान पर असुरक्षित कर दिया।

किसने बदी किया?' लक्ष्मण की उग्रता प्रकट होने लगी थी।

राक्षसो ने।

क्या? मुखर ने पूछा।

वही वताने के लिए हम उपस्थित हुए है।" जय बोला।

कहो मित्र! मैं सुन रहा हू।' राम उसके चेहरे की ओर देख रह थ।

वानकाचाय न जाने वाले तपस्वियो छकडों पर लदे सामान

जुते बैलो को हाकनेवाले गाडीवानो इत्यादि पर अतिम बार निरीक्षण करती दृष्टि डाली। वे व्यवस्था से सतुष्ट थे। आकृति पर आश्वस्ति के चिह्न एकदम स्पष्ट थे और साथ ही किसी विकट विपत्ति से मुक्त हो जाने का आह्लाद भी था।

उन्होने मुडकर इन सारी तयारियो से अलग एक ओर हटकर खडे हुए राम की ओर देखा—राम सीता तथा लक्ष्मण साथ साथ खडे थे और उनके पीछे जय तथा उसके चारो मित्र खडे थे। कुलपति का चेहरा कुछ विकृत हुआ जसे मुख का स्वाद कडवा गया हो। किंतु उन्होने तत्काल स्वय को सभाल लिया। वे सायास मुसकराए और सहज होने का भरसक प्रयत्न करते हुए चलकर उन लोगो के समीप आए।

वत्स राम ! अब हम विदा दो। कुलपति अत्यत औपचारिक स्वर मे बोले बडी इच्छा थी कि हम यहा साथ साथ रहते अथवा तुम हमारे साथ अश्व मुनि के आश्रम म चलते। किंतु तात ! शायद यह सभव नही है। पर जाते जाते भी मैं तुम्हे एक परामर्श दूगा। यद्यपि तुम वीर और साहसी हो युद्ध विद्या म कुशल हो—फिर भी यह स्थान ऐसा नही है जहा तुम अपनी युवती पत्नी के साथ सुरक्षित रह सको। वत्स ! तुम भी इन लोगो को लेकर किसी सुरक्षित स्थान पर चले जाओ। उन्होने रुककर राम के पीछे खडे तपस्वियो को देखा और मेरे इन ब्रह्मचारियो की रक्षा करना। भगवान तुम्हारा भला करें।

राम ने शात भाव से कुलपति की बात सुनी और हल्के से मुसकरा दिए। लक्ष्मण ने एक बार उद्दड आखो से कुलपति को ताका और वितृष्णा से मुख मोड लिया।

राम और सीता ने झुककर, कुलपति के चरण छुए और अन्य लोगो को मार्ग देने के लिए एक ओर हट गए।

लक्ष्मण ने अब तक स्वय को सभाल लिया था। पूर्ण गभीरता का अभिनय करते हुए बोले ऋषिवर ! हम भी आपके साथ चलकर अश्व मुनि के आश्रम म रहने की बडी इच्छा थी पर हम जा नही पाएगे हमारी असमर्थता को क्षमा करें। हम नही चाहते कि हम आपके साथ-साथ लगे फिर और आप अपने छकडो से अपना सामान भी न उतार पाए।

इससे पूर्व कि राम आगे बढ़कर लक्ष्मण से कुछ कहते, वाल्मीकि आचार्य मुक्त कंठ से हंस पड़े। राम ने कुछ विस्मय से देखा—कुलपति का कंठ ही नहीं, मन भी उन्मुक्त था। लक्ष्मण ने अपने इस वाक्य में न केवल अपने मन की कह दी थी, वरन कुलपति के मन की ग्लानि भी धो डाली थी।

"बहुत अच्छी बात कही तुमने वत्स सौमित्र !" हंसी के पश्चात कुलपति अत्यंत निर्मल हो आए थे। उनकी आकृति की औपचारिकता भी विलीन हो गयी थी, और वे सहज हो गए थे "तुमने न कहा होता तो कदाचित मैं भी सच न बोल पाता। पुत्र ! मेरा विश्वास करो। तुम लोगों का सहवास हम सब तपस्वियों के लिए अत्यंत आनंददायक है। यह हमारी हार्दिक इच्छा है पुत्र ! कि तुम हमारे साथ रहो। किंतु लक्ष्मण ! सारे मनुष्यों की प्रकृति एक समान नहीं होती। हम लोग स्वयं अपने आप में न्यायपूर्ण आचरण करने वाले हैं। हम बिना किसी जीव को कष्ट दिए मानवता के सुख के लिए ज्ञान विज्ञान कला तथा संस्कृति के विकास के लिए प्रयत्नशील हैं। अतः मन से हम न्याय के समर्थक और अन्याय के विरोधी हैं। इस दृष्टि से हम तुम्हारे सहयोगी हैं। किंतु पुत्र ! अपने जन्मजात स्वभाव, राजसिक वृत्ति के अभाव तथा संयम के लंबे प्रशिक्षण के कारण हम लोग तुम्हारे समान संघर्षशील नहीं हैं। अतः अन्याय के विरोध के लिए सक्रिय अवसर उपस्थित होते ही, हम लोग प्रायः उस स्थान से हट जाते हैं। हम अपनी सीमाएं पहचानते हैं। ऐसा नहीं है, पुत्र ! कि मैं नहीं चाहता कि मैं भी तुम्हारे ही समान शस्त्र धारण कर राक्षसों का हनन करूं। किंतु मैं अपनी तथा इन तपस्वियों की भीरु प्रकृति का क्या करूं ? हमें अपना विरोधी न समझो। तुम्हारे साथ न रह सकने का अर्थ कदापि यह नहीं है कि हम राक्षसों के मित्र हैं। हम तुम्हारे अक्षम तथा भीरु मित्र हैं जो संघर्ष करने का साहस नहीं बटोर पा रहे। सौमित्र ! हमारे प्रति मन में क्रोध न रखो करुणा और दया का भाव धारण करो।"

कुलपति मौन हो गए। उनका स्वच्छ मन उनकी पारदर्शी आंखों में से झांक रहा था। कोई भी देख सकता था कि उनके संपूर्ण व्यक्तित्व में कहीं कोई दुराव तो नहीं था। उन्होंने वाणी के माध्यम से अपना मन सहज ही सब के सम्मुख रख दिया था।

लक्ष्मण कुछ सकुचित हुए—शायद उन्हें निश्छल और निमन वृद्ध से ऐसी कटु बातें नहीं कहना चाहिए थीं।

'आर्य कुलपति !' राम ने आगे बढ़कर बात सभाल ली। 'लक्ष्मण की बात का बुरा न मानें। हम दोनों एक-दूसरे का पक्ष समझते हैं। ऋषिवर ! हम क्षत्रियों का शस्त्र धारण करना तभी सार्थक होगा जब आप जैसे निष्पाप तपस्वी रुककर हमें अपना स्नेह दे सकेंगे—और हम न्याय के नाम पर आपको अभय दे सकेंगे। कुलपति सहज मन से अपनी यात्रा पर जाएं। इस अलगाव से किसी के मन में वैमनस्य न रहेगा।'

कुलपति ने धीरे-धीरे अपनी भीगी आखें ऊपर उठाईं और राम के चेहरे पर टिका दीं, 'राम ! मेरे इन ब्रह्मचारियों का ध्यान रखना। ये पाचों तेजस्वी हैं। आशा है ये मेरे पाप की क्षतिपूर्ति करेंगे।'

कुलपति ने उन लोगों की ओर देखे बिना मुख मोड़ लिया और धीरे-धीरे चलते हुए, अपने छकड़े पर जा बैठे। बैठते ही उन्होंने गाड़ीवानों को संकेत किया 'चलो।'

राम स्पष्ट देख रहे थे कुलपति का मन उनके कर्म का विरोध कर रहा था। वे उदास थे। विवेक कितना भी प्रेरित करे—अपनी प्रकृति के विपरीत कार्य करना कठिन होता है। मन की भीरुता तन की कोमलता और संघर्ष के प्रति अतत्परता व्यक्ति को क्या बना देती है। ऐसा क्या खो गया है इन लोगों में, जो सत्य पक्ष को जानते हुए भी उसका समर्थन नहीं कर पाते, उसके पक्ष में खड़े नहीं हो पाते। किस बात से डरते हैं—कष्ट से ? पर कष्ट तो ये उठा ही रहे हैं। अपमान से ? इस प्रकार अपनी इच्छा के विरुद्ध, किसी के भय से अपना स्थान छोड़कर कहीं और भटकने के लिए चल पड़ना क्या अपमानजनक नहीं है ! यह सैनिक दृष्टि से योजनाबद्ध प्रत्यावर्तन नहीं है कि इसे रण-नीति या रण-कौशल मान लिया जाए। यह तो रण ही नहीं है। जब कभी संघर्ष का अवसर प्रस्तुत होगा—ये लोग इसी प्रकार पीछे हट जाएंगे। इन्हें कहीं भी सत्य नहीं मिलेगा, कहीं न्याय नहीं मिलेगा, कहीं अधिकार नहीं मिलेगा। सत्य और न्याय के संघर्ष से भागना, स्वयं सत्य और न्याय से दूर भागना है।

राम की दृष्टि बहिर्मुखी हुई—जय तथा उसके साथी कुछ उदास लग

रहे थे। लक्ष्मण की मुद्रा अभी भी कुछ उग्र थी। सीता सहज हो चुकी थीं।

'आओ चलें।" राम ने अपना धनुष उठा लिया "उदघोष तथा उसके साथी हमारी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। आश्रम पहुंचकर उन्हें शस्त्रागार की रक्षा के दायित्व से मुक्त करना है।'

अपने-अपने विचारों में खोए सब लोग आश्रम की ओर बढ़े। कोई किसी से बात नहीं कर रहा था। केवल यान्त्रिक रूप से आगे पीछे चलते जा रहे थे।

आत्मलीन राम के मन में पिछले तीन दिनों की घटनाओं की स्मृतियां थीं—कितना आकस्मिक था सब-कुछ। किसने घटनाओं के इस रूप की कल्पना की होगी। अयोध्या में घटित घटनाओं के विषय में राम उत्सुक थे। मन में अनेक आशंकाएं थीं। जैसे-जैसे भरत के निकट आने के समाचार मिलते जा रहे थे जिज्ञासाओं की भीड़ भी बढ़ती गयी थी।
तीन दिन पहले वन्य-पशुओं में सहसा भगदड़ मच गयी। चित्रकूट पर चारों ओर से धूल ही धूल उड़ने लगी। निकट के विभिन्न आश्रमों से सूचनाएं मिलीं कि भरत की सेना आ पहुंची है। लक्ष्मण ने कवच कस लिया और अनेक दिव्यास्त्रों से सज्जित हो गए। उन्होंने आश्रम के पिछले भाग से मुखर को उदघोष के ग्राम की ओर दौड़ा दिया कि वह विभिन्न ग्रामों तथा आश्रमों में से सशस्त्र युवकों को एकत्रित कर शीघ्रातिशीघ्र पहुंचे।

" सशस्त्र युवक-संगठनों ने तनिक भी विलंब नहीं किया। उदघोष ने इतने युवक एकत्रित कर लिए थे कि वे आश्रम की अच्छी तरह व्यूह-बंदी कर सकते थे। किंतु युद्ध की आवश्यकता नहीं पड़ी। भरत की सेना आश्रम से दूर ही रुक गयी थी। निकट आते ही भरत राम के चरणों पर गिर पड़े थे।

राम अपनी कुटिया के द्वार पर आकर रुक गये।

'आश्रम के नये सदस्यों के रहने की क्या व्यवस्था होगी सौमित्र ?'

'हम तुरंत निर्माण-कार्य आरंभ कर देते हैं भैया।' लक्ष्मण बोले 'किंतु आज की रात उदघोष की कुटिया तथा अतिथिशाला से ही काम चलाना होगा।'

हम म क्या तात्पय है लक्ष्मण ? राम मुसकराए, कहीं तुम इन लागो को तो निर्माण-काय म नही लगाना चाहत ? व आहत है। उह अभी शारीरिक श्रम नही करना चाहिए।'

नहीं, आय!' जय वोला, हम इतन अक्षम नही है कि आय सौमित्र की कोई सहायता न कर सकें। राक्षसो न हमारी हड्डिया न तोडन की कृपा अवश्य दिखाई है।

नही! कुटीर निर्माण काय मैं और मुखर कर लेंगे। लक्ष्मण मुसकराए इ ह केवल मनारजनाथ हमारा हाथ बटाना होगा।

अच्छा! जाओ।

लक्ष्मण इत्यादि को भेज, राम सीता क साथ कुटिया क भीतर आए। सीता बिना कुछ कह भोजन की व्यवस्था म लग गयी और राम की चितन प्रक्रिया फिर चल पडी— भरत न आत ही अपना अभिप्राय कहा। वे राम, लक्ष्मण तथा सीता को अयोध्या लौटा ले जाना चाहत थे। वे नही चाहत थे कि अयोध्या के राज-परिवार की परस्पर अविश्वास की परपरा और आगे बढे, और भरत के राज्य को युधाजित के आतक का विस्तार माना जाए। वे नही चाहते थ कि अयोध्या म फिर कोई दु स्वप्नो और आशकाओ स पीडित होकर वसे प्राण त्यागे जसे सम्राट दशरथ ने त्यागे थ

'भरत अयोध्या और मिथिला क राज परिवार मत्रि परिषद पुरोहित वग, प्रमुख प्रजाजन सनापति सनिक परिषद तथा सेना की अनेक टुकडिया लेकर उह लिवाने आये थे। वे तत्काल राम का राज्याभिषक करना चाहते थ। किंतु एक बात के लिए भरत एकदम सजग नही थ। भरत के साथ-साथ भरद्वाज वाल्मीकि तथा अनक ऋषि भी आए थे। जो ऋषि आ नही पाए थे—राम जानते थ—उनके चर आश्रम के चारो ओर मडरा रहे थे। वे भयभीत थे कही राम भरत की बात न मान लें। जब सपूण राजवश एक स्वर म कह रहा था कि राम अयोध्या लौट चलें—एक भी ऋषि इस इच्छा का समयन नहीं कर रहा था

अत म भरत को निराश लौट जाना पडा। अयोध्या से लायी गयी राजसी खडाऊआ को वे राम के चरणा से छुआ भर सके, उह पहना नही

मरे।

' किंतु इन तीन दिनो म जब वे अपने पारिवारिक मनामालि य को दूर कर रहे थे—इस वन म कितना कुछ कलुपित और भयकर घट गया था। यदि राम राजकीय मयादाआ मे घिरकर जन मामा य से दूर न हो गए हात तो कदाचित राक्षस वह सब नही कर सकत जो उन्होंने किया। भविष्य म राम को ध्यान रखना होगा कि व किसी भी कारण से जन सामा य के लिए अनुपल ध हा जाए नही तो उन जैसे जन नेता और उन विलासी शासका म क्या भेद रह जाएगा जो अपनी सुख-सुविधाओ के वदी होकर जनता की असुविधाआ को अनदेखा कर जाते हैं

राम ने कुटिया से बाहर आकर देखा—लक्ष्मण मुखर तथा पाचो ब्रह्मचारियो के साथ लकडियो के गटठरो के साथ वन से लौट रह थे। लक्ष्मण और मुखर के कधों पर अधिक बोझ था किंतु ब्रह्मचारियो ने भी कुछ न कुछ उठा ही रखा था। राम उन्हे टीले का चढाव चढते हुए साफ-साफ देख रहे थ। वे मानो उल्लास म भरे प्रसन्नतापूवक बातें करते हुए ऊपर आ रहे थे। उनम से किसी को भी ऐसा नही लग रहा था कि अभी थोडी दर पूव ही उनके आश्रम के कुलपति अपनी शिष्य मडली और अ य तपस्वियो के साथ राक्षसो स भयभीत हो यह स्थान छोडकर चले गए हैं और पीछे छूटे वे लोग जो राक्षसो के जबडा के बीच बठे हैं।

तभी लक्ष्मण ने कुछ कहा और शेष सब लोग उन्मुक्त अटटहास कर उठे।

भोजन क पश्चात व लोग कुटिया के बाहर तनिक खुले स्थान म जा बैठे।

य अग्रव मुनि कौन है' राम न बात आरभ की 'जिनके पास कुल-पति अपन ऋषिकुल को लकर गए हैं ?'

जय कुछ आग खिसक आया आय मेरी स्पष्टवादिता को क्षमा करें। अभी थोडे-स ही समय म मैंन आय लक्ष्मण की सगति म सीखा है कि तजस्वी पुरुष न तो स्पष्ट कहने म सकोच करता है और न स्पष्ट बात का बुरा मानता है।

बोलो जय! सकोच न करो।' राम मुसकराए।

'सघप का आरभ उस व्यक्ति स होना चाहिए मित्रो ! जा अत्याचार का सीधा सामना कर रहा है। जिन लोगो ने उस अत्याचार के विषय म सुना मात्र है, उनसे प्रत्यक्ष सपकन होने का अवसर नही पाया, उनके मन मे दाह नही है—अत प्रकाश भी नही है। वे लोग एसे सघप को मानसिक सहानुभूति दे सकते हैं उसम सक्रिय योग नही दे सकत।'

'तो भया ! सघप का आरभ अश्व मुनि के आश्रम म नही जनस्थान म ही हो सकता है।

तो जनस्थान की आर चलो।' सीता मुसकराइ।

दवि ! आप शशाक न आश्चय से सीता को देखा।

य शक्ति रूपा नारी है मित्रो ! राम मुसकराए तुम लोग अभी सीता का नही पहचानत।'

तो हम सब का जनस्थान जाना निश्चित रहा।' जय क स्वर म उल्लास था।

नही जय ! राम गभीर स्वर म बोल जनस्थान मे याय का युद्ध वही के निवासी लडेग। तुम चित्रकूट म ही रहोगे।'

ता यह सारा वार्तालाप

मेरी बात सुना।' राम बोले हम अर्थात मुझ सीता तथा लक्ष्मण को अतत दडक वन म ही जाना है—ऐसा अयोध्या स चलत समय ही निश्चित था। मुखर का अपना घर दक्षिण की ओर है अत वह भी हमारे साथ जाना चाहेगा। हम लोग यहा इसलिए रुके हुए थे कि हम अपनी अनुपस्थिति म घटित अयोध्या क समाचार मिल सकें। भरत की नीति स्पष्ट हो सक, और हम आगे की योजना तय कर सकें। यह काय अत्र पूर्ण हो चुका है अत हमारा चित्रकूट छोड दक्षिण की ओर जाना निश्चित है

किंतु आय ! ' कुवलय न कुछ कहना चाहा।

'धय रखो कुवलय !' राम मसकराए तुम लोगो को मझधार म छोडकर नही जाऊगा। हमारा जाना निश्चित अवश्य है किंतु जान से पूव हम कुछ प्रबध करना है। राक्षसी आतक इस क्षेत्र म अभी पर्याप्त मात्रा म है। पर इतना नही कि मैं यहा से हिल न सकू। उदधाप के रूप म